आगरा जिले की बोली

रामस्वरूप चतुर्वेदी

हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

प्रो० धीरेन्द्र वर्मा के निर्देशन में प्रस्तुत
प्रयाग विश्वविद्यालय की डी० फ़िल्० उपाधि के लिए स्वीकृत प्रबंध

आगरा जिले की बोली

रामस्वरूप चतुर्वेदी

हिन्दुस्तानी एकेडेमी
इलाहाबाद

प्रकाशक
हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : २००० : १९६१

मुद्रक
सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग

प्रकाशकीय

हिन्दी भाषा के क्रमिक विकास को समझने के लिए हिन्दी प्रदेश की उपभाषाओं या बोलियों का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन बहुत सहायक है। इस दृष्टि से डाक्टर रामस्वरूप चतुर्वेदी द्वारा प्रस्तुत यह अध्ययन "आगरा जिले की बोली" एक महत्व-पूर्ण प्रयास है। वैसे हिन्दी क्षेत्र की विभिन्न जीवन्त भाषाओं पर कई क्षेत्रों में महत्व-पूर्ण कार्य हुये हैं। परन्तु हिन्दी की किसी बोली के एक सीमित प्रदेश का वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान की पद्धति से यह संभवतः पहला अध्ययन है। डाक्टर चतुर्वेदी ने आगरा जिले की प्रमुख भाषा ब्रज तथा उसके विभिन्न रूपों का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस शोध-ग्रन्थ पर लेखक को प्रयाग विश्वविद्यालय से डी० फिल्० की उपाधि मिली है।

डाक्टर चतुर्वेदी ने जिस अध्यवसाय एवं विद्वत्ता से विषय का विवेचन किया है, वह प्रशंसनीय है। आशा है, हिन्दुस्तानी एकेडेमी से प्रकाशित यह ग्रन्थ भाषा वैज्ञानिकों तथा इस विषय में अभिरुचि रखने वाले विद्वानों एवं विद्यार्थियों में समान रूप से समादृत होगा।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी
इलाहाबाद

विद्या भास्कर
मंत्री तथा कोषाध्यक्ष

माता-पिता के चरणों में

●

वक्तव्य

प्रस्तुत कार्य मैंने नवंबर १९५२ ई० में प्रारम्भ किया था और कई प्रकार की कठिनाइयों तथा व्यवधानों के उपरांत दिसम्बर १९५७ ई० में समाप्त कर सका। वर्णनात्मक भाषाविज्ञान की दृष्टि से हिन्दी की किसी बोली के एक सीमित प्रदेश का यह कदाचित् प्रथम वैज्ञानिक विवेचन है। इस शोध-प्रबंध में विश्लेषण की कई शैलियों का अनुसरण किया गया है, किन्तु विशेष ध्यान इस बात पर रक्खा गया है कि विवेचन मूलतः जीवित बोली का उसके समस्त मानवीय संदर्भ में हो। यद्यपि इस अध्ययन में वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान के समस्त नवीनतम उपकरणों का प्रयोग नहीं किया जा सका है, किन्तु इस मानवीय संदर्भ को सदैव संपृक्त रखने का प्रयत्न किया गया है। इस दृष्टि से बोलनेवालों की मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं तथा दिशाओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत प्रबन्ध में आगरा जिले की बोली के विभिन्न स्तरों तथा प्रकारों का विश्लेषण मिलेगा। साथ ही इस अपेक्षाकृत नवीन शैली तक पहुँचने के लिए जिस परंपरागत विवेचन की आवश्यकता थी, उसे भी यथासाध्य त्रुटि-रहित तथा अद्यतन बनाने का यत्न लेखक ने किया है।

प्रस्तुत अध्ययन की प्रक्रिया में कई स्तरों पर विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कार्यारंभ के समय की सबसे बड़ी कठिनाई थी हिन्दी से संबंधित किसी विशुद्ध वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान के ग्रंथ का अभाव। किसी आदर्श के न होने के कारण ही कार्य-पद्धति को निश्चित करने में भी कुछ असुविधाएं हुईं। ग्रियर्सन (लिंग्विस्टिक सर्वे), सक्सेना (एवल्यूशन ऑफ़ अवधी), कत्रे (फ़ॉर्मेशन ऑफ़ कोंकनी) तथा वर्मा (ब्रजभाषा) की कार्य-प्रणाली के आधार पर ही मुख्यतः इस प्रबंध की पद्धति को विकसित किया गया है। इन ग्रंथों में से भी 'ब्रजभाषा' के ढांचे को प्रधान रूप से ग्रहण किया गया है, एक तो इसलिए कि हिन्दी से संबद्ध समस्त प्रकाशित सामग्री में से यही कृति वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान की शैली का अनुसरण करके चली है, तथा दूसरे इसलिए कि प्रस्तुत अध्ययन ब्रज-भाषा के ही एक रूप से संबंध रखता है। वैसे समस्त ग्रंथ में विवेचन की आगमनात्मक प्रणाली का अनुसरण किया गया है।

विवेचन संबंधी कठिनाई इसलिए और भी बढ़ गई क्योंकि इस ग्रंथ को हिन्दी के माध्यम से नागरी लिपि में प्रस्तुत किया गया है। एक ओर तो हिन्दी में स्थिरी-कृत भाषावैज्ञानिक शब्दावली का अपेक्षाकृत अभाव, और दूसरी ओर नागरी

लिपि में ध्वनियों को अंकित करने की समस्या—इन दोनों ही कारणों से इस अध्ययन की वैज्ञानिकता में कुछ कमी आ सकती है। परन्तु इन कठिनाइयों के होते हुए इस दिशा में अग्रसर तो होना ही है। यदि इस प्रारम्भिक कार्य से इन समस्याओं के सुलझने में कुछ सहायता भी मिलती है तो यह इस कृति का अतिरिक्त लाभ समझना चाहिए।

आगरा जिले की बोली के इस अध्ययन में कई उद्देश्य देखे जा सकते हैं। वैसे तो समस्त ब्रजभाषा का सर्वांगीण अध्यथन प्रो० धीरेन्द्र वर्मा द्वारा अब से प्राय: पच्चीस वर्ष पूर्व संपन्न हो चुका था। पर इन वर्षों के व्यवधान के फलस्वरूप एक जीवित बोली में जो अंतर आ सकते हैं उनका ब्रजभाषा के एक सीमित क्षेत्र में गहरा अध्ययन करना इस कार्य की एक प्रमुख दृष्टि रही है। इसके अतिरिक्त आगरा जिले की बोली का सुगठित व्यक्तित्व भी गंभीर अध्ययन की अलग से अपेक्षा रखता है। सीमांतीय बोली के अध्ययन की दृष्टि से विशेष रूप से पूर्वी आगरा की बोली अधिक महत्वपूर्ण है। इस सबके अतिरिक्त, जैसा ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, व्यापक मानवीय संदर्भ में एक जीवित बोली का उसके सभी अंगों–उपांगों में सम्यक् वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत प्रबंध का मुख्य उद्देश्य है। वैसे इस प्रबंध के कुछ अंश तो स्वतंत्र अध्ययन की अपेक्षा रखते हैं, जैसे बोली का ध्वन्यात्मक तथा सुरात्मक गठन, ग्रामोद्योगों की शब्दावली आदि।

लेखक कछपुरा (बाह-तहसील, जिला-आगरा) का निवासी है और अपने इस पैतृक गांव में काफ़ी दिनों तक रहा है, तथा अब भी किसी न किसी रूप में यह संपर्क अक्षुण्ण है। अपनी निजी जानकारी तथा बोली से भी लेखक ने इस विवेचन में पर्याप्त लाभ उठाया है।

अंत में अपने गुरुजनों तथा मित्रों के प्रति आभार-प्रदर्शन मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। कार्यारम्भ करते समय लेखक ने पूना जाकर वहां के डैकन कालेज के संचालक डॉ० एस० एम० कत्रे से जो महत्वपूर्ण परामर्श प्राप्त किया उसके लिए वह उनका हृदय से आभारी है। प्रबंध प्रस्तुत करते समय आगरा के हिन्दी विद्यापीठ के संचालक आचार्य डॉ० विश्वनाथप्रसाद ने जो अमूल्य सुझाव दिए हैं उनसे इस कार्य की दिशा और भी स्पष्ट हो सकी है। लेखक कलकत्ता विश्वविद्यालय के तुलनात्मक भाषा-विज्ञान के प्रोफ़ेसर डॉ० सुकुमार सेन का भी आभारी है। अत्यन्त कार्यव्यस्त होने पर भी उन्होंने 'ब्रजबूलि' शब्द के प्रयोग के इतिहास के संबंध में आवश्यक जानकारी दी है। श्रद्धेय डॉ० बाबूराम सक्सेना तथा गुरुवर डॉ० उदयनारायण तिवारी से लेखक ने समय-समय पर महत्वपूर्ण निर्देश प्राप्त किए हैं। इस कार्य को प्रेरित करने में इन गुरुजनों का जो योग है उसका मूल्य आंकना कठिन है। अंत में यह कहने में मुझे संकोच नहीं है कि यह समस्त कार्य

मेरे निर्देशक श्रद्धेय डॉ० धीरेन्द्र वर्मा की प्रेरणा तथा आयोजन का फल है। उनके व्यक्तित्व तथा कृतित्व की गहरी छाप इस कार्य पर है, जो लेखक के लिए संतोष तथा गौरव का विषय है।

प्रबंध को प्रस्तुत करने में लेखक को अपने मित्र डॉ० विपिनकुमार अग्रवाल तथा श्री रामलखन द्विवेदी से विशेष सहायता मिली है। इस अवसर पर अपनी खोज-यात्रा के सभी परिचित-अपरिचित मित्रों तथा शुभैषियों का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण उचित ही होगा।

२१ दिसंबर १९६० **रामस्वरूप चतुर्वेदी**

विशेष लिपिचिह्नों की सूची

लिपिचिह्न	विवरण
अं ं	उदासीन स्वर
इ ि	ह्रस्वतर इ
उ	ह्रस्वतर उ
ए	ह्रस्व ए
ऍ	अर्द्धविवृत ह्रस्व ए
ऍ	अर्द्धविवृत ए.
ओ ो	ह्रस्व ओ
ऑ ॉ	अर्द्धविवृत ह्रस्व ओ
ऑ ॉ	अर्द्धविवृत ओ

स्वर के आगे ३ का चिह्न उस स्वर की अतिरिक्त दीर्घता का द्योतक है।

विषय-सूची

[कोष्ठक में दी हुई संख्याएं अनुच्छेदों की सूचक हैं]

पृष्ठ संख्या

आगरा जिले की तहसीलों के नामों के संक्षिप्त रूप

आ०	आगरा
ऐ०	ऐत्मादपुर
कि०	किरावली
खे०	खेरागढ़
फ०	फतेहाबाद
फी०	फीरोजाबाद
बा०	बाह

आगरा जिले की बोली के क्षेत्रीय उपरूप
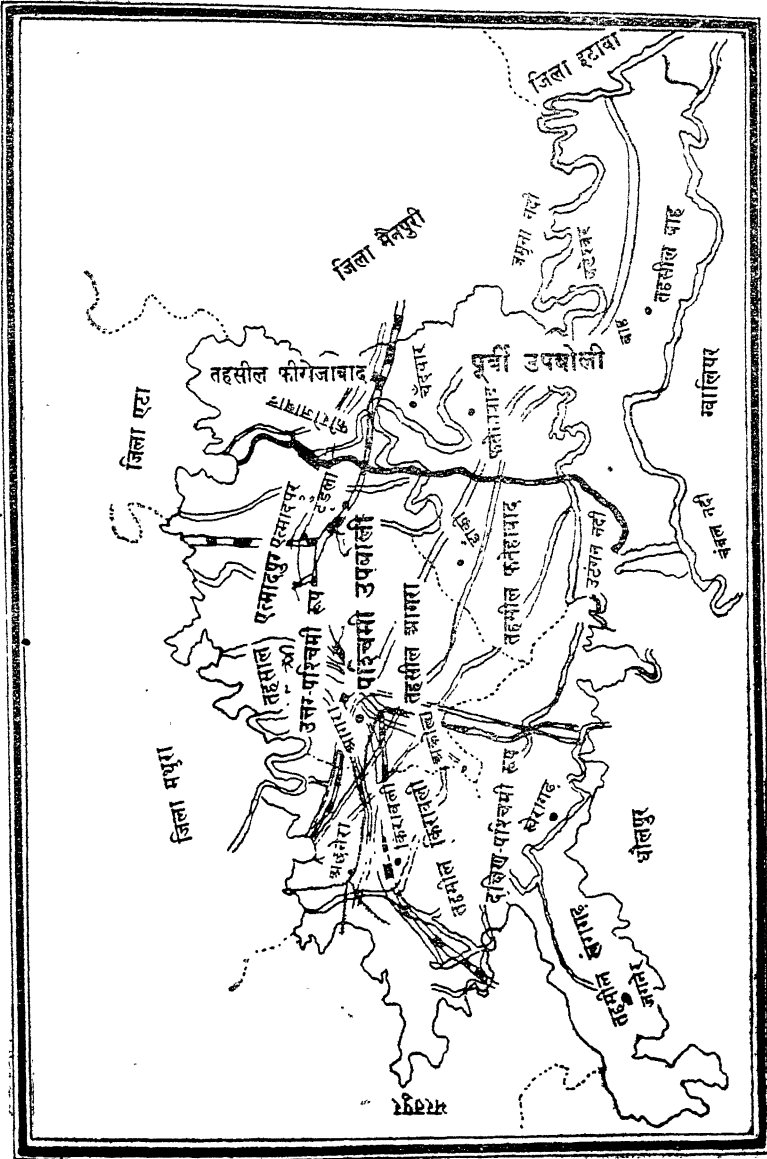
जनजीवन तथा बोली*

भौगोलिक परिस्थिति

१. आगरा जिला उत्तरप्रदेश के दक्षिण-पश्चिमी कोने में अवस्थित है। यह २६°४४′ तथा २७°२५′ उत्तरी अक्षांश तथा ७७°२६′ और ७८°३२′ पूर्वी देशान्तर के बीच में पड़ता है। जिले की सीमाएं इस प्रकार हैं—पश्चिम में राजस्थान का भरतपुर प्रदेश है, दक्षिण में धौलपुर तथा ग्वालियर है। दक्षिण की सीमा चंबल नदी बनाती है। उत्तर में मथुरा तथा एटा जिले हैं, और पूर्व में मैनपुरी तथा इटावा के जिले हैं। उत्तर तथा पूर्व में जिले की सीमा यमुना नदी द्वारा बनाई गई है। जिले का कुल क्षेत्रफल १८५३·२ वर्गमील है। जिले की सबसे अधिक लंबाई पश्चिम-उत्तर-पश्चिम से पूर्व-दक्षिण-पूर्व तक ७८ मील है। उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पश्चिम की सर्वाधिक लंबाई ७५ मील है। उत्तर से दक्षिण तक जिले की सबसे अधिक चौड़ाई ३५ मील है।

२. जिले का आकार प्रायः अनियमित-सा है। समूचा प्रदेश प्रमुख नदियों द्वारा चार स्पष्ट भागों में बँटा है। एत्मादपुर तथा फीरोजाबाद की तहसीलें यमुना के उत्तर में पड़ती हैं तथा यमुना-गंगा के दोआब में हैं। दूसरा भाग यमुना तथा उटंगन के बीच में है, जिसके अंतर्गत आगरा, किरावली, फतेहाबाद तथा खैरागढ़ का कुछ हिस्सा आता है। तीसरा भाग यमुना तथा चंबल के बीच में अवस्थित लंबी तथा पतली बाह की तहसील है। यह जिले का दक्षिणी-पश्चिमी भाग है। चौथा भाग खैरागढ़ का अवशिष्ट प्रदेश है जो उटंगन तथा भरतपुर और धौलपुर की सहायक नदियों के बीच में है। भौगोलिक विशेषताओं की दृष्टि से जिले के ये चारों भाग एक दूसरे से अलग दिखाई देते हैं। पर अपने आपमें इन भागों का एक निश्चित स्वरूप है। इन चारों भागों में बाह तहसील का जिले का दक्षिण-पूर्वी भाग कई दृष्टियों से विशिष्ट है। वस्तुतः यह हिस्सा भौगोलिक तथा ऐतिहासिक परिस्थिति तथा बोली के अपने सुगठित व्यक्तित्व की दृष्टि से जिले के शेष भाग से अलग है।

---

*इस खंड की वर्णनात्मक सामग्री का मुख्य आधार 'आगरा : ए गजेटियर' है।

३. यमुना पार की दो तहसीलों—एत्मादपुर तथा फीरोजाबाद का प्रदेश अपेक्षाकृत समतल है। यहां की मिट्टी में रेत कम है तथा भूमि उपजाऊ है। यमुना के किनारे के प्रदेश में भूमि ऊँची-नीची तथा कगारों से युक्त है। इन कगारों के नीचे के हिस्से में प्रायः घास ही उपज पाती है।

जिले के बीच का भाग, जो यमुना तथा उटंगन के बीच में पड़ता है, प्रायः भुरभुरी मिट्टी का समतल प्रदेश है। किरावली तथा फतेहपुर सीकरी के बीच में कुछ छोटी-छोटी पहाड़ियां हैं। खारी नदी के किनारे का हिस्सा कगारों वाला है। यमुना तथा उटंगन के किनारे का उपजाऊ हिस्सा कछार कहलाता है।

बाह तहसील का प्रदेश एक लंबा भू-भाग है, जो दोनों सिरों पर तो पतला है पर बीच में कुछ चौड़ा है। तहसील का आधा भाग यमुना तथा चंबल के बड़े-बड़े कगारों (जिन्हें वहां *भरका* कहा जाता है) से भरा है। मिट्टी के छोटे-बड़े ढूह (जिन्हें स्थानीय बोली में डांड़े कहा जाता है) भी बहुत हैं। नदियों से दूर का समतल भाग आकार में बहुत कम है। इस भाग की मिट्टी भुरभुरी तथा उपजाऊ है। उत्तर के भाग में यमुना के निकट की मिट्टी में रेत अधिक है, पर चंबल के किनारे के प्रदेश की मिट्टी अच्छी है। यमुना तथा चंबल के लंबे कछार भी उपज की दृष्टि से अच्छे हैं, पर उनकी स्थिति प्रायः अनिश्चित रहती है। कुल मिलाकर बाह तहसील का भू-भाग जिले के शेष प्रदेश से काफ़ी अलग है।

उटंगन की दूसरी ओर का खैरागढ़ का प्रदेश पथरीला है। इस हिस्से में कुछ पहाड़ियों की माला है। इस भाग में कई प्रकार की मिट्टी मिलती है—भुरभुरी भूर तथा काली मिट्टी। पानी ज़मीन से बहुत नीचे नहीं है, परन्तु निचले भू-स्तरों के बहुत सुदृढ़ न होने के कारण सिंचाई में कठिनाई होती है।

४. जिले में पहाड़ियां किरावली तहसील में मिलती हैं। इस प्रदेश का पत्थर भी प्रसिद्ध है, जो आगरा तथा आसपास की कुछ प्रसिद्ध इमारतों के बनाने में प्रयुक्त हुआ है। सामान्यतः जिले की भूमि समतल है। कगारों तथा कछार का प्रदेश नीचा है। मिट्टी प्रायः दुमट प्रकार की है, पर बाह तहसील में इसका प्रतिशत कम है। अन्य प्रकारों में पीलिया, भूर, मटियार, चिकनौट आदि हैं। नदी के किनारों का भाग *कछार* तथा ऊंचा समतल प्रदेश *हार* कहलाता है।

५. जिले में तीन प्रधान नदियां हैं—यमुना, चंबल तथा उटंगन। इसके अतिरिक्त अन्य बहुत सी छोटी-मोटी धाराएं हैं। तीनों प्रधान नदियों से जिले तथा कुछ तहसीलों की सीमाएं बनी हैं। यमुना नदी का मार्ग बहुत टेढ़ा-तिरछा है। जिले में इसकी लंबाई १४५ मील है। यमुना की सहायक नदियां हैं—सिरसा, सेंगर तथा उटंगन। उटंगन की प्रकृति प्रायः पहाड़ी नदियों जैसी है। वह एकाएक ही चढ़ अथवा उतर जाती है। गर्मियों में बहुत से स्थलों पर वह एकदम सूख जाती

है। चंबल नदी बाह तहसील के कुछ पूर्वी भाग में बहती है। वर्षा में इसका रूप अत्यन्त प्रखर हो जाता है। चंबल का पानी एकदम निर्मल है। जिले में झीलों की संख्या बहुत कम है।

६. जंगल का प्रदेश जिले में अधिक नहीं है। सामान्यतः जिले में वृक्षों के जंगल अथवा वृक्षों का अभाव है। जंगली प्रदेश का दो-तिहाई भाग केवल आगरा तहसील में ही है। बाह तहसील में चंबल के किनारे कुछ जंगल का भाग मिलता है। वृक्षों में बरगद, पीपल, गूलर, ढाक, बबूल, नीम, सिरस, शीशम, महुआ, बैर, ताड़ तथा बांस के वृक्ष हैं। मिट्टी के कटाव (soil erosion) तथा जमींदारी निर्मूलन (१९५२ ई०) ने जिले में वृक्षों की संख्या बहुत ही कम कर दी है। पानी की बहुत सुविधा न होने के कारण नए लगाए वृक्ष तैयार नहीं हो पाते। पूरे जिले में बगीचों का प्रायः सर्वथा अभाव है। कहीं-कहीं आम तथा जामुन के मिले-जुले बगीचे मिल जाते हैं। बाह तहसील में, जहां कुएं का पानी ६० से १०० फीट तक गहरा है, वनस्पति का बहुत अभाव है। खनिजों में जिले के पश्चिमी भाग में इमारती पत्थर निकलता है। जिले की जलवायु सामान्यतः अधिक गरम है।

सामान्य जनजीवन

७. उपर्युक्त भौगोलिक स्थिति के कारण खेती लोगों के जीविकोपार्जन का मुख्य साधन है। खेतिहर भूमि का आकार बराबर बढ़ता जा रहा है। पिछले दस वर्षों में बहुत-सी बेकार पड़ी ऊंची-नीची भूमि जोती गई है। छोटे-मोटे *'डाड़ों'* तथा *'भरकों'* को समतल करने का प्रयत्न किया गया है। साथ ही पशुओं के चरने के लिए सुरक्षित बहुत-सा भू-भाग भी जोत डाला गया है। नये जोते जाने वाले प्रदेश को स्थानीय बोली में *'नई टोर'* कहा जाता है।

८. उपज की दृष्टि से जिले की भूमि सर्वत्र एक-सी नहीं है। परन्तु कुल मिला कर समूचे जिले को दोआब की भूमि की तुलना में बहुत उपजाऊ नहीं कहा जा सकता। इसके दो मुख्य कारण हैं—एक तो मिट्टी का सर्वत्र अच्छा न होना—मिट्टी में रेत का अंश धीरे-धीरे बढ़ता जान पड़ता है—तथा दूसरे सिंचाई के साधनों का अभाव। जिले की दो पूर्वी तहसीलों—फतेहाबाद तथा बाह में तो पानी की कठिनाई बहुत अधिक है। इस प्रदेश का पानी साठिया (साठ हाथ गहरा) कहलाता है। शासन की ओर से अब ट्यूबवेल्स लग जाने से यह कठिनाई निकट भविष्य में दूर हो सकती है।

फ़सलें दो होती हैं—खरीफ़ तथा रबी। कभी-कभी एक अतिरिक्त फसल भी तैयार कर ली जाती है, परन्तु उसका विशेष महत्व नहीं है। पहली दोनों

फसलों में भी खरीफ़ का अधिक महत्व है। प्रान्त के अन्य उपजाऊ जिलों की तुलना में यहां दुफसली खेती बहुत कम है। खरीफ़ के अन्तर्गत मुख्यतः बाजरा, ज्वार, रुई तथा मक्का की खेती होती है। रबी में गेहूँ, चना, बेझर, मसूर, सरसों, लाही, तथा अलसी प्रधान हैं। खाने की दृष्टि से मुख्य उपज बाजरा तथा बेझर की है।

९. जिले का औद्योगिक व्यवसाय मुख्यतः आगरा नगर तक सीमित है। आगरा का पत्थर का काम बहुत प्रसिद्ध है, जिसे वहां की ऐतिहासिक इमारतों ने और भी आकर्षक तथा प्रख्यात बना दिया है। ऊनी, सूती तथा रेशम के कपड़े बनाने की मिलें भी नगर में हैं। गांवों में करघे पर बनाए गए सूती कपड़े को *गाढ़ा* या *गजी* कहते हैं। आगरा नगर में कीमखाब का भी अच्छा काम होता है। इधर चमड़े के व्यवसाय की वहां उन्नति हुई है। इसके अतिरिक्त पिछले वर्षों में फीरोजाबाद कांच के उद्योग का एक प्रधान केन्द्र हो गया है। कांच की चूड़ियां, बिजली के बल्ब यहां से बन कर समूचे भारत में भेजे जाते हैं। आगरा तहसील में भी अब कांच के उद्योग-धंधे खुल गए हैं। कांच के साथ ही आगरा तथा उसके निकटवर्ती प्रदेश में चीनी-मिट्टी के बरतन (क्रॉकरी) बनाने के कई कारखाने खुल गये हैं। पर इतना होने पर भी अभी आगरा नगर को अथवा जिले को औद्योगिक नहीं कहा जा सकता। जिले में बिजली की सेवाएं अत्यन्त सीमित हैं, उद्योगों के अधिक विकसित न होने का एक प्रधान कारण यह भी है।

नगर के बाजार के अतिरिक्त आगरा में दूसरा कोई प्रधान बाजार नहीं है। रेलवे लाइन के पास होने तथा छोटे-मोटे उद्योगों का केन्द्र होने के कारण फीरोजाबाद, एत्मादपुर, अछनेरा तथा टूंडला में भी बाजार हो गए हैं। वैसे प्रायः सभी तहसीलों में धीरे-धीरे ग्रामीण व्यवसाय बढ़ गया है, और बाजारों का विकास हो रहा है। साप्ताहिक पैंठ या हाट तो बहुत से छोटे-बड़े गांवों में लगती हैं, जहां से सामान्य जनता अपनी दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएँ खरीदती है। मेले प्रायः रबी की फसल के बाद चैत के महीने में लगते हैं। इन मेलों में बटेश्वर (बाह तहसील) के मेले का प्रान्तीय महत्व है। धार्मिक स्नान के अतिरिक्त पशुओं के क्रय-विक्रय का यह मेला बहुत बड़ा साधन है। शासन की ओर से इस मेले को उन्नत बनाने के बहुत से प्रयत्न किए गए हैं।

१०. जिले में यातायात के साधनों की कुछ वर्षों पहले तक बहुत कमी रही है। आजकल बाह तथा फतेहाबाद तहसील को छोड़ कर जिले के शेष भाग में रेल की व्यवस्था है। परन्तु रेल के स्टेशन बहुत कम हैं तथा लाइनों का प्रसार बहुमुखी नहीं है। द्वितीय महायुद्ध के पूर्व एक रेलवे लाइन आगरा से बाह तक भी आती थी, परन्तु इक्कों तथा मोटर बसों की प्रतिस्पर्धा के कारण जो घाटा हुआ इस कारण यह रेलवे लाइन बंद कर देनी पड़ी। उटंगन नदी पर पुल न होने के

कारण बाह् तहसील बरसात के दिनों में शेष जिले से प्रायः अलग हो जाती थी। पर अब डाकुओं के उपद्रव से विवश होकर सरकार ने इस नदी पर पुल बांध दिया है, जिससे इस भाग में यातायात की असुविधा समाप्त हो गई है। पहले गैर-सरकारी मोटर बसों की संख्या बहुत कम थी, तथा उनकी सेवाएं भी प्रायः अनियमित रहती थीं। परन्तु इधर सरकारी रोडवेज़ की बसों तथा नयी बनाई गई सड़कों के कारण यातायात सुलभ तथा शीघ्र प्राप्य हो गया है। नदियों द्वारा यातायात अब प्रायः नहीं के बराबर है।

११. नदी किनारे के प्रदेशों में मिट्टी के कटाव (soil erosion) की समस्या अत्यन्त भयंकर है। प्रति वर्ष बरसाती पानी बहुत-सी मिट्टी को काट कर बहा ले जाता है। बरसाती पानी के नदी तक पहुंचने के मार्ग को *'खार'* कहा जाता है। इनमें से बहुत से खारों का प्रयोग सड़कों के अभाव में मनुष्यों अथवा बैलगाड़ियों के चलने के लिए होता है। पर ये खार अधिकाधिक गहरे होकर नालों तथा भरकों के रूप में परिणत होते जाते हैं, जिससे मुख्य सड़क से दूर के भागों में यातायात की समस्या और भी कठिन हो गई है।

१२. समुचित उद्योग व्यवसाय के अभाव तथा डाकुओं आदि के व्यापक उपद्रव के कारण जिले की शांति-सुरक्षा बहुत संतोषजनक नहीं रही है। इसीलिए अवसर मिलने पर ग्रामीण जनता सदैव नगरों में जाकर बसने की चेष्टा में रहती है। इस जिले का जीवन-क्रम—विशेषतः पूर्वी प्रदेश (बाह् तहसील) का जीवन-क्रम अत्यन्त संघर्षमय रहा है। सर्वत्र खेती योग्य भूमि का न होना, सिंचाई के साधनों तथा यातायात की सुविधाओं का अभाव, जिले में किसी उद्योग-व्यवसाय का न होना—इन सभी परिस्थितियों ने इस प्रदेश की जनता की मनोवृत्ति को अपराधी बनाने में सहायता की है। अपराधियों के छिपने की सुविधा ऊंचे-ऊंचे तथा लंबे 'भरकों' में सहज सुलभ है। वस्तुतः इसीलिए बाह् तहसील इतिहास के प्रारंभिक काल से ही अशांतिमय रही है। प्रायः १९४५ से १९५४ ई० के बीच डाकू मानसिंह का सतत उपद्रव तथा अंततः उसकी नाटकीय मृत्यु इस प्रदेश के इतिहास की प्रधान घटनाओं में रहेगी। 'आगरा गज़ेटियर' का बाह् तहसील के संबंध में एक उल्लेख यों है—"इस प्रदेश के गांव प्रायः अगम्य स्थानों पर बसे हुए हैं, जिसका कारण संभवतः यही है, क्योंकि पिछले वर्षों में बाह् अपने उपद्रवों तथा न्यायहीनता के लिए कुख्यात रहा है।" (आगरा : ए गज़ेटियर, पृ० २३०)

जनसंख्या

१३. १९५१ ई० की जनगणना के अनुसार आगरा जिले की, तहसीलों की दृष्टि से, जनसंख्या इस प्रकार है—

आगरा तहसील	५०९,७६८	(ग्रामीण अंश	१३५,९४४)
बाह तहसील	१५१,७६३	(,,	१४३,३९८)
एत्मादपुर तहसील	२०५,०२०	(,,	१८८,१५८)
फतेहाबाद तहसील	१३९,५३४	(,,	१२८,६३९)
फीरोज़ाबाद तहसील	१९९,७५६	(,,	१३३,७७३)
खैरागढ़ तहसील	१४४,६७७	(,,	१४०,७७६)
किरावली तहसील	१४९,१२३	(,,	१३२,८४१)
	योग १,४९९,६४१	योग (ग्रा० अं०)	१,००३,५२९

तुलना की दृष्टि से १९०१ ई० की जनसंख्या के आंकड़े नीचे दिए जा रहे हैं—

आगरा तहसील	—२९१,०४४
बाह तहसील	—१२३,५९१
एत्मादपुर तहसील	—१५९,८८१
फतेहाबाद तहसील	—११४,७३३
फीरोज़ाबाद तहसील	—११९,७७५
खैरागढ़ तहसील	—१२७,६९२
किरावली तहसील	—१२३,८१२
	योग—१,०६०,५२८

ऐतिहासिक पीठिका

१४. जनश्रुतियों के अनुसार पांडवों का आगरा प्रदेश से घनिष्ठ संबंध रहा है। परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से आगरा जिले के संबंध में मध्ययुग के पूर्व की हमें प्रामाणिक जानकारी नहीं मिलती। जिले के कुछ भाग में बुद्धकालीन सिक्कों के मिलने से इस प्रदेश का ऐतिहासिक महत्व तो जान पड़ता है, परन्तु इस प्रसंग में उपलब्ध सामग्री प्रायः नहीं के बराबर है।

१५. 'आगरा' शब्द की व्युत्पत्ति के बारे में भी अंतिम निर्णय नहीं लिया जा सका है। *अगर*, *आगर*, *अगु* या *अग्र* तथा *आग* से आगरा का संबंध जोड़ा जाता है। इस भू-भाग में बसने वाली *अगरवाल* जाति से भी इस शब्द का संबंध जुड़ता हैं। पर किसी प्रामाणिक सामग्री के अभाव में वास्तविक स्थिति का पता लगाना कठिन है।

१६. आगरा के संबंध में प्राचीनतम उल्लेख फ़ारसी कवि सलमान

(मृ० ११३१ ई०) का मिलता है।[1] मुग़ल शासन के पूर्व भी मुसलमानों तथा राजपूतों के अनेक संघर्षों का आगरा दृश्य-स्थल रहा है। बाह् तहसील (भदावर प्रदेश) के भदौरिया राजपूतों का उल्लेख बहुत प्राचीन समय से मिलता है। १४वीं शती के अंत में भदौरियों ने बाह् के प्रदेश से मेवों को निकाल कर हतकांत (बाह् तथा ग्वालियर की सीमा पर अवस्थित) में अपने आपको स्थापित किया। इस भदौरिया कुल का मुस्लिम शासकों से प्रायः निरंतर संघर्ष चलता रहा। अपनी सुव्यवस्था के लिए प्रसिद्ध शेरशाह ने बाह् में १२००० घुड़सवारों को भदौरियों को दबाने के लिए रख छोड़ा था।[2]

१७. मुग़लों के शासन-काल में आगरा अकबर के समय से (१५५८ ई०) बहुत काल तक साम्राज्य की राजधानी बना रहा। अतः इस काल से संबंधित इतिहास में आगरा जिले के बहुत से स्थानों के उल्लेख हमें मिलते हैं। मुग़ल काल में भी भदौरियों के विद्रोह का उल्लेख मिलता है। हतकांत के भदौरियों को दबाने के लिए आधम खां को विशेष रूप से नियुक्त किया गया था, और वह परगना उसे जागीर में दे दिया गया था।[3]

अकबर के समय से ही यूरोपीयों का आगमन प्रारम्भ हो जाता है। पोर्चुगीज़ मिशनरी सब से पहले आए। जूलियन पेरियरा के फतेहपुर सीकरी में मार्च १५७८ ई० में आने का उल्लेख मिलता है।[4] अंग्रेज़ों के शासन-काल में भी आगरा का महत्व बराबर रहा। १८३६ ई० से १८५८ ई० तक आगरा उत्तर-पश्चिमी प्रान्त की राजधानी रहा।

१८. इतिहास के विभिन्न कालों में आगरा जिले के निम्नलिखित आधुनिक स्थानों के बारे में हमें विशेष महत्वपूर्ण उल्लेख मिलते हैं—बटेश्वर (बा०) सूरजपुर (बा०) चँदवार (फी०) फतेहपुर सीकरी (कि०) खैरागढ़ (खै०) रपरी (फी०) हतकांत (बा०) बाह् (बा०) सिकंदरा (आ०) आगरा (आ०) रुनकुता (कि०) जाजऊ (खै०) शाहगंज (आ०)। जिले से संबद्ध व्यक्तियों में भदौरिया राजाओं का ऐतिहासिक महत्व है। बाह् तहसील का नौगवां गांव इनका राज्य-केन्द्र अब भी है। भदावर राज्य आगरा जिले में केवल बाह् तहसील के कुछ

---

१. द हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया ऐज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स : एच० एम० इलियट, IV, ५२२

२. द हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया ऐज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स : एच० एम० इलियट, IV, ४१६

३. वही, २३

४. जर्नल ऑफ़ द बंगाल एशियाटिक सोसाइटी, LXV, ३८-११३

भाग में ही सीमित है। वैसे भदावर प्रदेश में अटेर, भिंड, पट्टी, हुमैंत तथा बाह सम्मिलित माने जाते हैं। भदौरिया राजाओं का प्राचीनतम उल्लेख १२४६ ई० का मिलता है, परन्तु जिसकी प्रामाणिकता बहुत असंदिग्ध नहीं है।[1] पर इतना निश्चित है कि १६वीं शती के पूर्व भदौरिया बाह में स्थापित हो चुके थे। प्रारंभ में इनका केन्द्रस्थल हतकांत था, जहां से ये बराबर मुस्लिम शासकों से एक ओर, तथा ग्वालियर प्रदेश के शासकों से दूसरी ओर संघर्ष करते रहे। भदावर कुल का इतिहास सुव्यवस्थित रूप में मिलता है। इस कुल के वर्तमान प्रतिनिधि सन् १९५७ ई० के सामान्य चुनावों में बाह प्रदेश से प्रान्तीय एसेम्बली में चुने गए हैं।

वर्तमान सामाजिक-आर्थिक स्थिति

१९. शासन की सुविधा की दृष्टि से जिले को ७ तहसीलों में बांटा गया है—आगरा, बाह, एत्मादपुर, फीरोजाबाद, फतेहाबाद, किरावली, खैरागढ़। ये तहसीलें वस्तुतः शासन के कृत्रिम विभाजन होने के साथ-साथ जिले के बहुत कुछ प्राकृतिक विभाजन भी हैं। इसीलिए प्रत्येक तहसील की भौगोलिक परिस्थिति तथा जनजीवन का अपना वैशिष्ट्य है।

जिले के १३ स्थान नागरिक स्तर के हैं, जिन्हें 'टाउन एरिया' अथवा 'म्युनिसिपल-कंटोनमेंट बोर्ड' की संज्ञा दी जाती है। इस नागरिक जनता की संख्या १९५१ ई० की जनगणना के अनुसार ४९६,११२ है। जिले की शेष जनता ग्रामीण है। गांवों की जनसंख्या १९५१ ई० में १,००३,५२९ थी। स्पष्ट ही जिले की आबादी का बड़ा भाग गांवों में रहता है।

२०. धार्मिक दृष्टि से जनसंख्या का अधिकांश हिन्दू धर्मानुयायी है। १९०१ ई० की जनगणना के अनुसार जिले की आबादी का ८६·३३ प्रतिशत भाग हिन्दू था, ११·६९ भाग मुसलमान था तथा शेष अन्य धर्मावलंबी थे। नगरों तथा बड़े कस्बों को छोड़कर प्रायः समस्त प्रदेश का जनजीवन हिन्दू वातावरण से युक्त है। गांवों के मुसलमान भी अपने सामान्य जीवन-क्रम, भाषा आदि की दृष्टि से हिंदू रहन-सहन से अलग प्रतीत नहीं होते। नगर के मुसलमान उर्दू अथवा खड़ी बोली बोलते हैं।

२१. जिले की हिंदू जातियों में चमार बहुसंख्यक हैं। उसके बाद ब्राह्मणों का स्थान आता है। अन्य जातियों में राजपूत, जाट, बनिया, काछी, कोरी, गड़रिया आदि प्रमुख हैं। १९०१ ई० की जनगणना के अनुसार चमारों की संख्या १७५,१३२ (हिंदू जनता का १९·१३ प्रतिशत) थी, ब्राह्मण ११०,०६८ (हिंदू जनता

---

१. आगरा : ए गजेटियर, ९०

का १२·०२ प्र०) थे, तथा राजपूतों की संख्या ८९,१३५ (हिंदू जनता का ९·७३ प्रतिशत) थी। १९५१ ई० की जनगणना में जातियों का विभाजन नहीं रखा गया है।

धार्मिक दृष्टि से जिले के वातावरण में कोई विशेषता नहीं है। सामान्य जनता सनातन धर्म की अनुयायिनी है, पर शिव की पूजा का विशेष प्रचार जान पड़ता है। गांवों में स्थानीय देवी-देवताओं, ग्रामदेवताओं आदि की पूजा का विशेष आयोजन रहता है। ऐसे आयोजनों का समय प्रायः छोटे-मोटे मेलों का रूप धारण कर लेता है। बटेश्वर (बाह) का मेला अंतर्प्रान्तीय स्तर पर प्रसिद्ध है। इस मेले के धार्मिक तथा व्यावसायिक दोनों ही पक्ष हैं। बटेश्वर में जमुना-स्नान का विशेष महत्व माना जाता है। बटेश्वर को सब तीर्थों का भांजा कहा गया है। आगरा आर्यसमाजी आन्दोलन का भी एक प्रधान केन्द्र रहा है।

२२. जिले की अधिकांश जनता अपनी आजीविका के लिए प्रमुखतः खेती पर निर्भर है। उद्योग-व्यवसायों का क्षेत्र बहुत सीमित है। इसीलिए सामान्य जनता का दृष्टिकोण शुद्ध खेतिहर जैसा है, मिल मजदूर अथवा कारीगर जैसा नहीं। जैसा ऊपर उल्लेख हो चुका है, आगरा तथा फीरोजाबाद की तहसीलों में अब कांच के उद्योग की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। फलतः उस प्रदेश में धीरे-धीरे नागरिकता के भाव का प्रवेश हो रहा है। यह ग्रामीण अथवा नागरिक भाव बोली के स्वरूप को निर्मित करने में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। जिले में नील की खेती का प्रचलन पिछली शताब्दी में था, जिसके कुछ अवशेष पुराने तालाबों अथवा कोठियों के रूप में अब भी दिखाई दे जाते हैं। जिले में खेती की व्यवस्था के लिए अब तक प्रमुखतः जमींदारी-प्रथा प्रचलित थी। पर कांग्रेस सरकार ने सन् १९५२ ई० में उसका उन्मूलन कर के भूमिधर-व्यवस्था प्रचलित कर दी है।

२३. गांवों में रहने वाली तथा आजीविका के लिए खेती पर आश्रित जनता का जीवन-क्रम अत्यन्त सामान्य है। गांव या तो ऊंची समतल भूमि पर बसे हैं, अथवा नदी किनारे के कछारों के निकट हैं। गांव के घर प्रायः मिट्टी के बने होते हैं—कुछ संपन्न परिवार अपने लिए पक्के मकान भी बनवा लेते हैं। गांव अथवा कस्बे के मुहल्ले साधारणतः जातियों के आधार पर बंटे रहते हैं। पर ये जातीय विभाजन पहले जैसे कट्टर अब नहीं रहे। गांवों के नाम—*पुर* (चंद्रपुर), *पुरा* (कछपुरा), *खेरा* (खेरा राठौर), *ठेरा* (मोहन को ठेरा) अथवा *मड़इयां* (भूड़े की मड़इयाँ) के संयोग से बनते हैं। स्त्री पुरुषों के नाम प्रायः निरर्थक तथा विकृत से लगते हैं—अंगनू, बिले, कउआ, खरगे, गदुला (स्त्री)। गांव में किसी एक बनिए की दूकान से ही दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है। बड़े गांवों में सप्ताह में प्रायः दो बार हाट लगती है, जिसमें पास-पड़ोस के लोग भी क्रय-विक्रय के लिए

आ जाते हैं। ऐसे गांवों में डाकघर, प्राइमरी तथा मिडिल स्कूल, कन्या पाठशाला, सहकारी बैंक तथा बीजघर, काँजी हौज, थाना आदि जैसी सुविधाएं भी उपलब्ध रहती हैं। गांव के लोगों में विशेषतः जातीय स्तर पर सौहार्द्रपूर्ण भावनाएं प्रायः नहीं रहतीं। इसीलिए अक्सर फ़ौजदारी की नौबत बनी रहती है। पर यह जातीय चेतना परस्पर लड़ाइयों तक ही सीमित है। आधुनिक पंचायतों ने संभवतः ग्रामीण जीवन के इस विघटन में कुछ और वृद्धि की है।

२४. जिले की शासन-व्यवस्था का केन्द्र आगरा नगर है। पूरा जिला एक कलक्टर के अधीन है, जिसकी सहायता के लिए कई असिस्टेण्ट तथा डिप्टी कलेक्टर नियुक्त रहते हैं। पुलिस का उच्चतम अधिकारी एस० पी० होता है, जो अपने सहकारियों के साथ शांति-सुरक्षा की व्यवस्था में रहता है। न्याय की व्यवस्था डिस्ट्रिक्ट जज तथा मुंसिफों के हाथ में रहती है। आजकल गांवों में न्याय को सस्ता तथा शीघ्र बनाने के लिए पंचायतें बनाई गई हैं। जिले के अन्य अधिकारियों में शिक्षा अधिकारी (इंस्पेक्टर ऑफ़ स्कूल्स), जेल-अधिकारी (सुपरिन्टेन्डेन्ट जेल), स्वास्थ्य अधिकारी (सिविल सर्जन) तथा डिस्ट्रिक्ट इंजीनियर प्रमुख हैं। आधुनिक समय में आगरा को एक बड़ा फौजी केन्द्र भी बनाया गया है।

२५. कुल मिलाकर जिले का सामान्य जीवन-क्रम परिश्रम-युक्त तथा संघर्ष-मय है। स्वतंत्रता-प्राप्ति (१९४७ ई०) के पूर्व तक रहन-सहन का स्तर बहुत नीचा था यद्यपि इस नीचे स्तर का कारण सदैव धनाभाव ही नहीं रहता। जीवन की सुख-सुविधाएं अपेक्षाकृत समृद्ध व्यक्तियों को भी रुचिकर नहीं। स्त्रियां प्रायः परदे में रहती हैं तथा पुरुषों के साथ-साथ परिश्रम करती हैं। दूध पीना स्वतः उनकी दृष्टि में निषिद्ध है। यह सामान्य विश्वास है कि जिस घर में स्त्रियां दूध पीती हैं वह घर चल नहीं सकता। किसान प्रायः सदैव ऋण के भार से दबे रहते हैं, यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में अन्न के भाव में वृद्धि के कारण वे कुछ समृद्ध अवश्य हो चले हैं।

२६. जिले के पूर्वी भाग में जीवन-संघर्ष अधिक गहरा दिखाई देता है। वनस्पति तथा वृक्षों का अभाव, कटती हुई मिट्टी, मिट्टी में रेती का आधिक्य, सिंचाई की समुचित व्यवस्था का अभाव, ६०-७० हाथ गहरा कुओं का पानी तथा यातायात की सुविधाओं और उद्योगों का अभाव——इन सारी परिस्थितियों ने फतेहाबाद तथा विशेषतः बाह तहसील के जनजीवन को अत्यन्त कठोर बना दिया है। पर इस कठोर जीवन-क्रम के अनुपात में जनता उतनी परिश्रमी नहीं है। इसीलिए सामान्य व्यक्ति के पास दैनिक आवश्यकता की वस्तुएं भी प्रायः नहीं रहतीं। जीवन को किंचित् सुखद अथवा सुविधामय बनाने वाली वस्तु विलास का उपादान समझ ली जाती है। इस प्रसंग में भदावर प्रदेश (बाह तहसील) में प्रचलित एक जन-कथा उल्लेखनीय है। किसी व्यक्ति के पिता जब एकदम मरणासन्न हो गए तो उसने

उनसे पूछा कि आपकी अन्तिम इच्छा क्या है ? इस पर पिता ने कई बार तो प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। अंततः बार-बार पूछे जाने पर उन्होंने कहा—"उड़नजू की दार् औं कनकन जू के फुलका, औं राजा के बाग के निबुआ कौं अचार। बेटा, को देइ औं को खाइ !" यह सुन कर बेटा एक क्षण तो स्तब्ध रह गया, फिर बोला, "कईं कक्का सुनौं, कल्लि मत्त होउ तौं तुम आजु ई मज्जाउ, पज्जे सरग की तरइयां म: पैं न टूटीं।" उड़द की दाल, गेहूं की रोटी तथा नीबू के अचार को स्वर्ग के तारे समझने वाले समाज के रहन-सहन का स्तर क्या रहा होगा, इसकी कल्पना भी बहुत आसानी से नहीं हो पाती। एक बात अवश्य स्पष्ट है। पूर्वी आगरा प्रदेश की व्रजभाषा का ध्वन्यात्मक रूखापन तथा परुषता, जिसे विद्वान् भाषा का पौरुषपूर्ण रूप भी कह सकते हैं, और जो मथुरा की केन्द्रीय ब्रज की परंपरा से प्रसिद्ध कोमल-कांत पदावली के एकदम विरोध में है, इस प्रदेश के कठिन तथा संघर्षमय जनजीवन के अनुरूप ही है।

२७. पिछले चार-पांच वर्षों में आधुनिक जीवन-क्रम ने जिले के सामान्य जनजीवन में कुछ परिवर्तन उपस्थित कर दिए हैं। नयी-नयी योजनाओं ने इस प्रदेश का रूप भी कुछ बदला है। स्थान-स्थान पर ट्यूबवेलों की व्यवस्था ने सिंचाई का काम आसान कर दिया है। राष्ट्रीय विकास योजना की एक योजना अकोला (आ०) के पास प्रारंभ हो गई है। सरकारी रोडवेज़ ने यातायात बहुत आसान तथा शीघ्र बना दिया है। सड़कों का भी कुछ सुधार हुआ है। नये खोले गए स्कूलों, अस्पतालों तथा पंचायतों ने इन अत्यन्त पिछड़े हुए गांवों में एक नयी चेतना को जन्म दिया है। तार तथा टेलीफ़ोन की भी तहसील के केन्द्रों में व्यवस्था हो गयी है। पंचायतों तथा स्कूलों के द्वारा ग्रामीण जनता अब प्रायः रेडियो सुनती है। नागरिकता के इन सभी उपायों से गांवों में भी अब स्टेंडर्ड हिंदी का प्रभाव तेजी से बढ़ रहा है। (§ २८६)

२८. आगरा जिले की बाह तहसील का ग्वालियर प्रदेश तथा बुंदेली संस्कृति से घनिष्ट संबंध उल्लेखनीय है। यह संबंध बाह की बोली में विशेष रूप से द्रष्टव्य है (§ ३२२)। खान-पान, पहिनावे-उढ़ावे, अभिवादन-प्रथाओं आदि की दृष्टि से बाह तहसील तथा निकटवर्ती चंबल पार के प्रदेश में पर्याप्त समानताएं हैं। इन प्रभावों तथा समानताओं का प्राकृतिक कारण होने के साथ-साथ, इस प्रसंग में भदावर राज्य का प्रसार भी एक प्रमुख कारण है। भदावर प्रदेश बाह तथा ग्वालियर के कुछ भागों का एक सम्मिलित रूप है। भौगोलिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से इस पूरे भू-भाग का एक अपना सुगठित व्यक्तित्व है।

बुंदेली लोककथाएं बाह के अनेक गांवों में बड़ी रुचि के साथ सुनी-सुनाई जाती हैं। ईसुरी तथा सुखैया—ग्वालियर के दो प्रसिद्ध लोक-गायकों द्वारा रचित

"रजपूती होरी" इस प्रदेश में अत्यधिक प्रचलित हैं। बुंदेली "लेदों" के गाने के भी प्रायः आयोजन होते हैं। वर्षा के दिनों में दक्षिणी आकाश में बिजली चमकने पर ग्रामीण कहते हैं "ग्वालियर गज्जौं, घर कों भज्जों" (ग्वालियर गरजता है, अब तुम शीघ्र घर जाओ क्योंकि तेज़ पानी बरसेगा।) ग्वालियर राज्य के दिनों में ग्वालियर महाराज के सिक्कों का बाह तहसील में उन्मुक्त प्रचलन था। बाह तहसील के माथुर चतुर्वेदी (चौबे) ब्राह्मणों का ग्वालियर प्रदेश के अत्यन्त दुर्गम स्थल तरसोखर से सदैव घनिष्ट संबंध रहा है।

२९. बाह तहसील के पूर्वी प्रदेश को मुख्यतः भदावर क्षेत्र कहा जाता है। यद्यपि स्वतः इस प्रदेश में यह नाम अब बहुत प्रचलित नहीं है। भदावर राज्य का केन्द्र-स्थल नौगवां बाह तहसील के पूर्वी सीमांत पर है। पिनाहट, नौगवां, पारना तथा कचौरा भदावर राज्य के प्रमुख गांव रहे हैं। इन स्थलों पर भदौरियों के प्राचीन किले तथा मंदिर अब तक वर्तमान हैं। भदावर महाराज का इस प्रदेश में अब भी मान है। चतुर्वेदी ब्राह्मणों के विवाह में एक पँहराउन (अंग वस्त्र) भदावर महाराज के लिए अब तक ली जाती है। सामान्यतः भदौरियों को युद्ध-प्रिय तथा सरल प्रकृति का समझा जाता है। इस प्रदेश में एक उक्ति प्रायः सुनने को मिलती है, "भदौरिया लपका, खाएँ निवौंरी बतावैं टपका (आम)।"

आगरा जिले की बोली

३०. आगरा जिले की बोली प्रायः विशुद्ध ब्रजभाषा का सीमांतीय रूप है। वैसे पूर्वी तथा दक्षिण-पश्चिमी भाग को छोड़ कर शेष जिले की बोली को स्टेंडर्ड तथा केन्द्रीय ब्रज के अन्तर्गत माना जा सकता है। ग्रियर्सन ने पूर्वी आगरा की बोली को भी स्टेंडर्ड माना है, (लि० स०, जिल्द ९, भाग १, ७०), पर यह भ्रामक है। बोली के पूर्वी तथा पश्चिमी उपरूपों की तुलना अलग से की गई है (§ ३०४)। वस्तुतः आगरा जिले के उत्तर-पश्चिमी प्रदेश की बोली ही केन्द्रीय तथा स्टेंडर्ड ब्रज है। तथा दक्षिण-पूर्व की बोली—विशेषतः बाह तहसील (जिले का दक्षिण-पूर्वी प्रदेश) की बोली ब्रज, कन्नौजी तथा बुंदेली का एक मिश्रित रूप है (§ ३१८)।

३१. आगरा जिले की बोली संबंधी सीमाएं इस प्रकार हैं—जिले के उत्तर में मथुरा की केन्द्रीय ब्रज है, पश्चिम के प्रदेश में ब्रजभाषा का भरतपुरी उपरूप है, दक्षिण में मुख्यतः ग्वालियरी तथा बुंदेली उपरूप बोले जाते हैं, तथा पूर्व के इटावा तथा मैनपुरी जिलों की बोली कन्नौजी है। इस प्रकार आगरा की बोली एक ओर तो ब्रज के शुद्ध तथा स्टेंडर्ड रूप से घिरी हुई है, तथा शेष तीनों ओर ब्रजभाषा के सीमांतीय रूप अथवा उपरूप प्रचलित हैं।

३२. आगरा की आधुनिक बोली की प्रकृति मुख्यतः मौखिक है—उसका

लिखित अथवा मुद्रित रूप हमें नहीं मिलता। इस प्रदेश में बराबर उपद्रव, संघर्ष तथा अशांति के कारण ही संभवतः यहां ब्रजभाषा के उत्थान के समय भी साहित्य-सृजन नहीं हुआ। रीतिकाल के अंतर्गत कचौरा (बा०) के रूपराम (१७३६ वि० के लगभग) ने कुछ सुंदर कवित्त तथा सवैये लिखे हैं। आगरा नगर से संबद्ध कुछ मुसलमान कवियों की भी रचनाएं ब्रजभाषा में मिलती हैं। पर कुल मिला कर इस प्रदेश में महत्वपूर्ण साहित्य का सृजन ब्रजभाषा के माध्यम से नहीं हो सका। आज जब कि परिनिष्ठित ब्रजभाषा में सामान्यतः साहित्य की रचना नहीं होती, तो इस कठोर तथा संघर्षमय जीवन वाले प्रदेश में किसी साहित्य की कल्पना नहीं की जा सकती। वस्तुतः इस प्रदेश की बोली न पहले कभी साहित्य का माध्यम बन सकी, और न अब ही है। कुछ स्फुट परन्तु सरस लोकगीतों की रचना इस बोली में आधुनिक काल में भी हुई है।

३३. आगरा जिले की बोली का दैनिक जीवन के व्यवहारों में भी प्रायः लिखित रूप नहीं मिलता। परन्तु जहां लिखने की आवश्यकता पड़ती ही है, वहां नागरी लिपि का प्रयोग किया जाता है।

पूर्वी आगरा जिले की बोली तथा भदौरी

३४. इस प्रदेश की बोली के प्रसंग में भदौरी बोली (भदावरी, अर्थात् भदावर प्रदेश की बोली) का कुछ विद्वानों ने उल्लेख किया है, जो सर्वथा भ्रम-रहित नहीं है। ग्रियर्सन ने ब्रजभाषा के उपरूपों की चर्चा करते हुए पूर्वी आगरा की बोली को स्टेंडर्ड माना है तथा भदौरी में अंतर्भुक्त ब्रज (सिकरवाड़ी-ग्वालियर का उत्तर-पश्चिम) को अलग से स्थान दिया है। (लिं० स०, जिल्द ९, भाग १, ७०)। यह स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है। पूर्वी आगरा की बाह तहसील वस्तुतः भदावर राज्य का केन्द्र है, भदावर का राजकीय गांव नौगंवा भी बाह तहसील में है। पर भदावर का विस्तार बाह तहसील के बाहर ग्वालियर प्रदेश में है। आगरा गज़ेटियर (१९०५ ई०) ने भदावर प्रदेश की रूपरेखा यों बताई है—अटेर, भिंड, पट्टी, हुमैंत तथा बाह का सम्मिलित भू-भाग[१]। इस दृष्टि से ग्रियर्सन द्वारा दिया गया "भदौरी" नाम इस समूचे प्रदेश की बोली का द्योतक होना चाहिए। परन्तु स्टेंडर्ड ब्रज का एक रूप उन्होंने पूर्वी आगरा का माना है, और इस प्रकार पूर्वी आगरा के प्रदेश को उन्होंने भदौरी के क्षेत्र से अलग कर दिया है। वस्तुतः यह भदौरी बोली समूचे भदावर प्रदेश तथा उसके बाहर के प्रदेश (आगरा जिले की फतेहाबाद तहसील) में भी बोली जाती है और उसका एक काफ़ी सुगठित रूप है। इस

---

१. आगरा : ए गज़ेटियर, ८९

प्रकार पूर्वी आगरा की बोली को भदौरी से अलग नहीं किया जा सकता, जैसा कि ग्रियर्सन ने किया है। यह अवश्य है कि पूर्वी आगरा में बोली जाने वाली भदौरी मुख्य ग्वालियर प्रदेश की भदौरी से भिन्न है। लिंग्विस्टिक सर्वे में ग्रियर्सन भदौरी को केवल बुंदेली के उपरूप की भांति देखते हैं (लिं० स०, जिल्द ९ भाग १, १९१६ ई० पृ० ६९)।

३५. भदौरी बोली के संबंध में दूसरा महत्वपूर्ण उल्लेख 'आगरा गज़ेटियर' (१९०५ ई०) में मिलता है। आगरा जिले की बोली की चर्चा करते हुए लेखक कहता है, "जनसमूह का अधिकांश भाग ब्रज बोली बोलता है, जो प्रायः पूर्वी प्रदेश की अंतर्वेदी ही है और जिसे स्थानीय लोग गांववारी या खड़ी बोली (?) कहते हैं। बाह तहसील की बोली बुंदेली का एक उपरूप है, जो पश्चिमी हिंदी की एक शाखा है, और जो (अर्थात् बाह तहसील की बोली) प्राचीन नाम भदावर के आधार पर भदावरी कही जाती है, और भदावर से ही संबद्ध यहां के महत्वपूर्ण राजपूत कुल का नामकरण हुआ है।"[1] ग्रियर्सन के आधार पर डॉ० उदयनारायण तिवारी ने भी भदौरी को बुंदेली की उपभाषा, के रूप में ही स्वीकार किया है (हिंदी भाषा का उद्गम और विकास, पृ० २३९)।

३६. भदौरी तथा बाह की बोली के संबंध को लेकर यह सारी अस्पष्ट स्थिति इसलिए है कि बाह की बोली ब्रज, कन्नौजी तथा बुंदेली का संधि-स्थल है। वस्तुतः बाह की बोली प्रधानतः ब्रज तथा कन्नौजी का मिश्रण है, तथा बुंदेली शब्द-समूह का एक बड़ा भाग उसमें घुल-मिल गया है। इस दृष्टि से बाह की बोली (भदौरी) को बुंदेली की उपबोली तो किसी प्रकार नहीं कहा जा सकता, जैसा कि आगरा गज़ेटियर (१९०५ ई०) के लेखक का मत है (: ३२२)। बुंदेली के लोकगीत, कहावतें तथा कुछ विशिष्ट शब्द-प्रयोग इस प्रदेश में स्वाभाविक रूप से अवश्य व्यवहृत होते हैं।

३७. बाह तहसील की बोली भदावर प्रदेश के अंतर्गत होने के कारण 'भदौरी' कही तो जा सकती है, पर 'भदौरी' नाम का प्रयोग कुछ भ्रामक सिद्ध हो सकता है। एक तो इसलिए कि आगरा जिले में ही यह तथाकथित 'भदौरी' भदावर प्रदेश के बाहर भी बोली जाती है, तथा दूसरे इसलिए कि बाह तहसील की भदौरी मुख्य ग्वालियर प्रदेश की भदौरी से कुछ भिन्न है।

इस दृष्टि से आगरा जिले की बोली के प्रसंग में यह स्पष्ट समझा जाना चाहिए कि बाह की बोली, जैसा कि 'आगरा गज़ेटियर' में कहा गया है, (१) न तो बुंदेली की एक उपबोली है और (२) न उसे सुविधापूर्वक 'भदौरी' ही कहा जा सकता है।

---

१. आगरा : ए गज़ेटियर, ८३

वस्तुतः बाह् प्रदेश की बोली को पूर्वी आगरा की बोली कहना ही अधिक युक्तिसंगत होगा, जैसा कि ग्रियर्सन ने कहा है, पर ग्रियर्सन की भांति पूर्वी आगरा की बोली को न तो स्टेंडर्ड ब्रज कहा जा सकता है, (२७०) और न उसे भदौरी से अलग ही किया जा सकता है। पूर्वी आगरा की बोली व्याकरणगत तथा ध्वन्यात्मक दृष्टि से ब्रज तथा कन्नौजी का मिश्रण है तथा बुंदेली शब्दों का उसमें प्रचुर मात्रा में प्रयोग होता है। इस प्रकार बाह् की बोली ब्रज, कन्नौजी तथा बुंदेली का एक सम्मिलित रूप है, एक सीमावर्ती बोली है (§ ३१८)। इस मिश्रित रूप को प्रादेशिकता के संदर्भ में भदौरी भी कहा जा सकता है, परन्तु स्पष्टता के लिए तथा भाषावैज्ञानिक दृष्टि से उसे पूर्वी आगरा की बोली कहना अधिक उपयुक्त होगा। किन्तु एक ही प्रसंग में पूर्वी आगरा (बाह्) की बोली तथा भदौरी को अलग-अलग कर के नहीं देखा जा सकता। भदौरी का यदि उल्लेख होगा तो उसमें पूर्वी आगरा (मुख्यतः बाह्) की बोली स्वभावतः सम्मिलित समझी जायेगी।

ब्रजभाषा अथवा ग्वालियरी

२८. अपनी पुस्तक 'मध्यदेशीय भाषा (ग्वालियरी)' में श्री हरिहरनिवास द्विवेदी ने कुछ महत्वपूर्ण प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध करना चाहा है कि मध्य-देश की मध्यकालीन भाषा का नाम 'ग्वालियरी' था न कि ब्रजभाषा जैसा कि बाद के विद्वानों ने मान लिया है। उनके कुछ निष्कर्ष उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार हैं—

१—ग्वालियरी भाषा और ब्रजभाषा एक ही भाषा-रूप के दो नाम हैं। (म० भा०, पृ० ५१)

२—वार्ता में की गयी ब्रज मण्डल की कल्पना के पश्चात् जब ब्रज की रज का भी महत्व बढ़ा, तब कृष्ण भगवान के सम्भाषण की भाषा के लिए गोकुल के भक्तों को भी ब्रज बोली नाम ही अधिक उपयुक्त ज्ञात हुआ। परन्तु 'बोली' से संतोष न कर उसे भाषा बना दिया गया और वृन्दावन के बंगाली भक्तों की ब्रजबोली के स्थान पर गोकुल में उसका अधिक शालीन नाम 'ब्रजभाषा' अपनाया गया। (म० भा०, पृ० ६२)

३—यहां यह प्रकट कर देना आवश्यक है कि जयदेव ने ब्रजराज और राधा-रानी की माधुर्य भक्ति का रूप काव्य को बंगाल में दिया, मिथिला के विद्यापति ने उसे पल्लवित किया, और उड़ीसा-बंगाल-आसाम के कृष्ण-भक्ति कवियों ने एक ब्रजबोली की सृष्टि की, पुष्टि संप्रदाय ने आगे चल कर इस बोली को भाषा बना दिया और उस नाम की स्थापना ग्वालियरी भाषा पर कर दी। (म० भा०, पृ० ६६)

४—उसका काव्य भाषा का रूप ग्वालियर, अजमेर, जयपुर, महोबा, कालिंजर,

> गढ़कुण्डार तथा ओड़छा में संवारा गया है। वह मध्यप्रदेश की व्यापक काव्यभाषा है, वह पहले ग्वालियरी, बुंदेलखण्डी है, तब ब्रज है। मध्य-देश की सीमा में—बहुत छोटी सीमा में—वैष्णवन की वार्ता का ब्रजमण्डल है। वहां जो भी बोली बोली जाती थी वह भी शौरसेनी के क्षेत्र में समाविष्ट रही है। वह बोली थी, बोली है—काव्य भाषा नहीं। मध्यदेश की भाषा—ग्वालियरी का ब्रजभाषा नामकरण केवल एक संप्रदाय विशेष द्वारा उस समय के मुगल सम्राट, दरवारी, सामंत, सेठ-साहूकारों को आकर्षित कर सकने के परिणामस्वरूप हुआ है, भाषा के रूप अथवा उसकी परम्परा से इस नाम का कोई संबंध नहीं है।
>
> (म० भा०, पृ० ६६)

३९. इस प्रकार श्री द्विवेदी ने यह प्रमाणित करने का यत्न किया है कि नाम-करण तथा साहित्यिक परम्परा, इन दोनों ही दृष्टियों से मध्यदेशीय भाषा का नाम ग्वालियरी उपयुक्त तथा प्राचीन है, ब्रजभाषा उसके लिए एक अनुपयुक्त अर्वाचीन प्रक्षेपण है।

४०. लेखक के प्रस्तुत प्रबंध में 'ब्रजभाषा' तथा 'ग्वालियरी' शब्दों का स्थान-स्थान पर प्रयोग हुआ है। (यह प्रयोग स्पष्ट ही परम्परागत शैली तथा अथ में है।) पूर्वी आगरा की बोली के प्रसंग में ग्वालियरी का विशेष उल्लेख किया गया है। इस दृष्टि से श्री द्विवेदी की नामकरण संबंधी समस्या का कुछ विवेचन यहां आवश्यक-सा हो गया है। अवश्य ही यह विवेचन नामकरण के प्रसंग को लेकर सीमित रहेगा। मध्यदेशीय साहित्य तथा संगीत संबंधी परम्पराओं का विश्लेषण प्रस्तुत प्रबंध की सीमा से बाहर चला जाता है।

४१. 'ब्रजबूलि' से 'ब्रजभाषा' शब्द विकसित होने की बात सब से पहले आती है। श्री हरिहरनिवास द्विवेदी ने स्वयं यह सिद्ध किया है कि ब्रजभाषा नाम का प्रथम उपलब्ध उल्लेख सत्रहवीं शताब्दी का है। (म० भा०, पृ० ३७)। 'ब्रजबूलि' शब्द के प्रथम प्रयोग की तिथि के संबंध में डॉ० सुकुमार सेन ने अपनी पुस्तक 'ए हिस्ट्री ऑफ़ ब्रजबूलि लिट्रेचर' में कोई सामग्री नहीं दी है। पर व्यक्तिगत रूप से पूछे जाने पर लेखक के एक पत्र के उत्तर में डॉ० सेन ने लिखा है, "*ब्रजबूलि* शब्द बंगाल में १९वीं शताब्दी उतरार्द्ध के पहले नहीं मिलता। संभवतः राजा राजेन्द्रलाल मित्र ने इसका सर्वप्रथम प्रयोग किया।" "(The term Brajbuli in Bengal does not occur before the second half of the ninteenth century. Possibly Raja Rajendra Lal Mitra used it first.)" इससे स्पष्ट हो जाता है कि ब्रजबूलि नामकरण नितांत अर्वाचीन है। और 'ब्रजभाषा' शब्द जिसका प्रथम उपलब्ध उल्लेख सत्रहवीं शती का मिलता है, 'ब्रजबूलि' से व्युत्पन्न नहीं हो

सकता। यही नहीं, इस दृष्टि से ब्रजबूलि साहित्य की प्राचीनता (ब्रजबूलि का प्रथम कवि डॉ० सेन ने यशोराज खां को माना है और उसके प्रारंभिक साहित्य-सृजन की तिथि १४९३ से १५१९ ई० स्थिर की है (ए हिस्ट्री ऑफ़ ब्रजबूलि लिट्रेचर, २) ब्रज साहित्य तथा संस्कृति की व्यापकता तथा प्राचीनता को ही सिद्ध करती है, जिसका केन्द्र ब्रजबूलि का प्रेरणा-स्रोत मथुरा नगरी थी, ग्वालियर नहीं।

४२. वस्तुतः १७वीं शती के पूर्व तथा उसके बाद भी 'ब्रजभाषा' शब्द-प्रयोग के कम उदाहरण मिलते हैं। इस समय ब्रजभाषा को केवल 'भाखा' कहा जाता था। मिर्ज़ा खां (१६७६ ई०) ने अपने ग्रंथ 'तुफ़तुल हिंद' में जिस भाषा का व्याकरण दिया है, वह भाषा, उन्हीं के अनुसार, मुख्यतः ब्रज प्रदेश की है। उनकी दृष्टि में 'हिन्दी' तथा 'भाखा' शब्द भी समानार्थक हैं (ए ग्रामर ऑफ़ द ब्रजभाखा, पृ० ६)। 'भाखा' जिसे मिर्ज़ा खां ने 'ब्रजभाषा' कहीं नहीं कहा, उनकी दृष्टि में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। अपने ग्रंथ के दूसरे खण्ड में भारत की भाषाओं की चर्चा करते हुए मिर्ज़ा खां लिखते हैं, 'तीसरी भाखा। अलंकृत काव्य तथा प्रेमी प्रेमिका की प्रशंसा में लिखा गया काव्य मुख्यतः इसी भाषा में रचा गया है। यह उस दुनिया की भाषा है जिसमें हम रहते हैं। इस संबोधन के अन्तर्गत संस्कृत तथा प्राकृत को छोड़ कर अन्य सभी भाषाएं आ जाती हैं। *यह मुख्यतः ब्रज प्रदेश के लोगों की भाषा है*। ब्रज भारतवर्ष का एक भू-भाग है, जो चारों ओर चौरासी कोस तक फैला है, तथा जिसका केन्द्र मथुरा है जो काफ़ी प्रसिद्ध जिला है।' (ए ग्रामर ऑफ़ द ब्रजभाखा, पृ० ३४, ३५)। आगे चल कर मिर्ज़ा खां ने ब्रज प्रदेशीय लोगों की भाषा को सर्वाधिक भावपूर्ण (eloquent) बताया है। ब्रजभाषा भाषी प्रदेश के अन्तर्गत उन्होंने चंदवार (आगरा जिला) तथा ग्वालियर को भी सम्मिलित किया है। (ए ग्रामर ऑफ़ द ब्रजभाखा, पृ० ३५)।

४३. मिर्ज़ा खां के उक्त उल्लेखों से स्पष्ट हो जाता है कि जिस 'भाखा' अथवा 'हिंदी' की वे चर्चा कर रहे हैं वह वस्तुतः 'मुख्यतः ब्रज प्रदेश की बोली है', ब्रजभाषा है। १६७५ ई० के आसपास भी वे स्वतः 'ब्रजभाषा' शब्द का कहीं प्रयोग नहीं करते, क्योंकि तब तक ब्रजभाषा के लिए 'भाखा' शब्द ही था, जो बाद में इंशा अल्ला खां के समय तक उसी अर्थ में प्रचलित रहा, यद्यपि तब तक 'हिंदी' तथा 'भाखा' शब्द समानार्थक नहीं रह गए थे। इस दृष्टि से 'ब्रजभाषा' शब्द का इतिहास 'भाखा' से जुड़ता है न कि 'ब्रजबूलि' से। इससे यह भी सिद्ध होता है कि अलंकृत काव्य तथा नायक-नायिका साहित्य की ब्रजभाषा की साहित्यिक परम्परा अर्वाचीन नहीं है, जैसा कि श्री द्विवेदी प्रमाणित करना चाहते हैं। यह भी स्पष्ट है कि इस समय तक उत्तरी मध्यदेश में स्थानीय भाषा को न 'ब्रजभाषा' कहा जाता है न 'ग्वालियरी', वरन् उसका नाम है 'भाखा' जो मुख्यतः मुसलमानों द्वारा

दिया गया है। मिर्ज़ा ख़ां के वर्णन से यह भी सिद्ध होता है कि 'मुख्यत: ब्रजप्रदेशीय लोगों की भाषा' की साहित्यिक परंपरा प्राचीन, समृद्ध तथा केन्द्रीय है।

४४. श्री हरिहरनिवास द्विवेदी ने भाषा के संदर्भ में 'ग्वालेरी' शब्द-प्रयोग के ३ मुख्य उल्लेख-स्थल दिए हैं—किसी अज्ञात गद्य लेखक का हितोपदेश का गद्यानुवाद, जिसका समय अगरचंद नाहटा के मतानुसार १६वीं शती प्रारंभ है, किसी नाना बुआ केन्दुरकर द्वारा किया गया नाभादास की 'भक्तमाल' और उसकी प्रियादास द्वारा की गई टीका का 'भक्त रत्नावली' नाम से मराठी अनुवाद, जिसका समय १७१० ई० के बाद है, तथा १६२९ ई० में जयकीर्ति द्वारा की गई 'क्रिसन रुकमिणी री बेलि' की टीका। इसी उल्लेख के प्रसंग में स्मरणीय है कि अपनी जिस भाषा को स्वत: गोपाल कवि (बेलि का एक अन्य टीकाकार) 'ब्रजभाषा' कहता है, उसी को बाद में जयकीर्ति ने 'ग्वालेरी' कहा है। कहना न होगा कि उक्त तीन उल्लेखों में से प्रथम की प्रामाणिकता नितांत संदिग्ध है।

४५. उक्त उल्लेखों से श्री द्विवेदी का निष्कर्ष यों निकलता है—'इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी को—मध्यकालीन मध्यदेश की काव्य-भाषा को—पश्चिम और दक्षिण में सोलहवीं शताब्दी से अट्ठारहवीं शताब्दी तक ग्वालियरी भाषा कहा गया।' (म० भा० पृ० ३७)। यह निष्कर्ष किसी हद तक सही है, परन्तु आगे चल कर पश्चिम और दक्षिण को जब द्विवेदी जी पूरे मध्यदेश तक व्यापक कर देते हैं, तब वहीं कठिनाई उत्पन्न हो जाती है।

४६. पूरे मध्यदेश की बोली को १६वीं, १७वीं तथा १८वीं शती में, जब कि यातायात के साधन जन-सुलभ तथा त्वरित नहीं थे, मध्यदेश के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक केवल एक ही नाम द्वारा जाना जाता होगा, यह स्थिति स्वाभाविक तथा संगत नहीं लगती। वस्तुतः मध्यकालीन काव्य भाषा को, जिसे प्रधानत: 'भाखा' अथवा 'ब्रजभाषा' कहा गया है, उसी समय पश्चिम और दक्षिण में 'ग्वालियरी' कहा जाय, यह नितांत स्वाभाविक ही है। पश्चिम और दक्षिण वालों के लिए उस समय मध्यदेश का प्रमुख केन्द्र ग्वालियर रहा होगा जब कि उत्तर-पूर्व में ब्रज प्रदेश की महत्वपूर्ण तथा केन्द्रीय स्थिति निर्विवाद थी। अत: तत्कालीन सीमित दृष्टि के कारण दक्षिण-पश्चिम में जिसे 'ग्वालियरी' कहा गया, वह वस्तुत: उत्तर-पूर्व की ब्रजभाषा ही थी।

ध्वनिसमूह

४७. आगरा जिले की बोली में निम्नलिखित ध्वनियां मिलती हैं—

मूल स्वर

अ̆, अ, आ, इ̆, इ̮, ई, उ̆, उ̮, ऊ, ए̆, ए, ऍ̮ ऍ, ओ̆, ओ, ऑ̆, ऑ

मात्रा—स्वर लघु, दीर्घ तथा अतिरिक्त दीर्घ होते हैं। जैसे—इ, ई, ई ३

इनमें से अ̆, ए तथा ओ को छोड़ कर सभी स्वर अनुनासिक तथा निरनुनासिक दोनों रूपों में प्रयुक्त होते हैं, ध्वनियों को अधिकाधिक अनुनासिक करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। सामान्यतः अनुनासिकता की यह प्रवृत्ति वैकल्पिक है। एक ही व्यक्ति के उच्चारण में गुंनाँ तथा गुनाँ दोनों ही रूप मिलते हैं।

स्वरों में अर्द्धविवृत ध्वनियां विशिष्ट हैं। संयुक्त स्वरों का प्रयोग नहीं होता। साधारण संयुक्त स्वर अइ (ऐ) तथा अउ (औ) के स्थान पर अर्द्धविवृत ध्वनियां ऍ तथा ऑ प्रयुक्त होती हैं।

बोली में अंत्य अ स्वर का उच्चारण प्रायः नहीं होता। कभी-कभी एक ही शब्द व्यंजनांत रूप तथा लघु उकार अथवा इकार से युक्त एक ही व्यक्ति की बोली में मिलता है—टोर, टोरि̮।

व्यंजन

	स्पर्श	स्पर्श संघर्षी	अनुनासिक	पार्श्विक	लघुव्याघातीय	उत्क्षिप्त	संघर्षी	अर्द्धस्वर
स्वरयंत्रमुखी							ह्	
कंठ्य	क् ख्		ङ					
	ग् घ्							
तालव्य		च् छ्	ञ्					
		ज् झ्						य्
मूर्द्धन्य	ट् ठ्				र् रह्	ड़ ढ़		
	ड् ढ्							
वर्त्स्य				ल् ल्ह्				
दंत्य	त् थ्		न् न्ह्				स्	
	द् ध्							
ओष्ठ्य	प् फ्		म् म्ह्					
	ब् भ्							व्

स्वर

४८. अ̍—उदासीन स्वर है, विशेषतः शब्दांत में प्रयुक्त होता है—*बहुअ̍*। इस ध्वनि का प्रयोग सीमित है।

अ—स्टेंडर्ड हिंदी में अ अर्द्धविवृत मध्य ह्रस्व स्वर है। आगरा जिले की बोली में यह ध्वनि कुछ पीछे हटी हुई रहती है तथा इसके उच्चारण में मुंह भी कम खुलता है। उदा० *अबेर, खपरा, पेड़*।

सामान्यतः बोलने में अंत्य अ का उच्चारण नहीं किया जाता। परंतु संयुक्त ध्वनि तथा अनुस्वार के बाद और मूर्द्धन्य उत्क्षिप्त ध्वनियों में अंत्य अ अब भी प्रायः सुरक्षित है—*गद्दर, बंक, हाड़*।

आ—पश्च विवृत दीर्घ स्वर है। यह अ का दीर्घ रूप मात्र नहीं है। वस्तुतः इन दोनों ध्वनियों में उच्चारण-स्थान का अंतर है।

उदा०—*आगि, गाड़ी, बुहारों, मैंढ़ा*।

इ—अग्र संवृत ह्रस्व स्वर है—*इमिली, खिचरी, अकिलैं, गवरि*।

इ̆—यह इ का ह्रस्वतर रूप है।

वस्तुतः व्यंजनांत हुए शब्दों के अंत में इस ह्रस्वतर इ को जोड़ दिया जाता है। इस प्रकार इस ध्वनि का उच्चारण शब्दांत में ही होता है। *पारि̆, पोखरि̆, राति̆*।

ई—अग्र संवृत दीर्घ स्वर है—*ईख्, चील्, गीली, घरी*।

उ—मध्य संवृत ह्रस्व स्वर है। प्रस्तुत बोली में अ तथा उ के उच्चारण-स्थान प्रायः एक ही हैं। उ के उच्चारण में होठों को गोल कर दिया जाता है। उदा० *उन्हारी, गुड़, करुओं, खाउ*।

उ̆—यह उ का ही ह्रस्वतर रूप है। व्यंजनांत हुए शब्दों में उ̆ को अंत में जोड़ दिया जाता है। यह ध्वनि शब्दांतों में ही मिलती है—*हालु̆, दिनु̆, सैंरु̆*। ह्रस्वतर इ̆ उ̆ संभवतः फुसफुसाहट वाले स्वर हो सकते हैं।

ऊ—मध्य संवृत दीर्घ स्वर है। उ की अपेक्षा ऊ के उच्चारण में होठों को अधिक गोल कर दिया जाता है—*ऊपर, चूल्हा, बँमूरां, प्याऊ*।

ए—अग्र अर्द्धसंवृत दीर्घ स्वर है—*एलुआ, एसों, केरा, कलेऊ, चले*।

ए̆—अग्र अर्द्धसंवृत ह्रस्व स्वर है—*नाए̆* (नाव)। इस स्वर का प्रयोग बहुत कम होता है।

ऍ̆—अग्र अर्द्धविवृत ह्रस्व स्वर है—*पेंहॅर, जाऍ̆, खाऍ̆, हाऍ̆*। इस स्वर का प्रयोग भी अपेक्षाकृत कम है। शब्द के प्रारंभ में इसका प्रयोग नहीं होता।

ऍ—अग्र अर्द्धविवृत दीर्घ स्वर है। आगरा की बोली में इसका प्रयोग बहुत अधिक मिलता है—*ऍपन्, बॅरु, खड़ॅरा, चलॅं*।

ऒ—पश्च अर्द्धसंवृत दीर्घ स्वर है—*ओरों, कोरों, निहोरों, ढुको*। इसके उच्चारण में होठों को गोल किया जाता है।

ओ—पश्च अर्द्धसंवृत ह्रस्व स्वर है।—*ओखरी*। इस स्वर का प्रयोग भी कम होता है।

ऑ—पश्च अर्द्धविवृत ह्रस्व स्वर है।—*गाऑ*। इस स्वर का प्रयोग भी कम होता है।

ऑ—पश्च अर्द्धविवृत दीर्घ स्वर है। इसका प्रयोग बोली में अधिक होता है। उदा०—*ऑर, बॉर्, गऑ, चलिबॉ, चऑ*।

४९. मात्रा की दृष्टि से स्वर लघु, दीर्घ तथा अतिरिक्त दीर्घ मिलते हैं—*अब्, मोंड़ा, कहीं ३*। अतिरिक्त दीर्घ स्वर का प्रयोग प्रायः कम होता है।

५०. अ, ए तथा ओ और ह्रस्वतर इ उ को छोड़ कर सभी स्वरों का प्रयोग अनुनासिक तथा निरनुनासिक दोनों ढंगों से होता है—

	अनुनासिक	निरनुनासिक
अ	अंगा	अनुआं
आ	आंगन्	आरों
इ	छिंगुनियाँ	बिजुरी
ई	पींड़ि	गीली
उ	गुँनां	कुआ
ऊ	ऊंट्	पूरी

ए यह ध्वनि अनुनासिक नहीं होती, अनुनासिक होने की प्रक्रिया में अर्द्धविवृत (ऍं) हो जाती है—*जेट्*।

ए̆ं	नाँए̆ं	जाए̆ँ
ऍं	ऍंहं	बॅंरी

ओ ए के समान ही ओ ध्वनि भी अनुनासिक नहीं हो पाती। अनुनासिक होने की प्रक्रिया में यह अर्द्धविवृत हो जाती है (ऑं)। *पोलों*

ऑं जौंहर, कौंधा बकटौं

अनुनासिकता की प्रवृति सामान्यतः बढ़ती जाती है। जिस शब्द में एक भी अनुनासिक ध्वनि होती है उसमें प्रायः समीपवर्ती ध्वनियाँ भी अनुनासिक हो जाती हैं—*गाँसृ, गुँनाँ, हंमृ*।

अकारण अनुनासिकता के भी प्रचुर उदाहरण मिलते हैं—*कीँच्, काँपी, चाँउर्, पाँउरों*।

५१. दो स्वरों का संयोग—*गाओं, आउ, जाइ, जाओं*। तीन स्वरों के संयोग के भी उदाहरण मिलते हैं—*अइओ, कउआ, गइआ*।

व्यंजन

५२. स्पर्श व्यंजन

क्—कंठ्य अघोष अल्पप्राण है। *केरा, झकरा, नाँक्*।
ख्—कंठ्य अघोष महाप्राण है—*खेरा, नखरों, अँनरव्*।
ग्—कंठ्य सघोष अल्पप्राण है—*गोँहेरि, अंगुरी, बाग्*।
घ्—कंठ्य सघोष महाप्राण है—*घोड़ा, निर्वाट, जांघ्*।
ट्—मूर्द्धन्य अघोष अल्पप्राण है—*टटकों, टोरि, पटरा, खाट्*।

ठ्—मुर्द्धन्य अघोष महाप्राण है—*ठेरा, गोंठिल, आठ्*।

ड्—मूर्द्धन्य सघोष अल्पप्राण है—*डेहँरि, कंडा*। शब्दांत में ड् ध्वनि प्रायः नहीं मिलती।

ढ्—मूर्द्धन्य सघोष महाप्राण है—*ढकनाँ, कुढब्बों*। इस ध्वनि का प्रयोग शब्द के अन्त में नहीं होता है।

त्—दंत्य अघोष अल्पप्राण है—*तॅरवरी, सतर्, बात्*।
थ्—दंत्य अघोष महाप्राण—*थरिया, बथुआ, नाँथ्*।
द्—दंत्य सघोष अल्पप्राण—*दगरों, खादि, नाँद्*।

ध्—दंत्य सघोष महाप्राण—*धरों, कँधा, गीध्*।
प्—ओष्ठ्य अघोष अल्पप्राण—*परु, पसवाँ, पॅरि, कपड़ा, भाँप*।

फ्—ओष्ठ्य अघोष महाप्राण—*फरी, सफरी, सोंफ्*।
ब्—ओष्ठ्य सघोष अल्पप्राण—*बेर्, सबरी, कब्*।
भ्—ओष्ठ्य सघोष महाप्राण—*भाभई, गाभ्*।

५३. स्पर्श संघर्षी

च्—स्पर्शसंघर्षी अघोष अल्पप्राण है—*चकआ, खचेरों, कांच*।
छ्—स्पर्श संघर्षी सघोष महाप्राण है—*छप्पर, काछी, कछ्*।
ज्—स्पर्श संघर्षी सघोष अल्पप्राण है—*जेंगरा, काजर्, नाँज्*।
झ्—स्पर्श संघर्षी सघोष महाप्राण है—*झकरा, खिझकनी, सांझ्*।

५४. अनुनासिक

ङ्—अनुनासिक सघोष अल्पप्राण कंठ्य ध्वनि है। इसका प्रयोग अत्यन्त सीमित है—*कङ्गन्, कङ्गाली*।

ञ्—अनुनासिक सघोष अल्पप्राण तालव्य ध्वनि है। इसका प्रयोग भी बहुत सीमित है। केवल कुछ शब्दों के अंत में यह ध्वनि मिलती है—*चांञ्, सांञ्*। ञ् की निकटवर्ती ध्वनि ऍं (नाँऍं) है।

न्—अनुनासिक सघोष अल्पप्राण दंत्य ध्वनि है। *निबरिया, कनपटी, कान्*।

न्ह्—न् का महाप्राण रूप है। ब्रज में यह मूल ध्वनि के रूप में उच्चरित होती है—*न्हारि, न्हात, उन्हारी, न्हों*।

म्—अनुनासिक सघोष अल्पप्राण ओष्ठ्य ध्वनि है—*मरा, तुमाए चाम्*।

म्ह—यह मूल ध्वनि *म्* का महाप्राण रूप है। इसका प्रयोग अपेक्षाकृत कम होता है—*सँम्हारों, म्हों, म्हाँक्*।

५५. पार्श्विक

ल्—पार्श्विक सघोष अल्पप्राण वर्त्स्य ध्वनि है—*लोटा, पलरिया, हाल्*।

प्रस्तुत बोली में *ल्* ध्वनि प्रायः *र्* में परिवर्तित हो जाती है, इसके *न्* में परिवर्तित होने के भी उदाहरण मिलते हैं—(८५, ८६) ।

ल्ह—यह मूल ध्वनि *ल्* का महाप्राण रूप है—*ल्हारि, ल्हौरों, चूल्हा, कल्हा, सल्हा*।

५६. लुण्ठित

र्—लुण्ठित सघोष अल्पप्राण मूर्द्धन्य ध्वनि है। वस्तुतः यह ध्वनि मूर्द्धन्य तथा वर्त्स के बीच की है। वर्त्स प्रदेश में मसूड़ों के कुछ ऊपर इसका उच्चारण-स्थान है। उदा० *राउतों, करब, हार्*।

रह—यह मूल ध्वनि *र्* का महाप्राण रूप है—*रहात, रहेंपटों, उरहानों, जरहैंनाँ*।

५७. उत्क्षिप्त

ड़्—उत्क्षिप्त सघोष अल्पप्राण मूर्द्धन्य ध्वनि है। शब्दारम्भ में इसका प्रयोग नहीं होता—*जड़कों, हाड़्*।

ढ़्—उत्क्षिप्त सघोष महाप्राण मूर्द्धन्य ध्वनि है। इसका भी प्रयोग शब्दारंभ में नहीं होता। *अढ़ाई, पढ़्*।

५८. संघर्षी

ह्—संघर्षी सघोष स्वरयंत्रमुखी ध्वनि है। महाप्राण ध्वनियों में सघोष *ह्* निहित रहता है—*हार्, पैंहॅर्, दॅह्*।

स्—संघर्षी सघोष दंत्य ध्वनि है—*सपरी, हँसिया, पास्*। तालव्य *श्* का उच्चारण बोली में नहीं है, अतः संस्कृत की *श्* ध्वनि बराबर *स* में बदल जाती है—*शीत, सीतु; निश्चय, निस्चैं; नाश, नाँसु।*

बोली में संघर्षी ध्वनियों को उच्चरित करने की प्रवृत्ति कम मिलती है।

५९. अर्द्धस्वर

य्—तालव्य ध्वनि है। बोली में इसका उच्चारण अपेक्षाकृत कम होता है—*यादि, ब्याधि, जाय्*।

व्—ओष्ठ्य अर्द्धस्वर है। इसका उच्चारण केवल शब्द-मध्य में होता है—*ज्वारि, क्वांर*।

विदेशी शब्दों की ध्वनियां

६०. आगरा जिले की बोली में फ़ारसी तथा अंग्रेज़ी के शब्द काफ़ी मिलते हैं। इन शब्दों की ध्वनियां बोली की अपनी ध्वन्यात्मक प्रकृति के अनुकूल उच्चरित होती हैं। अरबी तथा तुर्की के शब्द फ़ारसी के माध्यम से आने के कारण फ़ारसी की ध्वनियों का ही अनुसरण करते हैं।

६१. फ़ारसी ध्वनियां

फ़ारसी के स्वर इ, ई, उ, ऊ, ए तथा ओ प्रायः यथावत् उच्चरित होते हैं—*किनारौं* (किनारह), *दीवान्* (दीवान), *मुस्तकिल, खूब्*, (ख़ूब) *शेख्* (शेख़), *जोर्* (ज़ोर)। अइ, अउ, ध्वनियां क्रमशः ऍ, ऒ, में परिणत हो जाती हैं—*खैंरात्* (खइरात) *फौंज्* (फ़उज़)।

६२. व्यंजन ध्वनियों में फ़ारसी *क्, ग्, च्, ज्, त्, द्, प्, ब्, न्, म्, र्, ल्, स्, य्* का आगरा की बोली में कोई परिवर्तन नहीं होता—

करेजौं	(कलेजह्)
जघैं	(जगह्)
मुचल्का	(मुचल्कह्)
अजब्	(अजब्)
तलास	(तलाश)
अन्दाज्	(अन्दाज़)

पेँहॅलवान्	(पहलवान्)
बिसमार्	(बिसमार)
जमींन्	(ज़मीन्)
जमाँनौँ	(ज़मानह्)
रोगन्	(रोग़न)
लस्कर्	(लश्कर)
सजा	(सज़ा)
यार	(यार्)

फ़ारसी की ध्वनियां क़्, ख़्, ग़्, फ़्, तथा श्, ज़् और व बोली में क्रमशः क्, ख्, ग्, फ, स्, ज् तथा ब् में परिवर्तित हो जाती हैं—

कलम्	(क़लम)
मुखबिर्	(मुख़बिर)
गरीब्	(ग़रीब)
नफा	(नफ़अ)
सरीक्	(शरीक़)
जप्त	(ज़ब्त)
बकील्	(वकील)

अंग्रेजी ध्वनियां

६३. अंग्रेजी के बहुत से स्वरों का बोली में अभाव है। मूल स्वरों में से तो अधिकांश स्वर मिलते हैं। इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐं, ऑँ तथा अ प्रस्तुत बोली में भी प्रयुक्त होते हैं। अतः अंग्रेजी शब्दों की ये ध्वनियां यथावत् रहती हैं, पर ए, ऑँ तथा अ क्रमशः इ, आ तथा अ में परिणत हो जाती हैं, यद्यपि ये तीनों ही स्वर आगरा की बोली में मिलते हैं—

टिकट्	(tikit)
लीडर्	(li:də)
पुलिस्	(pəli:s)
इस्टूल	(stu:l)
गैस्	(gaes)
पिन्सिन	(pensən)
काँपी	(kɔpi)
बटर्	(bʌtə)

६४. बोली में बहु प्रयुक्त अर्द्धविवृत स्वर (ऐं तथा ऑं) तो प्रायः अंग्रेजी के

समान ही हैं। यह दूसरी बात है कि इन समान स्वरों का उच्चारण बोली में प्रयुक्त अंग्रेज़ी शब्दों में उस रूप में न किया जाता हो (इन्जन <endzin)

६५. वस्तुतः विदेशी शब्दों में ध्वनि परिवर्तन दो कारणों से होता है—(१) एक तो इसलिए कि कोई विशिष्ट विदेशी ध्वनि प्रस्तुत बोली में नहीं है जैसे, कुछ फ़ारसी संघर्षी ध्वनियां अथवा अंग्रेज़ी स्वर ऍ आदि; इस प्रकार की विशिष्ट ध्वनियां प्रायः बोली की अपनी निकटवर्ती ध्वनियों में परिवर्तित हो जाती हैं। (२) दूसरा परिवर्तन उच्चारण-सुविधा तथा अन्य ध्वनि-नियमों के कारण होता है—अंग्रेजी pə'li:s का उच्चारण *पुलस* (तुलनीय अंग्रेजी tikit का उच्चारण टिकट् va:nis का उच्चारण वार्निस) अथवा अंग्रेजी bɜm का उच्चारण *बम्ब* इसलिए नहीं होता कि प्रस्तुत बोली में *ई* अथवा *ऑं* ध्वनियां नहीं हैं (प्रस्तुत बोली में ये दोनों ही ध्वनियां बहुत प्रचलित हैं) वरन् कुछ परिवर्तन बोली की अपनी ध्वन्यात्मक प्रवृत्ति के कारण होते हैं, ठीक उसी प्रकार से जैसे कि बोली की निकटतम उद्‌गम-भाषा के शब्दों में ध्वनि परिवर्तन हो जाते हैं। बहुत से विदेशी शब्दों में ध्वनि परिवर्तन मात्र वक्ता की व्यक्तिगत रुचि के कारण होते हैं। प्रस्तुत बोली के एक उदाहरण में *अंतजाम* (फ़ा० इंतज़ाम) शब्द प्रयुक्त मिलता है। इसका यह अर्थ नहीं कि बोली में इ ध्वनि नहीं है, और न इस ध्वनि-परिवर्तन (इ > अ) का कोई स्पष्ट ध्वन्यात्मक कारण ही मिलता है। इस प्रकार के ध्वनि-परिवर्तन वस्तुतः बोलने वालों की व्यक्तिगत रुचि तथा इच्छा पर निर्भर जान पड़ते हैं। वैसे बोली के एक दूसरे उदाहरण में *इंजाम्* (फ़ा० इल्ज़ाम) शब्द का प्रयोग भी मिलता है। इसके अतिरिक्त *बिसमार* का उच्चारण भी *बिसमार्* ही मिलता है *बसमार्* नहीं। बहुप्रचलित फ़ारसी शब्द *इंसाफ़* बोली में *इंसाफ़* के रूप में ही प्रयुक्त होता है।

प्रस्तुत संदर्भ में हम पहले प्रकार के ध्वनि-परिवर्तनों की ही चर्चा कर रहे हैं, जो ध्वन्यात्मक अभावों के कारण होते हैं। दूसरे वर्ग के ध्वनि-परिवर्तन सामान्य ध्वनि-परिवर्तनों के अन्तर्गत आते हैं।

६६. अंग्रेज़ी के मूल स्वरों में से ऍ प्रस्तुत बोली में नहीं मिलता। परन्तु इस ध्वनि से युक्त अंग्रेज़ी शब्द आगरा जिले की बोली में नहीं मिलते।

६७. अंग्रेज़ी के बहुसंख्यक संयुक्त स्वरों में से एक भी प्रस्तुत बोली में नहीं मिलता। (वस्तुतः आगरा जिले की बोली में संयुक्त स्वरों का प्रयोग ही नहीं होता) अंग्रेज़ी के संयुक्त स्वर एइ, ओउ, अइ, अउ, ऑंइ, इअ, एअ, ओअ, तथा उअ क्रमशः ए *ओ* ऐं औं *आ इय* ए *ओ* ऊ में परिवर्तित हो जाते हैं। परन्तु यह एक सामान्य प्रवृत्ति है। वस्तुतः इन संयुक्त स्वरों वाले शब्दों में से अधिकांश बोली में

प्रयुक्त नहीं होते। शिक्षित व्यक्तियों की बोली में प्रयुक्त होने पर वे प्रायः उपर्युक्त नियम का ही अनुसरण करते हैं। सामान्य जनता की बोली में परिवर्तन निम्न प्रकार से होते हैं—

एइ > ए — रेल्, मेल्, जेल्

ओउ > ओ — मौँटर, बोट्

अइ > ऍ — टॅम्

६८. अंग्रेज़ी की व्यंजन ध्वनियों में से प्, ब्, क्, ग्, म्, न्, ल्, स्, र्, य्, व् तथा ह् ध्वनियाँ प्रस्तुत बोली में मिलती हैं, अतः उनमें सामान्यतः कोई परिवर्तन नहीं होता—

पाकिट्	('pɔkit)
बोड्	(bɔ:d)
कालिज्	('kɔlidz)
गोल्	(goul)
मास्टर्	('ma:stɔ)
नोट्	(nout)
लॅट्	(lait)
सॅड्	(said)
रेल्	(reil)
यूनियन्	('Ju:nJɔn)
रेलवे	(reilwei)
होलपास्	(houldfa:st)

अंग्रेज़ी स्पर्श व्यंजन ट्, ड् वर्त्स्य हैं परन्तु प्रस्तुत बोली में इनका उच्चारण मूर्द्धन्य हो जाता है :—

टॅम्	(taim)
बोड्	(bɔ:d)

अनुनासिकों में कंठ्य सघोष ध्वनि को प्रायः अनुनासिक स्वर के सहारे उच्चरित किया जाता है।

अस्पष्ट ल् का उच्चारण सामान्य स्पष्ट ल् के रूप में होता है—

बोतल्	('bɔtl)

संघर्षी ध्वनियों में फ्, व्, थ्, श्, च्, ज् ध्वनियां क्रमशः फ् व् थ् स् च् ज् में परिणत हो जाती हैं—*फ़ल्लांग, बार्निस, थङ्ङ, सील्ड, चेयरमॅन, जज्*। द्, ज़् तथा ऱ्ह् ध्वनियाँ बोली में प्रयुक्त नहीं होतीं।

प्रस्तुत खण्ड में अंग्रेजी उद्धरणों को प्रायः डेनियल जोन्स की 'एन इंग्लिश प्रोनाउन्सिंग डिक्शनरी' (१९५४ ई०) के अनुसार अंकित किया गया है।

उच्चारण संबंधी अन्य विशेषताएं

६९. बोली में समीकरण (Assimilation) की प्रवृत्ति व्यापक रूप से मिलती है। समीकरण शब्दांत की त् अथवा न् ध्वनि के साथ अधिक होता है। समीकृत होने वाली मध्य ध्वनियों में न्, स्, र् तथा द् प्रमुख हैं। जैसे—*सेंत्ति, रत्ता, लत्त, घत्तु, मगर्री, ह्निन्नु, एक्कास्सी, जन्नि, बान्नि, दस्सन*।

७०. समीकरण के समान ही संधि की प्रवृत्ति भी अत्यन्त व्यापक है। उच्चारण के समय बहुत से शब्द व्याकरणात्मक दृष्टि से अलग-अलग होने पर भी ध्वन्यात्मक दृष्टि से एक हो जाते हैं—

फिस्साब	फिर् साब्
बिन्नें	बिन् ने
पांस्सैं	पांच् सैं
बातें	बात् हें
कात्वें	कातु हें
टोड़ारों	टोर् डारों
डगरियाउ	डगर् जाउ
माड्डारे	मार् डारे
चल्दए	चल् दए
बैंठाद्दई	बैंठार्दई
फेद्दर्ओं	फेर् दओं
डाज्जइए	डार जइए
आर्राति	आज् राति
पीलिलंगे	पी लिंगे
अभाल्	अभ् हाल
कहूठतु	कह् ऊठतु
ल्याऊ	लें आउ

७१. संयुक्त काल में मूल क्रिया तथा सहायक क्रिया की संधि प्रायः हो जाती है—जात्वें (जातु हें) जातो (जातु हो)।

७२. दो से अधिक शब्दों की संधि के उदाहरण भी मिलते हैं—

सिग्गरई	सिग् घर् की
ओंल्लेंलीनों	ओंर् ले लीनों

७३. कहीं-कहीं दो शब्दों में संधि करके फिर उनका रूप संक्षिप्तीकृत कर दिया जाता है, यह प्रवृत्ति अभ्यास (Reduplication) के अन्तर्गत प्रमुखतः मिलती है—

थुथ्थोरे	थोरे थोरे
दद्दस	दस दस
इतन्तनौं	इतनौं इतनौं

७४. उच्चारण के समय कुछ शब्दों में कुछ ध्वनियाँ बढ़ा भी ली जाती हैं, *भुराओं* (भोर) *असिय* (अस्सी) *आछी* (अच्छी)। इस प्रवृत्ति के अन्तर्गत द्वित्त (*चोट्टा, कल्लि*) तथा स्वर-भक्ति (*धरम्*) के भी उदाहरण मिलते हैं।

७५. बोली में ध्वनि लोप के उदाहरण भी मिलते हैं—

नाँज्	अनाज
पएँ	अपएँ
भिहाल्	अभिहाल्

७६. ध्वनिलोप के समान ही ध्वनिआगम के उदाहरण अपेक्षाकृत कम हैं—

सूघरों	सूधों
बज्जरूर्	जरूर्
आलकस्, आरकस्	आलस्

७७. किन्हीं-किन्हीं शब्दों के संक्षिप्त तथा दीर्घ दोनों ही रूप प्रचलित हैं—

आस्सु : आरकस (आलस)।

बोली में अपिनिहिति (epenthesis) के उदाहरण बराबर मिलते हैं—

बराइत्	बरात्
दबाइत्	दावात
देहाइति	देहाति
बरदाइस्ति	बरदास्त
उजियारौं	उजेरौं
नाँयनैं	नाँनैं
हालियत्	हालत्
गाउनौं	गातौं
पराँउँठौं, पिराँउँठी	पराँठौं

७८. स्वर अनुरूपता के उदाहरण अधिक नहीं मिलते—

इमिली	इमली
इमिरित्	अमिरित

७९. ध्वनि-विपर्यय के उदाहरण प्रायः मिलते हैं—

अकुताइ	उकताइ
छुकला	छिलका
कड़ोर्	करोड़
कुढ़ाई	कुल्हाड़ी
बल्दि	बदलि
माड़बारी	मारवाड़ी
गड़ुर्	गरुड़
हनाइबे	नहाइबे
खोंप्	फांक्

अंतिम उदाहरण में ध्वनियों का महाप्राण-अल्पप्राण क्रम यथावत् रहता है—

८०. बोली में ध्वनि-परिवर्तन के उदाहरण कई बार मिलते हैं। सब से प्रधान प्रवृत्ति अल्पप्राणीकरण (deaspiration) की है। यह प्रवृत्ति भी कई रूपों में परिलक्षित होती है। बहुत से शब्दों में स्वतंत्र ह् ध्वनि लुप्त हो जाती है, तथा प्रायः ह् का स्वर वाला अंश पूर्ववर्ती ध्वनि के साथ संयुक्त हो जाता है—

यां	यहां
मां	महां
कानीं	कहानीं
राते	रहाते
माराज	महाराज
तँसील्	तहसील
बारा	बारह

८१. कुछ उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं जहां स्वतंत्र ह् ध्वनि का पूर्ण लोप हो जाता है, अथवा य् में परिवर्तन हो जाता है—

ओ	हो
कई	कही
साऊकार्	साहूकार
रयो	रहो
त्याई	तिहाई

८२. अल्पप्राणीकरण की व्यापक प्रवृत्ति के अन्तर्गत वे शब्द भी आते हैं जिनमें से महाप्राण व्यंजनों का महाप्राण अंश लुप्त हो जाता है तथा अल्पप्राण अंश शेष रह जाता है—

ककई — कंघी
हला — भला
हात् — हाथ
संजा — संझा
भूंके — भूंखे
लुड़कि — लुढ़कि
गाड़ौं — गाढ़ौं
भावी — भाभी

प्रथम उदाहरण *ककई* (कंघी) में घ् ध्वनि अघोष और अल्पप्राण (घ्> ग्>क्) हो जाती है।

८३. महाप्राणीकरण के उदाहरण प्रायः कम हैं—

अभैं — अबैं
इखट्टौं — इकट्ठौं
गाढ़ी — गाड़ी

स्वतंत्र ह् ध्वनि के आगम के उदाहरण भी कम हैं—*सँहताइ* (सस्ताइ)।

८४. अल्पप्राण व्यंजन के बाद ह् ध्वनि होने पर प्रायः पहली ध्वनि महाप्राण हो जाती है तथा स्वतंत्र ह् ध्वनि का लोप हो जाता है—

झँरु — जँहँरु
भौंतु — बौंहौंतु
भौंरिया — बौंहौंरिया
भँरे — बँहरे

८५. *ल्* ध्वनि का र् में परिवर्तन होना (काजर् < काजल, बादर् < बादल, केरा < केला) तो ब्रजभाषा का एक सामान्य लक्षण है ही, कहीं कहीं र् के *ल् में* परिवर्तित हो जाने के भी उदाहरण मिलते हैं—*जरूलत्* : जरूरत्।

८६. *ल्* का न् में परिवर्तन बहुधा देखा जाता है—पर अधिकतर निम्न जातियों की बोली में—

नबंद्दारु — लंबद्दारु
चन्दओं — चलदओं
जन्दी — जल्दी
बान्टी — बाल्टी
ऊन्ति — ऊल्ति

कभी-कभी य् के पहले न् जोड़ दिया जाता है—*न्यौं* (यौं)।

८७. घोष ध्वनि का अघोष ध्वनि में परिवर्तन तथा अघोष ध्वनि का घोष ध्वनि में परिवर्तन—ये दोनों ही प्रकार बोली में मिलते हैं परन्तु सीमित रूप में।

मदति मदद्

आगास आकास्

पंगति पंक्ति

८८. ध्वनि का वर्ग की अंतिम अनुनासिक ध्वनि में बदल जाना भी कहीं-कहीं दिखाई देता है—

ख़रमूँजा खरबूजा

८९. मूर्द्धन्य ध्वनियों के पारस्परिक परिवर्तन के उदाहरण प्रायः मिलते हैं—

करुओं कड़ुओं

लिपिड़ि लिपिटि

९०. व्यंजन ध्वनियों का लोप तथा उस स्थल पर केवल स्वर के शेष रह जाने की भी प्रवृत्ति दिखाई देती है—

र् का लोप—

गड़इया गड़रिया

हमाए हमारे

सबई सबरी

न् का लोप—

अपई अपनी

अपएँ अपनें

क् का लोप—

सिग्गरई सिग् घर् की

च् का लोप—

इल्लाए चिल्लाए

य् का लोप—

आदि यादि

आर् यार्

इसी प्रकार से ह् के लोप का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है (§८१)।

९१. बोली के ध्वनि समूह तथा ध्वन्यात्मक प्रकृति का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि उसमें उच्चारण-सुविधा का विशेष ध्यान रक्खा जाता है। रेफ़ तथा संयुक्त ध्वनियों को यथासंभव बचाया जाता है। *दरब्* (द्रव्य) *दस्सन* (दर्शन) *सरग* (स्वर्ग) *इमिरित* (अमृत) *गाद्द* (गार्ड) जैसे ध्वन्यात्मक परिवर्तन बोली

की प्रकृति के अनुकूल हैं। रेफ़ युक्त शब्दों का उच्चारण समीकरण की सहायता से होता है—उद्द (उर्द) *बच्छी* (बर्छी) *सद्दी* (सर्दी)।

९२. किसी भाषा अथवा बोली के ध्वन्यात्मक गठन के आधार पर प्रायः उस बोली को श्रुति-सुखद अथवा कर्ण-कटु कहा जाता है। परम्परा से ब्रजभाषा को अत्यन्त मधुर माना गया है। परन्तु ब्रजभाषा का यह आगरा-रूप अपने उच्चारण में श्रुति-सुखद नहीं कहा जा सकता। बोली में सामान्यतः दीर्घ तथा अर्द्धविवृत स्वरों की प्रधानता है। व्यंजनों में समीकरण की प्रवृत्ति व्यापक है।

ध्वनि-क्रम तथा अक्षर

९३. ध्वनिक्रम की दृष्टि से एक शब्द में तीन से अधिक स्वर तथा दो से अधिक व्यंजन नहीं आते। शब्द के प्रारम्भ में एक से अधिक व्यंजन नहीं आते, यद्यपि य् तथा व् के साथ कुछ व्यंजनों का संयोग संभव है—*त्याई, न्यारे, ग्यारा,* ह्वैं। शब्द का आरंभ स्वर अथवा व्यंजन किसी से हो सकता है, और इसी प्रकार अंत में भी कोई ध्वनि आ सकती है।

९४. बोली में अक्षर (syllable) के निम्नलिखित रूप प्रचलित हैं—

अ॑ — (आ)

अ॑ अ — (आउ)

अ ह — (इत्) + तौं – इत्तौं – संयुक्त व्यंजन के पूर्व का स्वर तथा उसका आधा व्यंजन—यह अवरुद्ध अक्षर (closed syllable) का उदाहरण है।

अ ह — (ऊन्)

ह अ — (जि)

ह अ॑ — (खा)

ह अ अ — (दइ)-या

ह अ ह — (हर्)

ह ह अ॑ — (क्यौं)

(प्रस्तुत विवेचन में *अ* अ॑ तथा *ह* चिन्ह क्रमशः ह्रस्व स्वर, दीर्घ स्वर तथा व्यंजन के लिए प्रयुक्त हुए हैं।)

दो अक्षरों से बने हुए शब्द अधिक प्रचलित हैं। नौ से अधिक ध्वनियों से बने हुए शब्द बोली में कम मिलते हैं।

संज्ञा

९५. आगरा जिले की बोली में औंकारांत मूलरूप संज्ञाएं अपेक्षाकृत कम हैं, जो सामान्यतः ब्रजभाषा का एक विशिष्ट लक्षण मानी जाती हैं। अधिकांश *अकारांत* (वस्तुतः व्यंजनांत) रूपों के अंत में एक हल्की *उ* अथवा *इ* ध्वनि मिलती है। इनमें से पुल्लिग रूप उकारांत तथा स्त्रीलिंग रूप इकारांत हैं। बोली में *आकारांत* रूप बड़ी संख्या में हैं, जैसे—*लड़िका, मौंड़ा, गौंड़ा, गढ़ा, पला।*

९६. संज्ञाओं के मूल रूप इस प्रकार हैं—

—अ	स्याल—बहुत कम संज्ञाएं अकारांत हैं, अधिकांश संज्ञाएं व्यंजनांत हो गई हैं। प्रायः दीर्घ संयुक्त व्यंजन के बाद की अंतिम ध्वनि स्वरांत रह सकी है।
—आ	गाढ़ा
—इ	गवांरि
—ई	उन्हारी
—उ	नाउ
—ऊ	ब्यारू
—ओ	डुको
—औं	बूरौं

९७. आकारांत तथा औंकारांत संज्ञाएं विकृत रूप में एकारांत हो जाती हैं—*गाढ़ा, गाढ़े; बूरौं, बरे।*

९८. जैसा ऊपर कहा गया, अधिकांश अकारांत संज्ञाएं व्यंजनांत हो गई हैं परन्तु उन्हें बोलते समय अंत में ह्रस्वतर उकार अथवा इकार का सहारा लिया जाता है—

घरु, फकीरु, दिनु, सैंरु (पुल्लिग)

पोखरि, आंखि, राति, चालि (स्त्रीलिंग)

ह्रस्वतर उकार पुल्लिग संज्ञा शब्दों के अंत में मिलता है तथा ह्रस्वतर इकार स्त्रीलिंग शब्दों के अन्त में।

९९. कुछ संज्ञाओं के एक से अधिक रूप समान भाव से व्यवहृत होते हैं—*गँहदुआ, गँहदू, घौंदआ, घौंद।*

१००. कुछ विशेषणों तथा क्रिया विशेषणों का प्रयोग संज्ञा के समान होता है—*सबन्* कूं आगरे जेल में भेद्ओं (विशेषण), *सां तैं* चलि भए (क्रिया विशेषण)।

१०१. कुछ उदाहरण (-बौं प्रत्ययांत क्रियार्थक संज्ञा से भिन्न) क्रिया से बनी संज्ञा के भी मिलते हैं—*पीसनौं, गाउनौं, बोलनैं।*

लिंग

१०२. प्रस्तुत बोली में दो लिंग होते हैं—पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग। प्राणि-वाचक संज्ञाएं अपने लिंग भेद के अनुसार व्याकरणात्मक लिंग रखती हैं; अप्राणि-वाचक संज्ञाएं भी पुल्लिग अथवा स्त्री लिंग के ही अंतर्गत रक्खी जाती हैं, यद्यपि उनका यह विभाजन सदैव तर्कसंगत नहीं रहता। *लोग्, मौंड़ा, हाथी, स्यारु, घौंदू,* चौंखरौं पुल्लिंग हैं तथा *लुगाई, मौंड़ी, हथिनी, स्यारनी, घौंदुनियां, चुखरिया,* स्त्रीलिंग हैं। कुछ प्राणिवाचक संज्ञाओं का लिंग अनिश्चित रहता है। लोग अपनी रुचि के अनुसार इन संज्ञाओं का रूप निर्धारित करते हैं और तदनुसार उनका उच्चारण भी। *बद्वा* तथा *बधिया* मूलतः एक ही संज्ञा रूप हैं, यद्यपि पूर्वलिखित दोनों रूपों में से पहला पुल्लिग है, तथा दूसरा स्त्रीलिंग। कुछ प्राणिवाचक संज्ञाएं केवल पुल्लिग में रहती हैं, जैसे—*चोर् किसान्, गीध्* । और कुछ केवल स्त्रीलिंग में *पिड़कुलिया, मछरी।*

१०३. अप्राणिवाचक संज्ञाओं के लिंग-निर्धारण के सामान्यतः कोई विशिष्ट सिद्धान्त नहीं दिखाई देते। वैसे प्रायः आकारांत, उकारांत और औंकारांत संज्ञाएं पुल्लिग होती हैं, तथा इकारांत और ईकारांत संज्ञाएं स्त्रीलिंग होती हैं। *गौंड़ा, घरु,* और *बूरौं* पुल्लिग हैं तथा *पोखरि* और *क्यारी* स्त्रीलिंग हैं। वस्तुतः यही नियम प्राणिवाचक संज्ञाओं के व्याकरणात्मक लिंग-निर्धारण के लिए भी लागू होता है, यद्यपि दोनों प्रकारों में अपवादों की कमी नहीं है। सामान्यतः अप्राणिवाचक पदार्थों को पुल्लिग के अन्तर्गत रखने की ही प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है।

१०४. कुछ अप्राणिवाचक संज्ञाओं के रूप दोनों लिंगों में मिलते हैं। पुल्लिग से स्त्रीलिंग रूप बनता है। परन्तु यहां लिंग-परिवर्तन वस्तुतः उनकी लघुता का द्योतक है। *गढ़ा* पुल्लिग है तथा *गढ़इया* स्त्रीलिंग है। स्पष्ट ही *गढ़इया* शब्द स्त्रीत्व का द्योतक न होकर लघुत्व का अधिक द्योतक है। वैसे सामान्यतः अप्राणिवाचक संज्ञाएं प्रायः एक ही लिंग में रहती हैं।

१०५. अकारांत (प्राय: व्यंजनांत) संज्ञाओं का स्त्रीलिंग रूप बनाने के लिए प्राय: *इन-इनि* (स्त्री) तथा–*इनी* प्रत्यय लगाते हैं। *पंडित : पंडिताइनि, लोग: लुगाई, सांप : सांपिन्* अथवा *सांपिनि, मोर : मोरनी, भूत् : भूतिनी*

आकारांत संज्ञाओं में—*अनि* (नि)–*अनिया-इया* तथा *ई* प्रत्यय जुड़ते हैं।

गड़रिया—*गड़िरिया, घोंदुआ : घोंदुनियाँ, घोड़ा : घुड़िया, मोंड़ा, मोंड़ी*।

ईकारांत संज्ञाओं में—*इनी* प्रत्यय जुड़ता है, *हाथी : हथिनी*।

उकारांत संज्ञाओं में—*नी* प्रत्यय जुड़ता है, *स्यारु : स्यारनी*।

ऊकारांत संज्ञाओं में—*अनियां* तथा *अनी* प्रत्यय जुड़ता है—*गेंहदू : गेंहदुनियाँ, साधू : साधुनी*।

ओंकारांत संज्ञाओं में—*इया* प्रत्यय जुड़ता है *चौंखरों : चुखरिया*।

स्त्रीलिंग बनाते समय प्राय: संज्ञा रूपों के प्रथम दीर्घ स्वर को ह्रस्व कर दिया जाता है—तथा ए, ओ को क्रमश:—इ, उ में परिणत कर दिया जाता है। *लोग : लुगाई, घोड़ा : घुड़िया, चौंखरों : चुखरिया, हाथी : हथिनी*।

१०६. संज्ञा के अतिरिक्त ओंकारांत विशेषणों, क्रिया के कृदंतीय रूपों तथा एक परसर्ग (कों) में भी लिंग-परिवर्तन होता है। *कारों : कारी, चल्तो : चल्ती, कों : की*। संज्ञा के लिंग को समझने के लिए इन संबद्ध व्याकरण-रूपों से सहायता मिलती है। संबंधवाची सर्वनाम अथवा सार्वनामिक विशेषणों में भी लिंग परिवर्तन होता है—*तिहारों : तिहाई*।

१०७. बोली में व्यवहृत विदेशी शब्दों का लिंग-निर्धारण प्राय: बिना किसी नियम के होता है। *इसकूल्* पुल्लिंग है, *इट्टेसन्* स्त्रीलिंग है। फ़ारसी के शब्द प्राय: अपने मूल लिंग में ही व्यवहृत होते हैं—*दरोगा* (पुल्लिग) *अज्जी :* (स्त्री)।

वचन

१०८. दो वचनों का प्रयोग होता है—एकवचन तथा बहुवचन। सामान्यत: —ए अथवा—एं जोड़ कर बहुवचन बनाया जाता है। बहुत से रूपों में (विशेषत: ईकारांत रूपों में) अंतिम ध्वनि को अनुनासिक करके बहुवचन बनता है। कुछ अन्य रूपों में एकवचन तथा बहुवचन एक ही होते हैं, तथा कुछ शब्दों को बहुवचन बनाया ही नहीं जाता।

१०९. अकारांत (प्राय: व्यंजनांत) स्त्रीलिंग मूल रूप संज्ञा का बहुवचन बनाते समय प्राय: —एं जोड़ा जाता है—*मेंड़ : मेंड़ें*। विकृत रूप में—*अनि* जुड़ता है—*मेंड् : मेंड़नि*।

आकारांत शब्दों का बहुवचन—ए जोड़ कर बनता है, *गाढ़ा : गाढ़े*। विकृत रूप में—*अनि* जुड़ता है, *गाढ़ा : गाढ़नि*।

इकारांत शब्दों का बहुवचन बनाते समय–*एँ* जोड़ा जाता है—*पोखरि : पोखरें*। *पोखरिनि* (विकृत रूप) में—इनि जोड़ा गया है।

ईकारांत शब्दों की अंतिम ध्वनि अनुनासिक कर दी जाती है, *लुगाई : लुगाईं*। विकृत रूप में—*इनि* जोड़ा जाता है, *लुगाई : लुगाइनि*।

औंकारांत रूपों में अंतिम औं ए में परिणत हो जाता है, *थपकरौं : थपकरे*। विकृत रूप में औं ध्वनि निकल जाती है—*अनि, एनि, इनि* जुड़ते हैं। *थपकरौं : थपकरनि, घूरौं : घूरेनि, चौंखरौं : चौंखरिनि*।

११०. कुछ शब्दों के एकवचन तथा बहुवचन रूप समान होते हैं—*पांउं* (*पांउं धड़औं : द्वै पांउं* धरे औं पौंहचे) *घर*।

१११. कुछ प्राणहीन वस्तुओं के द्योतक शब्दों के बहुवचन बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, वे एकवचन में ही व्यवहृत होते हैं—*भाउ, चून, ब्यारू*।

११२. संज्ञा के अतिरिक्त सर्वनाम, विशेषण, परसर्ग तथा कृदंतीय क्रिया रूपों में वचन के अनुसार परिवर्तन होते हैं। *बुः बे, कारौं : कारे, कौं : के, चलौं : चले*। जब विना किसी प्रत्यय के लगे संज्ञा बहुवचन में होती है तो इन संबद्ध व्याकरण रूपों से उस संज्ञा के वचन को समझा जा सकता है।

रूपरचना

११३. प्रयोग के समय संज्ञा के दो रूप हो सकते हैं—मूल रूप तथा विकृत रूप। दो वचनों का ध्यान रखते हुए प्रत्येक संज्ञा के चार रूप होने चाहिए। परन्तु प्रत्येक संज्ञा शब्द के इस प्रकार चार रूप प्रायः नहीं होते। एकवचन में मूल रूप तथा विकृतरूप के रूप प्रायः एक ही होते हैं। बहुवचन के रूप एकवचन के रूपों से भिन्न हो सकते हैं तथा बहुवचन के मूल रूप तथा विकृत रूप परस्पर अलग-अलग हो सकते हैं।

११४. मूल रूप का प्रयोग कर्ता कारक तथा संबोधन में होता है, परसर्ग के साथ भी और परसर्ग रहित भी। *मौंड़ा घरैं गऔं, मौंड़ा नैं ब्यारू कल्लई, मौंड़ा तू खाइ लैं*।

११५. विकृत रूप का प्रयोग शेष कारकों में होता है। विकृत रूप बनाने के लिए एकवचन संज्ञाओं में—*ए* प्रत्यय जोड़ा जाता है तथा बहुवचन की संज्ञाओं में —*अन्* तथा –*इनि* (स्त्रीलिंग) प्रत्यय साधारणतः जोड़े जाते हैं—*डाँड़े पैं चढ़ि गए, लड़िकन् सौं कई, थारिनि मैं परसि* दऔं। कर्ता तथा संबोधन को छोड़ कर संस्कृत के शेष सभी कारकों के अर्थ विकृत रूप संज्ञा में परसर्ग जोड़ कर स्पष्ट किए जाते हैं।

मूलरूप एकवचन

११६. ये रूप स्वरांत अथवा व्यंजनांत हो सकते हैं—*भाउ, नोंरा, हाथ्*। अकारांत रूप व्यंजनांत हो गए हैं (*भेड्*) अधिकांश ऐसे रूपों के अन्त में ह्रस्वतर उ (पुं०) अथवा –इ (स्त्री०) जोड़ दिया जाता है। *सैंग, पारि*। कुछ रूप व्यंजनांत तथा ह्रस्वतर उकारांत अथवा इकारांत दोनों ही रूपों में प्रयुक्त होते हैं–*पान्, पानु*।

आगरा जिले की बोली में मूल रूप संज्ञाएं ओंकारांत बहुत अधिक नहीं हैं। औकारांत संज्ञाएं तो बहुत कम हैं। प्रायः मूल रूप एकवचन संज्ञाएं आकारांत, इकारांत, उकारांत अथवा व्यंजनांत हैं।

मूलरूप बहुवचन

११७. जैसा ऊपर कहा जा चुका है, अधिकांश पुल्लिग मूल रूप एकवचन के रूप मूल रूप बहुवचन के लिए नहीं बदलते। पुल्लिग आकारांत *लड़िका* (मू० ए०) : *लड़िका* (मू० ब०) पुल्लिग अन्य *दिन्* (मू० ए०) *दिन्* (मू० ब०)। पुल्लिग ओंकारांत के रूप बहुवचन में एकारांत हो जाते हैं, *डाँड़ों* (मू० ए०), *डाँड़े* (मू० ब०)। स्त्रीलिंग के रूप बहुवचन में प्रायः बदल जाते हैं। स्त्रीलिंग ईकारांत बहुवचन में ईकारांत हो जाते हैं—*थारी* (मू० ए०) : *थारीं* (मू० ब०)। स्त्रीलिंग के अन्य रूपों में बहुवचन बनाने के लिए–एं जोड़ा जाता है—*बात्* (मू० ए०) : *बातैं* (मू० ब०)।

विकृत रूप एकवचन

११८. विकृत रूप एकवचन के रूप प्रायः मूल रूप एक वचन जैसे ही रहते हैं। पुल्लिग आकारांत *लड़िका* (मू० ए०) *लड़िका* (वि० ए०) पुल्लिग अन्य *दिन्* (मू० ए०) *दिन्* (वि० ए०) स्त्रीलिंग ईकारांत *थारी* (मू० ए०) *थारी* (वि० ए०) स्त्रीलिंग अन्य बात (मू० ए०)–*बात्* (वि० ए०) ओंकारांत रूप विकृत रूप एकवचन में बदल जाते हैं। ओंकारांत मूल रूप एकवचन को विकृत रूप बनाने के लिए ओंकारांत रूप को एकारांत कर दिया जाता है—*डाँड़ों* (मू० ए०) *डाँड़े* (वि० ए०)।

विकृतरूप बहुवचन

११९. विकृत रूप बहुवचन के रूप प्रायः शेष तीनों रूपों से भिन्न रहते हैं। पुल्लिग आकारांत *लड़िका* (वि० ए०), *लड़िकन* (वि० ब०) पुल्लिग अन्य *घर* (वि० ए०), *घरनि* (वि० ब०) स्त्रीलिंग ईकारांत *थारी* (वि० ए०), *थारिनि*, (वि० ब०) स्त्रीलिंग अन्य *बात्* (वि० ए०), *बातनि* या *बातिन्* या *बातन्*। पुल्लिग ओंकारांत *डाँड़ों* (वि० ए०) *डाँड़नि* (वि० ब०)। विकृत रूप एकवचन

से विकृत रूप बहुवचन बनाने के लिएसंज्ञा में—*अन्,-इन्,-अनि,-इनि,-एनि* प्रत्यय जोड़े जाते हैं—

१२०. कुछ विशिष्ट संज्ञाओं की रूप-रचना नीचे दी जाती है—

	पुल्लिग			स्त्रीलिंग	
	आकारांत	*औंकारांत*	*अन्य*	*ईकारांत*	*अन्य*
ए० व० मू०	लड़िका	डाँड़ौं	घर्	थारी	बात्
वि०	लड़िका	डाँड़े	घर्	थारी	बात्
ब० व० मू०	लड़िका	डाँड़े	घर्	थारीं	बातें
वि०	लड़िकन्	डाँड़ेनि	घन्नि	थारिनि, थान्नि	बातिन्, बातनि, बातन्

१२१. संज्ञा के अतिरिक्त सर्वनाम, विशेषण तथा परसर्ग के कुछ रूपों में विकृत रूप के लिए परिवर्तन होता है—*मैं, : मो, कारौं, : कारे, कौं : के*।

रूपरचना के उदाहरण

१२२. मूल रूप तथा विकृत रूपों के प्रयोग निम्नलिखित ढंग से होते हैं—

(क) मूलरूप

एकवचन बहुवचन

१—परसर्ग रहित—वु मौंड़ा फिरि घर् गओं, दौं भइया रहिबों करैं

२—परसर्ग सहित—बा मौंड़ा नैं खाइबे कौं खाओं, पंछिन नैं कई अच्छी बातें।

३—संबोधन—बानैं कई मौंड़ा नैं क जाइ उठाइ लैं, मौंड़े हौं हुँयन अइयो।

(ख) विकृत रूप

१—परसर्ग रहित—भरिक् ढकेलौं गाइ, बा डांड़े चढ़ि गए, खूंटनि बांधौं पोंहे।

२—परसर्ग सहित—धंधें सैं लगैं तौं नींकी हैं, पंछिन पैं करबाइ दैंगो।

विशिष्ट संयोगात्मक रूप

१२३. संज्ञा के विशिष्ट संयोगात्मक रूप बोली में काफ़ी मिलते हैं—

भूँकन रोज मरैं (करण-से)
हनाइबे आएं (के लिए)
तू *सामानैं* घर कौं लैं जा (कर्म-को)
जाइ *घरैं* पोंहचाइ दैं (कर्म-को)
लंबदारैं सताउतैं (कर्म-को)
ब *द्वारैं* ठाढ़ों हैं (अधिकरण-पर)

१२४. जैसा पहले ही उल्लेख किया गया, कुछ विकृत रूप संज्ञाओं में बिना परसर्ग जोड़े ही अर्थ स्पष्ट हो जाता है—काऊ *जनम* नँ होंइँ किसान।

१२५. संज्ञा की रूप रचना में उपसर्गों तथा प्रत्ययों का भी प्रयोग होता है (§१६४) कुछ विशेषण तथा क्रियाविशेषण संज्ञा की भांति प्रयुक्त होते हैं। (§१००+)

सर्वनाम

१२६. सर्वनामों के मूल रूप, विकृत रूप तथा अन्य कारकों के संयोगात्मक रूप नीचे दिए जा रहे हैं। उच्चारण में समानता रखने वाले रूप कोष्ठक में दिए गए हैं। उत्तम पुरुष सर्वनामों के चार प्रकार हैं—उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष, सामान्य तथा आदरार्थक, तथा अन्य पुरुष।

उत्तम पुरुष सर्वनामों के निम्नलिखित रूप प्रचलित हैं—

	ए० व०	ब० व०
मूल रूप—	मैं, हूं, हौं, हम्	हँम्
वि० रूप—	मो, हम्	हँम्
कर्म + संप्र०—	मोइ, हमैं	हँमैं, हँमैंन्
संबंध—	मेरे, मेरौं, मेए, मेरैं, मैएं, मेरी (स्त्री०)	हमारे, हमाए, हमारौं, हमाओं हमारी (स्त्री०)

हमाई (स्त्री०) हमारैं, हमाएँ (स्था० वा०)

१२७. उपर्युक्त रूपों में से संबंध के रूप वस्तुतः सार्वनामिक विशेषण हैं। वास्तविकता तो यह है कि संबंध के समस्त सार्वनामिक रूप सार्वनामिक विशेषण भी हैं। अतः इन रूपों की विवेचना विशेषण के प्रसंग में की जायगी। (§१४३)

मैं का प्रयोग बहु प्रचलित है। कदाचित् स्टेंडर्ड हिंदी के प्रभाव से यह धीरे-धीरे ब्रज के अपने रूप *हौं* का स्थान ग्रहण करता जा रहा है। वैसे प्राचीन ब्रज में भी *मैं* का प्रयोग मिलता है। आधुनिक समय में इसकी व्यापकता बढ़ गयी है—तौं *मैं* ऊं यइं सोइ जाऊं। यह स्मरणीय है कि इस *मैं* का स्थान भी धीरे धीरे *हम्* लेता जा रहा है। वस्तुतः उत्तम पुरुष एक वचन के लिए प्रायः *हम्* का ही प्रयोग अधिक होता है।

हूं का प्रयोग अपेक्षाकृत सीमित है—जाइ तौं *हूं* गाड़ि आओ। जिले के पश्चिमी भाग में *हूं* का प्रयोग अधिक है। पूर्व में *हौं* प्रयुक्त होता है।

हौं का प्रयोग काफ़ी होता है, यद्यपि आधुनिक बोली में इसका स्थान *मैं* अथवा *हम्* ग्रहण करता जा रहा है। फिर भी अशिक्षित तथा स्टेंडर्ड हिंदी के प्रभाव से अपेक्षाकृत दूर रहने वाले व्यक्तियों की बोली में *हौं* का ही अधिक प्रयोग मिलता है—बानैं कई कि *हौं* नाँएँ बचाउतु।

उत्तम पुरुष एकवचन सर्वनाम का विकृत रूप मो है। यह रूप बहुप्रचलित है यद्यपि इसके स्थान पर बहुवचन के विकृत रूप *हँम्* के प्रयोग की प्रवृत्ति धीरे-धीरे विकसित हो रही है। *मो* पै जए पुरानों एक पिछौंरा हँगों गाड़े कों।

मोइ का प्रयोग संप्रदान तथा कर्म के अर्थ में होता है—*मोइ* कछु दै दै। तू *मोंइ* जापैं तैं बचाइ लैं।

१२८. उत्तम पुरुष बहुवचन के रूप *हम्* का प्रयोग अब कदाचित् सर्वाधिक होता है, क्योंकि यह बहुवचन के मूल रूप तथा विकृत रूप के लिए तो प्रयुक्त होता ही है साथ में एकवचन के मूल रूप तथा विकृत रूप में भी इसका प्रयोग धीरे-धीरे बढ़ रहा है।

	ए० व०	ब० व०
मूल रूप—	धोंदू नें कई कि हम् त्याओं दोउन कों न्याउ करेंगे।	चलों हम् ई चलि कें देखें
वि० रू०—	हमें नाँईं चँइयतीं	हम् पै का धरों हें।

बहुवचन के रूप *हम्* के साथ प्रायः *लोग* जोड़ दिया जाता है—*हम् लोग* जाते, *हम् लोगनि* कों बुरों हाल हें।

संप्रदान तथा कर्म के अर्थ में *हमें* का प्रयोग होता है—*हमें* पालागन नाँएँ करतु। रुपिया पइसा *हमें* दै देउ। कभी-कभी *हमें* के आगे एक निरर्थक न जोड़ दिया जाता है—न्हौंरे नें कई गइया *हमेंन* दै देउ।

संबंधवाची सर्वनामों में *मोरें*, मोएँ, *हमारें* या *हमाएँ* का प्रयोग विशिष्ट है।

इन सर्वनामों के आगे संज्ञा लुप्त रहती है तो वे स्थान बोधक हो जाते हैं—*मेरें* का धरों हें, ठाकुर्नें कई कि *हमाएँ* कोऊ नाँएँ आओं। शेष संबंधवाची सर्वनामों की चर्चा विशेषणों के अन्तर्गत होगी।

१२९. मध्यम पुरुष (सामान्य) सर्वनामों के निम्नलिखित रूप प्रचलित हैं—

	एकवचन	बहुवचन
मूल रूप—	तू, तूं, तुम्, तैं, (नें के साथ प्रयुक्त)	तुम्
वि० रूप—	तो, तुम्	तुम्
कर्म+सं०—	तोइ	तुमें, तुमेंन्
संबंध—	तिहारे, तिहाए, तेरों, तिहारों, तुमाओं, त्यारों, त्याओं, तिहाओं, तुमाए, त्यारे, तुमाई, तिहाई, त्याई (स्त्री)	तिहारे, तिहाए, तुमाए, तुमाओं, तुमाई, तिहाई, त्याई, (स्त्री) तिहाएँ, त्याएँ, तुमाएँ (स्था० वा०)

मध्यम पुरुष मूल रूप एकवचन सर्वनाम *तू* का प्रयोग अपेक्षाकृत कम होता

है—तू यां कँसाँ सोई रओं हें। तू के अनुनासिक रूप तूं का भी प्रयोग होता है—तूं सुन लें री मइया।

तुम्—का प्रयोग कदाचित् बढ़ रहा है। इसका एक प्रमुख कारण स्टेंडर्ड हिन्दी का प्रभाव हो सकता है—जाओं बाजार सें तुम् जलेबी लें आओं।

मध्यम पुरुष मूल रूप एकवचन सर्वनामों में एक रूप तैं का मिलता है। तूं के साथ नैं परसर्ग का प्रयोग होने पर सम्भवतः साहचर्य के कारण तूं तैं हो जाता है। नैं परसर्ग के बिना तैं का प्रयोग नहीं मिलता—तैं नैं मोसों कहि दई सो बहू लें आओं।

तो का प्रयोग वि० रू०, एकवचन में होता है—तो पैं काहें। विकृत रूप के लिए भी तुम् का प्रयोग होता है। तुम् सों कहि गई।

तोइ का प्रयोग संप्रदान अथवा कर्म के लिए होता है—तोइ फरिया लें देंउंगो, लक्की मैंनें तोइ दीनीं।

बहुवचन के मूल रूप में तुम् का प्रयोग होता है—तुम् मारोंगे जाइ। विकृत रूप में भी तुम् का प्रयोग होता है—तुम् में इत्ती ताकति नाँएँ। बहुवचन के इन रूपों में तुम् के बाद प्रायः लोग् जोड़ दिया जाता है। तुम् लोग् जात होउ तों जाउ, तुम् लोगनि कों अक्कल नाँएँ।

तुमैं का प्रयोग बहुवचन सम्प्रदान तथा कर्म के लिए होता है— तुमैं आंम दिबाइ देंइं, तुमैं रुपिया को देइगों। तुमैं के आगे कभी-कभी निरर्थक न् जोड़ देते हैं— अभें बताइ देंहें तुमेंन्

सम्बन्धवाची रूपों में तिहाएँ, त्याएँ, तुमाएँ स्थानवाची हैं— आजु तुमाएं खांइगे।

१३०. मध्यम पुरुष (आदरार्थक) रूपों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम है। प्रायः शिष्ट वार्तालापों में अथवा कथाओं में इसका प्रयोग मिलता है।

	एक वचन	बहु वचन
मू० रूप	आपु	आपु
वि० रूप	आपु	आपु

आदरार्थक के चारों रूपों में आपु का ही व्यवहार होता है—आपु कां जातों, आपु के ई खेत एँ माराज, आपु कातों तों ठीक हें, आपु के लेंई हैं। बहुवचन के रूपों में आपु के बाद प्रायः लोग् जोड़ दिया जाता है—आप् लोग् ठाकुर हैं, आप् लोगनि के ई खेत हैं जे। लोग् शब्द के जोड़ने पर आपु को व्यंजनात (आप्) कर दिया जाता है।

वस्तुतः सामान्य वार्तालाप में तुम् आदरार्थक है, तथा तू का प्रयोग सामान्यतः

होता है। *आप्* अथवा *आपु* का प्रयोग सामान्य बोली का स्वाभाविक रूप नहीं जान पड़ता।

१३१. अन्य पुरुष सर्वनाम तथा निश्चयवाचक दूरवर्ती के सर्वनामों के रूप एक से ही हैं। पुरुषवाची सर्वनामों का प्रयोग सामान्यतः मनुष्यों-स्त्रियों के लिए होता है, निश्चयवाचक दूरवर्ती सर्वनाम पशु पक्षियों अथवा अप्राणवाचक संज्ञाओं के लिए व्यवहृत होते हैं।

	एकवचन	बहुवचन
मू० रूप	बु (ब्)	बे
वि० रूप	बा, ग्वा	उन, बिन् (विनि)
कर्म संप्र०	वाइ (बाएँ)	उनैं, बिनैं, बिनैंन्

बु, ब् का प्रयोग मूल रूप एकवचन के लिए होता है—बु जाइकें हवल्दार ह्वै गओ, ब् मंतें चल्दओ। बु और ब् में वस्तुतः उच्चारण का ही अन्तर है।

बा का प्रयोग विकृत रूप के लिए होता है *बा* पै बड़ी कंगाली ई। ऐत्मादपुर के एक नमूने में *ग्वा* का भी प्रयोग मिलता है—*ग्वा* कौं पांएँ पकल्लओ।

बाइ अथवा *बाएँ* का प्रयोग कर्म तथा सम्प्रदान के लिए होता है— तब *बाइ* मालिम परी, *बाएँ* कछू नाँएँ दओ।

बहुवचन मूल रूप में *बे* का प्रयोग होता है *बे* अपने घर पौं चीं।

उन्, बिन् (*बिनि*) का प्रयोग विकृत रूप के लिए होता है—उन् पै कछु हो, नेंई। *बिन्* में कोऊ लड़ाई किस्सा ह्वै गओ।

उनैं, बिनैं, बिनैंन् का प्रयोग कर्म तथा सम्प्रदान के लिए होता है—उनैं अंधेरौं ह्वै गओ गैंल मैं, बिनैं चोर मिले, एक रैंऊंजा मिलौं बिनैंन। अंतिम उदाहरण के *बिनैंन्* में न् निरर्थक ही जोड़ा गया है।

बहुवचन के इन समस्त रूपों का प्रयोग एकवचन में भी होता है। पुरुषवाची सर्वनामों में सर्वत्र यही प्रवृत्ति दिखाई देती है।

अन्य पुरुष के मूल रूप तथा विकृत रूप के समस्त रूप सार्वनामिक विशेषणों की भांति भी प्रयुक्त होते हैं।

१३२. निश्चयवाचक निकटवर्ती सर्वनामों के रूप निम्नलिखित हैं—

	एकवचन	बहुवचन
मूल रूप	जि (ज्)	जे
वि० रूप	जा, या, ता,	इन् (इनि) जिन् (जिनि)
कर्म संप्र०	जाइ (जाएँ) याइ	इनैं, जिनैं (जिन्हैं) जिनैंन्

जि (ज्) का प्रयोग मूल रूप एकवचन के लिए होता है—*जि* सोइ गओ।

जा का प्रयोग विकृत रूप के लिए होता है—*जा* कौं ठीकु ई नाँनैं। पश्चिमी

उपरूप में यह प्रयोग *या* हो जाता है। जिस के अर्थ में *ता* का भी प्रयोग होता है—*चाँइता* खेत में चाँइ कछू खाऔं।

जाइ (जाएँ) का प्रयोग कर्म तथा संप्रदान के लिए होता है—*जाइ* द्वै रुपिया दें देउ, *जाइ* जुहारौं। किरावली के एक नमूने में *याइ* का प्रयोग मिलता है—*याइ* घर में हों आउन दें। यह संभवतः निकटवर्ती मथुरा की बोली के प्रभाव के कारण है।

बहुवचन के रूपों में मूल रूप के लिए *जे* का प्रयोग होता है—*जे* मान्त नाँएँ।

इन् (इनि) *जिन्* (जिनि) का प्रयोग विकृत रूप के लिए होता है—*इनि* पै खेतु नाँएँ, *जिनि* कौं ऐंसौं अंतजाम बंधनौं चँइयें।

इनें, *जिनें* (जिन्हें) का प्रयोग कर्म तथा संप्रदान के लिए होता है—*इनें* गारीं मन्देउ, *जिनें* कछू नाँएँ मिलौं। *जिन्* के आगे निरर्थक *न्* जोड़ दिया जाता है—कछु दें देउ *जिनैंन्*।

इस वर्ग के मूलरूप तथा विकृत रूप के रूप सार्वनामिक विशेषण की भांति भी प्रयुक्त होते हैं। (§१४३)

बहुवचन के कुछ रूपों का प्रयोग एकवचन में भी होता है।

१३३. अनिश्चयवाचक सर्वनामों के रूप निम्नलिखित हैं—

	एकवचन	बहुवचन
मू० रूप	कोऊ	कोई, कोऊ
वि० रूप	काऊ	. . .
कर्म + संप्र०	काऊएँ	. . .

कोऊ का प्रयोग मूल रूप एकवचन के लिए होता है—पेड़ पै *कोऊ* बैठौं हैं।

काऊ का प्रयोग विकृत रूप के लिए होता है—*काऊ* कौं दें देउ।

काऊएँ बहु प्रचलित नहीं है। इसका प्रयोग कर्म-संप्रदान के लिए होता है—*काऊएँ* बुलाइ लेउ।

बहुवचन मूल रूप में *कोई*, *कोऊ* का प्रयोग होता है—*कोऊ* आए हैं। *कोई* का प्रयोग स्टेंडर्ड हिंदी के प्रभाव के कारण होता है—*कोई* आए हैं।

मूल रूप तथा विकृत रूप के ये सर्वनाम सार्वनामिक विशेषण की भांति भी व्यवहृत होते हैं।

१३४. संबंधवाचक सर्वनामों के रूप मूल रूप एकवचन को छोड़ कर निश्चयवाचक निकटवर्ती सर्वनामों की तरह ही हैं। नित्य संबंधी सर्वनाम संबंधवाचक सर्वनामों के साथ ही व्यवहृत होते हैं। अतः दोनों वर्गों के रूप एक साथ ही दिए जा रहे हैं—

	एकवचन	बहुवचन
मू० रूप	जो, जा (नें के साथ प्रयुक्त) सो	जे, ते
वि० रूप	जा, ता	जिन् (जिन) तिन् (तिनि) बिनि
कर्म संप्र०	जाइ (जाएँ) ताइ (ताएँ)	जिनें (जिन्हें) तिनें (तिन्हें) बिनें

मूल रूप एकवचन में *जो सो* रूप व्यवहृत होते हैं—*जो* गए *सो* मँई रहि गए। संबंधवाचक सर्वनामों में *ने* परसर्ग के पूर्व *जा* का भी प्रयोग होता है—*जानें* कई *सो* तौं भजि गओं।

जा ता का प्रयोग विकृत रूप में होता है—*जा* कें गए *ता* कौं घरु मिलौं ईनँई।

जाइ (जाएँ) *ताइ* (ताएँ) का प्रयोग कर्म-संप्रदान के लिए होता है—पइसा *जाइ* दओं *ताई* पें रहि गओं। *ताई* में दीर्घ ई बलार्थक अव्यय *ई* के संयुक्त हो जाने के कारण है। *जाइ* कोऊ नाँएँ, देतु *ताइ* भंगमानु देतु एँ।

बहुवचन में मूल रूप के लिए *जे, ते* का प्रयोग होता है—*जे* वराइति गए *ते* आएई नाँएँ।

जिन् (जिनि) *तिन्* (तिनि) का प्रयोग विकृत रूप में होता है—*जिनि* कौं लें नई गए *तिनि* कौं यँई कछु दें देउ। नित्यसंबंधी सर्वनामों में विकृत रूप के लिए *बिनि* का भी प्रयोग होता है—जिनि पें काम होइ *बिनि* तें ई लेउ।

जिनें (जिन्हें) *तिनें, बिनें* का प्रयोग कर्म-संप्रदान में होता है—*जिनें* रानी ने कछु दें दओ *तिनें* मौंज् हों गई। संबंध वाचक सर्वनामों में *जिन्हें* का प्रयोग स्टेंडर्ड हिंदी के प्रभाव के कारण है। नित्य संबंधी रूपों में कर्म संप्रदान के लिए *बिनें* का भी प्रयोग होता है—*जिनें* कछू जरूलत ही *बिनें* दें दओं।

सर्वनाम के इन दोनों वर्गों में भी मूल रूप तथा विकृत रूप के रूप सार्वनामिक विशेषण की भांति प्रयुक्त होते हैं।

बहुवचन के रूपों का प्रयोग एकवचन में भी होता है।

१३५. निजवाचक सर्वनाम के निम्नलिखित रूप मिलते हैं—

	एकवचन	बहुवचन
मू० रूप	अपुन	अपुनु
वि० रूप	अपुनु, अपु	
संबंध	अपनौं (अपओं) अपइँ (स्त्री)	अपएँ, अपइँ (स्त्री)

मूल रूप एकवचन में *अपुनु* का प्रयोग होता है—*अपुनु* ई गओं बेहड़ कौं।

विकृत रूप में *अपुनु, अपु* का प्रयोग होता है—*अपुनु* कौं तौं कछु मिलौं नँई, *बानें* *अपु* कौं कछु नँई राखौं।

बहुवचन विकृत रूप में भी *अपुनु* का ही प्रयोग होता है—जो *अपुनु* गए तौं रत्तई भूलि गए।

निजवाचक सर्वनाम के मूल रूप तथा विकृत रूप के कुछ विशिष्ट रूप सर्वनामों के बाद विशेषण की भांति प्रयुक्त होते हैं—फिरि वे *अपुनु* लरिबे कौं चले, बु *अपुठारौं* ई लौटैंगौं, बाई *खुदिई* नाँएँ *दीसतु*, बु *अपु* तौं गओं मेई बघियऊ लैं गओं।

संबंधवाची रूपों का प्रयोग मात्र सार्वनामिक विशेषण की भांति होता है—*अपएँ* का प्रयोग स्थानवाचक अर्थ में भी होता है—*अपएँ* का धरौं हैं।

१३६. प्रश्नवाचक सर्वनामों के दो प्रकार होते हैं—प्राणिवाचक तथा अप्राणिवाचक। प्राणिवाचक वर्ग के रूप निम्नलिखित हैं—

	एकवचन	बहुवचन
मू० रूप	को	को
वि० रूप	किन्, का, को	किन्
कर्म + संप्र०	किनैं, काएँ	किनैं

को का प्रयोग मूल रूप एकवचन के लिए होता है—*को* जातवैं ?

विकृत रूप में *किन्* का प्रयोग होता है—*किन्* कौं सोटा रहि गओं ? *का* रूप प्रायः अप्रचलित है—*का* सैं कहि दई। नैं परसर्ग के पूर्व कौं प्रयुक्त होता है—कौंनैं कई ? *किनैं, काएँ* का प्रयोग कर्म-संप्रदान के लिए होता है—रुपिया *किन* दैं आओं। *काएँ* कम प्रचलित है—*काएँ* भेंईंउँ ?

बहुवचन के मूल रूप के लिए *को* प्रयुक्त होता है—राति में *को* आए हे ?

विकृत रूप के लिए *किन्* का प्रयोग होता है—जे *किन्के* मौंड़ा हैं ?

किनैं का प्रयोग कर्म-संप्रदान के लिए होता है—*किनैं* भेजौं हैं बाहि पैं ?

मूल रूप तथा विकृत रूप के कुछ रूपों का प्रयोग सार्वनामिक विशेषण की भांति होता है (§१४३)

१३७. अप्राणिवाचक वर्ग के रूप निम्नलिखित हैं—

	एकवचन	बहुवचन
मू० रूप	का (कहा)	का (कहा)
वि० रूप	का, काहे (काए)	काहे (काए)

मूल रूप एकवचन में *का, कहा* प्रयुक्त होते हैं—*मां* का धरौं हैं ?

विकृत रूप में *का, काहे* (काए) का प्रयोग होता है—*हमाए* लैं का लाए ? मेला *काए* पैं गए ?

बहुवचन के मूल रूप में *का* (कहा) का प्रयोग मिलता है—भजि कैं गए तौं महां *का* धरे लभेरे ?

विकृत रूप में *काहे* (काए) का प्रयोग होता है—*काए* पैं चढ़ाइ ल्याए ?

१३८. सर्वनामों में से कुछ रूपों का प्रयोग विशेषण की भांति होता है—इन रूपों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है—१—वे रूप जो सर्वनाम तथा विशेषण दोनों ही की भांति प्रयुक्त होते हैं। २—तथा वे रूप जो केवल विशेषण की ही तरह प्रयुक्त होते हैं। पहले वर्ग के उदाहरण कुछ प्रश्नवाचक सर्वनाम रूप हैं—*को* गओं (सर्वनाम), *को* आदमी ठाढ़ौं हैं ? (विशेषण)। दूसरे वर्ग में अधिकतर संबंधवाची सर्वनाम हैं (१४३)

१३९. सर्वनामों की दूसरी प्रधान प्रवृत्ति है एकवचन रूपों के स्थान पर बहुवचन रूपों का प्रयोग। दूसरों के लिए प्रयुक्त सर्वनामों में यह प्रवृत्ति आदर के कारण हो सकती है तथा अपने लिए प्रयुक्त सर्वनामों में इस प्रवृत्ति के पीछे अकिंचनता की भावना देखी जा सकती है।

१४०. पुरुषवाचक सर्वनामों तथा निकटवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम के कर्म-संप्रदान के रूपों के अन्त में निरर्थक प्रत्यय *न* जोड़ देने की प्रवृत्ति मिलती है—*हमैंन्, तुमैंन, बिनैंन्, जिनैंन्*।

१४१. *संयुक्त सर्वनाम*—संयुक्त सर्वनामों के भी उदाहरण मिलते हैं। ये रूप प्रायः *जा, जो, जे*, तथा *सब* और *कोऊ* तथा *कछ्* के संयोग से बनते हैं—*जो कोऊ, जे कोऊ, जा कोऊ, जो कछू, सब कछू, सब कछ्*। *जो कोऊ* जाएँ सो चलौं जाएँ, *जा कोऊ* कों देंबैं होइ ताइ दें देउ, *सब कछू* यंईं रहि गओं।

विशेषण

१४२. विशेषणों के निम्नलिखित प्रकार मिलते हैं—१—सार्वनामिक, २—गुणवाचक, ३—परिमाणवाचक, ४—संख्यावाचक, ५—प्रकारवाचक।

१४३. (१) सार्वनामिक विशेषण बहुत बड़ी संख्या में व्यवहृत होते हैं। समस्त संबंधवाची सर्वनामों के अतिरिक्त अन्य सर्वनामों के रूप भी विशेषण की भांति प्रयुक्त होते हैं—

मेरौं, हमारौं, त्यारौं, वा, बे, जा, जे, कोऊ, जो, अपऔं, को, का, आदि कुछ प्रतिनिधि रूप हैं। इनमें *मेरौं, हमारौं, त्यारौं, त्यारे* तथा *अपऔं* संबंधवाची सर्वनाम हैं।

उदाहरण *मेरौं* घरु, *हमारौं* बैठका, *त्यारौं* कुआ, *त्यारे* रुपिया, *वा* आदिमी, *वे* घर, *जा* गइया, *जे* पौंहे, *कोऊ* मेंहेंरिया, *जो* लड़िका, *अपऔं* पइसा, *को* मोंड़ी, *का* ट गला।

(२) गुणवाचक विशेषणों की संख्या भी काफ़ी है—*कारौं* आदिमी, *पक्कौं* गोला, *बुरी* रता, *छोटौं* पेड़, *मींठौं* आम्, *आछी* नींद, *गद्दर* फलु, *नींकी* बात।

(३) परिमाणवाचक विशेषण—*बड़ी* डेंहेंरि, *नेंक्* बूरौं, *भौंतु* पानीं, *जब्‌र्* खेत्।

(४) संख्यावाचक विशेषणों के दो वर्ग हैं—निश्चित तथा अनिश्चित। निश्चित के भी दो प्रकार हैं—पूर्ण तथा अपूर्ण।

निश्चित पूर्ण—*एक, द्वैं, ग्यारा* आदि, निश्चित अपूर्ण—*पाउ, चौथाई आधौं, खांड़* आदि।

अनिश्चित—*मुकते, कितेक, सिब, सिगरौं, नेंक्*।

संख्यावाचक विशेषणों का विवेचन अलग से परिशिष्ट में होगा।

(५) प्रकारवाचक विशेषण—*और* (अन्य) कोई, *ऐंसौं* घर, *कैंसौं* आदिमी *बेंसी* आँधीं, *वेंसौं* पेड़ आदि।

१४४. विशेषण मूल रूप में प्रायः औंकारांत (कारौं, हरौं, बेंसौं) होते हैं। अकारांत (वस्तुतः व्यंजनांत) विशेषणों के अन्त में एक ह्रस्वतर उ ध्वनि होती है—नेंकु।

१४५. स्त्रीलिंग के लिए औंकारांत विशेषण ईकारांत में परिवर्तित हो जाते हैं—*मींठौं : मीठी, सिगरौं : सिगरी, चौंड़ौं : चौंड़ी* तिहाऔं : *तिहाई*।

१४६. विकृत रूप तथा बहुवचन में औंकारांत विशेषण एकारांत में परिवर्तित हो जाते हैं—*तिहाओं* : *तिहाए*, *पक्कौं* : *पक्के*, *मुकतौं* : *मुकते*, *भूरौं* : *भूरे*।

१४७. विशेषण के लिंग, वचन विशेष्य संज्ञा के अनुसार निर्धारित होते हैं।

१४८. कुछ विशेषणों का प्रयोग संज्ञा की भांति होता है—दिन में ल्हौंरे कौं दें देंवौं करें।

परिशिष्ट

संख्यावाची शब्द

१४९. बोली में निम्नलिखित संख्यावाची विशेषण प्रयुक्त होते हैं—

(१) पूर्ण संख्यावाची

एक, द्वैं, दौं, तीनि, चार्, पांच्, छैं, सात्, आठ्, नौं, दस्, ग्यारा, बारा, तेरा, चउदा, पंद्रा, सोर्हा, सत्रा, अठारा, उन्नीस, बीस, तीस, चालीस, पचास, साठ, सत्तर, अस्सी, असिय, नब्बें, सौं, हजार्, लाख, करोड़, किरोड़।

(२) अपूर्ण संख्यावाची

चौंथाई, पाउ, आधौं, पौंन, सवाउ, डेढ़, अढ़ाई।

(३) क्रमवाची

पैंहलौं, दूसरौं, तीसरौं, चौंथौं, पाँचवौं, छठौं, छट्वौं, सातऔं, आठवौं नमऔं, दसऔं।

(४) आवृत्तिवाची

दुगुनौं, तिगुनौं, चौंगुनौं।

१५०. तौलने वालों की गिनती विशिष्ट होती है। (जैसे एक सेर को *राम* कहना)। *पसेरी* पांच सेर के लिए और *घरा* अथवा *घरी* दस सेर के लिए प्रयुक्त होती है। वस्तुओं को प्रायः पांच-पांच के समूहों में गिना जाता है। दस सेर कच्चौं कहने से वस्तुतः पाँच सेर (*पक्कौं*) का ही बोध होता है।

१५१. क्रमवाची तथा आवृत्तिवाची संख्यावाचियों में स्त्रीलिंग तथा विकृत रूप के लिए विकार होते हैं—*पैंहलौं* : *पैंहली* : *पैंहले*, *दुगुनौं* : *दुगुनी* : *दुगुने*।

परसर्ग

१५२. कारकों के अर्थ प्रकट करने के लिए परसर्गों का प्रयोग होता है। कर्ता के कुछ रूपों को छोड़ कर शेष कारकों के अर्थ, संज्ञा तथा संज्ञा (मौंड़ा की मँहतारी) संज्ञा तथा सर्वनाम (वाक़ौं घोड़ा), संज्ञा तथा क्रिया (मगरा नैं खाइ लई), क्रिया-विशेषण तथा क्रिया (पीछे तैं चलि भओ) के बीच विभिन्न परसर्गों के द्वारा व्यक्त किए जाते हैं। ये परसर्ग संज्ञा अथवा सर्वनाम के विकृत रूपों के साथ जुड़ कर कारकों के अर्थ स्पष्ट करते हैं। इन अर्थों में प्रचलित कारकों के अतिरिक्त भी अन्य व्याकरणात्मक तथा प्राकृतिक संबंध हैं, जिनके लिए कोई विशिष्ट कारक नहीं हैं।

१५३. प्रस्तुत बोली में निम्नलिखित परसर्ग प्रयुक्त होते हैं,

की, कूं, कं, के, कौं, कौं
तैं
नैं, ना
पै
मैं
सूं, सैं, सौं

१५४. *की*, के तथा कौं व्यक्तियों तथा वस्तुओं के संबंध को प्रकट करते हैं—*बिनि की* सासु नै कई, ससुरार वान्नि के घरैं गओ, सामन कौं महीना आय। ये परसर्ग लिंग तथा कारक के अनुसार बदल जाते हैं। *की* का प्रयोग स्त्रीलिंग के पूर्व होता है। के का प्रयोग विकृत रूप अथवा बहुवचन के पूर्व होता है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा इन परसर्गों को विशेषणमूलक मानते हैं ('ब्रजभाषा', २०४)।

कूं का प्रयोग वैसे तो सामान्यतः जिले के पश्चिमी भाग में होता है, पर किरावली तहसील में इसके रूप अधिक संख्या में मिलते हैं। यह परसर्ग वस्तुतः मथुरा की बोली का है, और वहीं से संभवतः आगरे जिले के पश्चिमी क्षेत्र में आया है।

कूं का प्रयोग कर्म कारक के अर्थ में होता है—इन कूं खातु ओगों। की ओर के अर्थ में भी कूं का प्रयोग मिलता है—नीचे कूं तों बैठि गओ अपु। कूं का प्रयोग

के लिए के अर्थ में भी होता है—बाकूं खाने कूं नँईं पोंचों। इसके अतिरिक्त कूं का प्रयोग के समय के अर्थ में होता है—राति कूं टांगि दओं।

कें का प्रयोग के यहां अथवा के घर के अर्थ में होता है—बीर् बिकरमाजीत् कें का होतो। कें का प्रयोग कर्मकारक के अर्थ में भी होता है—

ऊंट कें दें लट्ठ दें लट्ठ देह् टो डारी। कें का प्रयोग के पास के अर्थ में भी होता है—काऊ कें दुद्ध करेजे नाँएँ होत्।

कों का प्रयोग कर्मकारक के अर्थ को प्रकट करने के लिए होता है—थारी गड़ुआ कों ले कें गाड़ि आओं। कों का प्रयोग के लिए के अर्थ में भी होता है—लरिबे कों चल्दए। कों का अर्थ के समय भी होता है—जब संजा कों हिन्नु नँईं पोंचों। कों से कर्तृत्व का भी बोध होता है—दुकान्दार कों तों दें एँ चँइयें।

१५५. तें का प्रयोग कर्म के अर्थ में होता है—बिना पंडिज्जी तें पूँछें नंईं जांगो। तें का प्रयोग अपादान के लिए भी होता है—बुब्ह् तें भजों। तें का एक अर्थ के साथ भी होता है—सेर बांटन तें ई काम परैंगों। तें का अर्थ की ओर से भी मिलता है—पीछे तें चढ़ि गों। तें आरंभबोधक अर्थ में भी प्रयुक्त होता है—जा दिन तें सतसंगु भयों हें। तें का प्रयोग करण कारक का अर्थ देने के लिए भी होता है—खुसामदि करे तें आसरे की हों जाइ तों नीकी हें।

१५६. नें का प्रयोग प्रायः सर्वत्र कर्ता-कारक के अर्थ को प्रकट करने के लिए होता है—साऊकार नें अपनों बेटा भौंतु समुझायों। इस अर्थ में भी नें का प्रयोग क्रिया के भूतकालिक रूपों में ही होता है।

नों का प्रयोग तक के अर्थ में होता है—औं संजा नों इकट्ठे नँईं हों इ।

१५७. पें का मुख्यतः प्रयोग अधिकरण कारक (में, पर, ऊपर, अंदर) के अर्थ में होता है—कुंअर तों गादी पें ई बैठेंगों। पें का प्रयोग पास के अर्थ में भी होता है। बापें पांस्सें रुपइया है। पें का प्रयोग कभी कभी करण के अर्थ में भी होता है—पंछिन पें करवाइ देंउंगो।

१५८. में का प्रयोग अधिकरण के अर्थ में होता है—रस्ता में लत्त जाँएँ।

१५९. सूं का प्रयोग जिले के उत्तरी भाग में अपेक्षाकृत अधिक होता है—सूं का व्यवहार कर्म कारक के अर्थ में होता है—सिरकटा ने सिरकटी सूं कई। सूं का प्रयोग के साथ के अर्थ में भी होता है—बे पढ़िन सूं पल्लों परि गओं हैं।

सें परसर्ग का प्रयोग कर्म के अर्थ में होता है—बिन्नें अपने आप सें कई। अपादान के अर्थ में भी सें प्रयुक्त होता है—मो सें नें क ड्योंढ़ों सोइ जा। सें का प्रयोग के अनुसार के अर्थ में भी होता है—जाई हिसाब सें बानें चारों फें कि दए। सें का प्रयोग करण के अर्थ को भी प्रकट करता है—अंगुरिन् सें खें चन लगों। सें का

प्रयोग अपेक्षा के अर्थ में भी होता है—जा सैं तों बिन पंचाइत के ई भले हे। क्रिया-विशेषण के बाद सादृश्यसूचक अर्थ में भी सैं का प्रयोग होता है—जल्दी सैं दें देउ।

सों का प्रयोग कर्म के अर्थ में होता है—बिन् सों कई। सों का प्रयोग अपादान के अर्थ में भी होता है—घर सों चल्दए। सों का अर्थ के साथ भी होता है—मेरे पती सों जुद्ध होंनें बारों हैं। सों करण के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है—ता सों का होवें। कभी कभी इस परसर्ग का अर्थ के कारण भी होता है—हार के काम सों निकासुई नाँएँ होतु। सों का प्रयोग की के अर्थ में भी होता है—न्याइ सों मोइ का जरूलत् हें।

वस्तुतः सों का प्रयोग पूर्वी प्रदेश में विशेषतः बाह तहसील में अधिक है। जिले के पश्चिमी भाग में इसका स्थानापन्न सूं है। लगभग यही स्थिति कों तथा कूं की है।

परसर्गों के समान प्रयुक्त शब्द

१६०. सामान्य परसर्गों के अतिरिक्त बोली में निम्नलिखित परसर्ग भी प्रयुक्त होते हैं—

आगें	—	मेए आगें कोऊ नाँएँ।
काजें	—	त्याए काजें कछू नाँएँ धरों।
तंन	—	बु पाइं तंन दबि गओं।
तक्	—	घोंटुन तक लेंहगा कटि गओं।
पल्लें	—	हमाए पल्लें कछू नाँएँ।
पार्	—	जमना पार् कचरियां खाइ आमें।
बिगिरि	—	रानीं बिगिरि हों नाँएँ जातों।
बिन्	—	हों मोंड़ा बिन् कैसें रहों।
बिनां	—	पनेंठा बिनां चल्दओं।
बीच्	—	मोइ गाँ गंगा बीच् हों नाँएँ तोइ खानें।
माऊं	—	इत माऊं होंकें गओं हैं।
लंग्	—	बा लंग् का धरों हैं।
लों	—	कों लों पोंचि लेंहों।

संयुक्त परसर्ग

१६१. संयुक्त परसर्ग अधिकतर दो परसर्गों के संयोग से अथवा परसर्गों के समान प्रयुक्त शब्दों के पूर्व जोड़ कर बनते हैं—

तरे तें	—	सैर तरें तें भोजा निकरों।
पैं तें	—	मो पैं तें नाँएँ लैंए जात् के।
में तें	—	बा कुआ में तें निकारे।
में सैं	—	बा दरबज्जे में सैं बु पैंहरेबारोंऊ गाइव हों गओं।
के कार्जें	—	सत् ही के काजें कासी में विकि गए।
के तंनं	—	खरगे के तंनं चले जाउ।
के तरैं	—	बाके तरें कछू नँईं निकरों।
के तें	—	बनिया के तें संखिया लें आयों।
के पल्लें	—	बिनि के पल्लें कछु नाँएँ।
के पास्	—	भौंरां गुबरीला के पास जाइ बैंठों।
के बिनाँ	—	चुड़िया के बिनां जातों कैंसैं ?
के बीच्	—	बाहि ओर चंदपुर के बीच् एकु मठु हैं।
के बीच में	—	होलीपुरा और जमनाजी के बीच में
के मारैं	—	राजा रिस के मारैं दूतीन् के पास गयों।
के लें	—	पंचाइतें बनाई गईं सुधार के लें।
के संग	—	दमाद् के संग सासु बैंठि कें खात्य।

१६२. इन परसर्गों के अतिरिक्त संज्ञा के संयोगात्मक रूप भी मिलते हैं, जिससे कारकों का अर्थ स्पष्ट होता है (§१२३)। कुछ विकृतरूप संज्ञाओं में बिना परसर्ग जोड़े ही कारक का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। (§१२४)

१६३. परसर्ग के अतिरिक्त कहीं कहीं पूर्वसर्ग (Preposition) का भी प्रयोग मिलता है—बिन् वीर् बंधें नईं धीर्।

रचनात्मक उपसर्ग तथा प्रत्यय

१६४. संज्ञा की रूप-रचना में उपसर्गों तथा प्रत्ययों का भी प्रयोग होता है पर अपेक्षाकृत सीमित रूप में—

उपसर्ग—बिन् (अभाव)—बिन्पढ़िन सों, कु (हीन) कुपढ़ की बात्।

प्रत्यय—अइया (करनेवाला) चरइया,–अन (बिना) अनकाम, अनिबात, –भरि (पूर्णता) हाथ-भरि,–बारों (वाला) कुआबारों, क्क–(लगभग)–दसक्क, ट्टा (विद्रूप रूप का सूचक) कहट्टा, चोट्टा, मेंहट्टा।

९. क्रिया

सहायक क्रिया

१६५. आगरे की बोली में सहायक क्रिया के निम्नलिखित रूप मिलते हैं—

वर्तमान—हूं			भूत—था	
पुरुष	ए० व०	ब० व०	ए० व०	ब० व०
उ० पु०	हो (ओ)	हैं	हो (ओ) (स्त्री० हीं (ई०)	हैं
म० पु०	है, हो (ओ)	हो	है, हो स्त्री० हीं, हीं (ई)	है स्त्री० हीं
अ० पु०	है (ए)	हैं (एँ)	हो स्त्री० हीं (ई)	है (ए) स्त्री हीं (ई)

१६६. भविष्यत् काल के रूपों में प्रायः—ग अथवा—ह प्रत्यय जोड़ दिया जाता है—चलौंगो, चलिहैं। पर भविष्यत् काल के इन प्रत्ययों का स्वतंत्र रूप से सहायक क्रिया की भांति प्रयोग नहीं हो सकता।

१६७. भविष्यत् काल के दोनों प्रकारों के रूप निम्नलिखित हैं—

	भविष्यत्–प्रत्यय–ग		भविष्यत्–प्रत्यय–ह	
पुरुष	ए० व०	ब० व०	ए० व०	ब० व०
उ० पु०	—गो स्त्री० गी	—गे स्त्री० गीं (कम प्रयुक्त)	—हों	—हैं
म० पु०	—गौं, —गे स्त्री०–गी, गीं	—गे स्त्री०–गीं	—हैं, —हों	—हों
अ० पु०	—गौं स्त्री०—गी	—गे स्त्री०—गीं	—हैं	—हैं

१६८. सहायक क्रिया के रूप काल, पुरुष, वचन तथा कभी-कभी लिंग के अनुसार चलते हैं।

१६९. प्रयोग के समय सहायक क्रिया के अधिकांश रूपों की संधि प्रायः मूलक्रिया के साथ हो जाती है—को जात्वें (जातु एँ)।

१७०. सामान्यतः सहायक क्रिया का प्रयोग दो प्रकार से होता है १—मूल क्रिया के साथ मिलकर संयुक्त काल बनाने के लिए—बु जात्वें। २—और स्वतंत्र रूप से सहायक क्रिया की भांति—एक मोंड़ा हो। सहायक क्रिया के इन दोनों प्रकारों का प्रयोग निम्नलिखित रूप से होता है—

१७१. वर्तमानकालिक एकवचन के रूपों में उत्तम पुरुष के लिए हों (ओं) का प्रयोग होता है—मैं हों, मैं जातु हों (संयुक्तकाल)।

मध्यम पुरुष में तू के साथ हें प्रयुक्त होता है—मां तू हें। तुम् तथा आप के साथ हों (ओं) का प्रयोग होता है—तुम हों, आप भले हों, तू का कत्वें, तुम ठाढ़े हों, आपु रोउतों (संयुक्त काल)।

अन्य पुरुष के लिए हें (एँ) का प्रयोग होता है—बु थान पैं हें। बु सोउत्वें (संयुक्तकाल)।

बहुवचन के रूपों में उत्तम पुरुष के लिए हें प्रयुक्त होता है—हम गोंड़ा में हैं। हम जातें (संयुक्तकाल)।

मध्यमपुरुष में हों का प्रयोग होता है—तुम कहां हों, आप घर में हों, कहाँ जातों आपु—यां बैठे हों (संयुक्तकाल)।

अन्यपुरुष में हें (एँ) प्रयुक्त होता है—बे नीकें आदिमी हें। बे घरैं जोतें (संयुक्तकाल)।

१७२. भूतकालिक एकवचन के रूपों में उत्तम पुरुष के लिए हो (ओ) स्त्री ही (ई) का प्रयोग होता है—ब द्वारैं हो, भुज्जिनि मैंई ही। चोर चोरी कत्तो, ब कुआ पैं ठाड़ी ३ (संयुक्तकाल)।

मध्यमपुरुष के लिए हे, हों, स्त्री० ही, हीं (ई) का प्रयोग होता है—तुम इत्ती देर सैं कहां हे, दरबज्जे पैं तू ही, हाट में ही का, तुम पोंरि में हीं। तुम ठाड़े, कोरी नें कई तू कहा कहाती, बानें कई तू रोउती, तुम कब सैं ठाड़ीं (संयुक्तकाल)।

अन्य पुरुष के लिए हे (ए) स्त्री० हीं (ईं) का प्रयोग होता है—द्वै भइया हे, एक गांउँ में चारि कोन्नि हीं। बे कहाते, मेंहरिया सोउती (संयुक्त काल)।

१७३. भविष्यत् काल के प्रत्ययों से बने रूपों की चर्चा मूल काल के अन्तर्गत होगी।

१७४. सहायक क्रिया का एक अन्य रूप भी मिलता है—हतु (वर्तमान) हतो अथवा हतुओ (भूत) हति अथवा हती (स्त्रीलिंग) : हते (पु० बहुवचन)

हतीं (बहुवचन)। ये रूप मुख्यतः मूल क्रिया की भांति ही प्रयुक्त होते हैं—मों पैं कछु हत नाँएँ, एकु राजा हतु ओ, एक रानी हतीं।

१७५. सहायक क्रिया का एक भूतकालिक रूप और मिलता है—रहें, रहें (ब० व०) एक कोरी रहें, तीनि यार रहें। सहायकक्रिया के ये रूप भी मुख्यतः मूल क्रिया की ही भांति प्रयुक्त होते हैं—गौण रूप से मूल क्रिया के साथ मिल कर ये संयुक्त काल भी बनाते हैं—बु मंई सोउत रहें। रहें रूप प्रस्तुत बोली में कन्नौजी के माध्यम से संभवतः अवधी से आया प्रतीत होता है—सहायक क्रिया के इस रूप में लिंग-भेद नहीं होता।

१७६. वर्तमान कालिक सहायक क्रिया हें में भविष्यत् काल के प्रत्यय—ग को जोड़ने की व्यापक प्रवृत्ति मिलती है—एकु पिछोंरा हेंगों गाड़े कों। यद्यपि यह—ग प्रत्यय भविष्य का भाव यहां व्यक्त नहीं करता।

मूल काल

१७७. मूलकाल के भूतकालिक कृदंतीय रूप प्रायः ओंकारांत होते हैं—चलों, आओं जातों। ये सब रूप जिले के पश्चिमी भाग (किरावली तथा खैरागढ़) में ओकारांत हैं—चल्यो, आयो, गयो आदि।

१७८. मूलकाल के निम्नलिखित रूप बोली में मिलते हैं; काल, पुरुष, वचन तथा कुछ रूपों में लिंगभेद के अनुसार विकार होते हैं—

१—भूत निश्चयार्थ—क्रिया रूपों में इस वर्ग की संख्या सबसे अधिक है—बनें, खाई, कई, लाए, पोंहचे, निकरी, चले, बोले, गए आदि।

२—वर्तमान निश्चयार्थ—प्रयोग की दृष्टि से वर्तमान निश्चयार्थ होने पर भी ये रूप मूलतः (क) वर्तमान संभावनार्थ–चुचाइ–लत्तन तें पानीं चुचाइ (ख) अथवा वर्तमानकालिक कृदंत जातु—हों नाँएँ जातु, के हें। ये प्रयोग सीमित व्याकरणात्मक रूपों में मिलते हैं—घबराऊँ, चल्तु, सोउतु, सोचें आदि।

३—वर्तमान आज्ञार्थ—छोड़ों, चलों, बुलाओं, जाउ आदि।

४—वर्तमान संभावनार्थ—होइ, आबें, चलों, परैं आदि।

५—भूत संभावनार्थ—जातों, होतों, रहतों आदि।

६—भविष्य निश्चयार्थ—जैंहों, जांगो, चलेंगे, जानें, देंनें आदि।

भविष्यत् काल में—ह तथा–ग रूपों के साथ न रूप भी मिलते हैं—हों नाँएँ जानें, बनाँएँ खानें। ये रूप निषेधार्थक क्रियाओं में मिलते हैं।

१७९. भूत निश्चयार्थ, वर्तमान आज्ञार्थ, वर्तमान संभावनार्थ, भूत संभावनार्थ तथा भविष्य निश्चयार्थ के चलना क्रिया के रूप नीचे दिए जाते हैं—

१८०. भविष्यत् काल के—हृ रूप मुख्यतः जिले के पूर्वी भाग की बोली में उपलब्ध हैं। इन रूपों का मुख्य प्रयोग-क्षेत्र कन्नौजी का भाग है।

१८१. भूतकाल के उत्तम पुरुष बहुवचन के रूपों में प्रायः लिंगभेद नहीं होता। भविष्यत् काल के—हृ प्रत्यय वाले रूपों में लिंगभेद बिल्कुल नहीं होता, क्योंकि वे कृदंतीय रूपों से विकसित न होकर संस्कृत के मूल भविष्यत् काल (कर्तृवाच्य) से सीधे विकसित हुए हैं।

किरपोला चलिहैं : जि मौंड़िऊ चलिहैं।

१८२. मूल काल के क्रिया रूपों का सोदाहरण विवेचन नीचे दिया जाता है—

भूत निश्चयार्थ एकवचन में उत्तमपुरुष के लिए चलौं (चल्यौं) स्त्री० चली का प्रयोग होता है—फिरि हौं मां तें चलौं, में घत्तें चली। चल्यौं का प्रयोग विशेषतः पश्चिमी भाग में होता है।

मध्यमपुरुष में चलौं, चले, स्त्री० चली रूप प्रयुक्त होते हैं— तू कां चलौं, तुम् फिर चलें, फिरि तू रानीं चली। मौंड़ा नें कई अम्मां तुम् कहां चलीं।

अन्यपुरुष में चलौं (चल्यौं) स्त्री० चली का प्रयोग होता है—फेर बु रस्तागीर चल्यौं, दूती चली सो राजा पैं पौंहची।

बहुवचन में उत्तम पुरुष के लिए चले प्रयुक्त होता है—हम तौं हियन सौं चले।

मध्यम पुरुष में भी चले स्त्री० चलीं व्यवहृत होते हैं— मौंड़े हौं तुम कब चले, तुम चलीं सो अब आई।

अन्यपुरुष में चले, चली का प्रयोग होता है—फिस्सिपाही गांउ कौं चले, मांड़नी तौंनौं चली।

१८३. वर्तमान निश्चयार्थ के रूप, जैसा कहा गया, सीमित ढंग से प्रयुक्त होते हैं। ये रूप मूलतः वर्तमान संभावनार्थ तथा वर्तमान कालिक कृदंत के हैं। कृदंतीय रूप प्रायः निषेधार्थक वाक्य में प्रयुक्त होते हैं—जि मौंड़ा नाँएँ खातु।

१८४. वर्तमान आज्ञार्थ तथा संभावनार्थ के रूप एक ही हैं।

एकवचन में उत्तमपुरुष के लिए चलौं प्रयुक्त होता है—जो हौं अभें चलौं तौं पौंहौं चिलेंउ।

मध्यमपुरुष के लिए चलौं, चलि (आज्ञार्थ केवल) का प्रयोग होता है—चलौं तौं सूज्ज निकरे के पेंहलें ई चलौं, चलि हियन् तें।

चलें का प्रयोग अन्यपुरुष के लिए होता है—जो राजा चलें तौं रानी खटपाटौं लें लेइ।

बहुवचन में उत्तमपुरुष के लिए चलें रूप का व्यवहार होता है—हम चलें तौं।

मध्यमपुरुष के लिए चलौं का प्रयोग होता है—तुम सब हूंयन तें चलौं तौं, जो तुम चलौं तौं हमऊं मनु करें।

चलें का प्रयोग अन्यपुरुष के लिए होता है—बे चलें तौं इत भएं जाएं।

आज्ञार्थ रूपों का प्रयोग अधिकतर मध्यमपुरुष के लिए होता है।

१८५. भूत संभावनार्थ एकवचन में उत्तमपुरुष के लिए चल्त स्त्री० चल्ती का प्रयोग होता है—जो हों चल्तौं तौं पोहोचि लेतौं, चल्ती तौं का बांकी रैहती।

मध्यमपुरुष के लिए चल्तौं, चल्ते, स्त्री० चल्ती का प्रयोग होता है—तू चल्तौं तौं ठीक ई रहातौं, जो तुम चल्ते तौं बाहि न पौंहों चते, तुम चल्तीं तौं राजा मांजाते।

अन्यपुरुष के लिए चल्तौं, स्त्री० चल्ती का प्रयोग होता है—ठाकुर चल्तौं तौं काए कों आउतौं, भेंसिया मेंड़ पैं चल्ती।

बहुवचन के रूपों में उत्तमपुरुष के लिए चल्ते स्त्री० चल्तीं का प्रयोग होता है—हंम चल्ते तौं का बु माल्लेतौं, जो हंम ई चल्तीं तौं जि काए कों होतौं। स्त्रीलिंग रूप का व्यवहार कम होता है, प्रायः पुल्लिग रूप से ही काम चला लिया जाता है।

मध्यमपुरुष के लिए चल्ते, स्त्री० चल्तीं का प्रयोग होता है—जो तुम सब चल्ते तौं जघेंऊ न मिल्ती, चल्तीं तौं राम सैं काम पज्जातौं।

अन्यपुरुष के लिए चल्ते, स्त्री० चल्तीं का व्यवहार होता है—सिग् लोग् चल्ते तौं हम देखि लेते, मेंहेंरिया चल्तीं तौं हेंरानी हो जाती।

१८६. भविष्य निश्चयार्थ के रूप –ग प्रत्यय तथा–ह प्रत्यय लगा कर बनते हैं—ह रूप पूर्वी प्रदेश की बोली में अधिक प्रयुक्त होते हैं। पश्चिमी भाग में अधिकतर केवल–ग रूप मिलते हैं। पहले प्रकार के रूप वर्तमान आज्ञार्थ के योग से बनते हैं। तथा दूसरे वर्ग के रूपों में आज्ञार्थ चलि में–ह प्रत्यय के रूप जोड़े जाते हैं। भविष्यत् काल के कुछ सीमित रूप—न प्रत्यय लगा कर बनते हैं।

एकवचन के उत्तमपुरुष रूप के लिए चलौंगो, स्त्री० चलौंगी अथवा चलिहों का प्रयोग होता है—हों चलौंगो, हों चलौंगी, हों चलिहों।

मध्यमपुरुष के लिए चलोंगे, चलेंगों, स्त्री० चलेंगी, चलोंगी अथवा चलिहों का प्रयोग होता है—तुम भोरईं चलेंगों, तू चलेंगों मेए संग, तू चलेंगी घरैं, तुम तौं चलोंगीं, तुम चलिहों हार कों।

अन्यपुरुष के लिए चलेंगों, स्त्री चलेंगी अथवा चलिह का प्रयोग होता है—डुकरा सबेरैं चलेंगों, बु जनीं चलेंगी, बु चलिहें काए नाएं?

बहुवचन में उत्तमपुरुष के लिए चलेंगे, चलिहें रूप प्रयुक्त होते हैं—हम न्यारेई चलेंगे, हम चलिहें सबेरैं।

मध्यमपुरुष के लिए चलोंगे स्त्री० चलोंगीं अथवा चलिहों का प्रयोग होता है—चलोंगे होरा खान्, तुम पांइन चलोंगी, तुम सब चलिहों हमाए संग।

अन्यपुरुष के लिए चलें गे, स्त्री० चलें गीं अथवा चलिहें रूप व्यवहृत होते हैं—बे जरूल चलें गे, जनीं मान्सु सिग् चलें गीं, घर्स्सैं दिनूगें चलिहें बे।

भविष्यत् काल के संभावनार्थ रूप अलग से नहीं होते, भविष्य निश्चयार्थ के पूर्व जो लगा कर अर्थ स्पष्ट किया जाता है।

—न प्रत्यय लग कर बनने वाले निषेधार्थ भविष्य क्रिया रूपों की चर्चा ऊपर की जा चुकी है। ये रूप अपनी प्रकृति में असाधारण हैं (§१७८)।

संयुक्त काल

रूप रचना

१८७. संयुक्त कालों की रूप-रचना वर्तमानकालिक तथा भूतकालिक कृदंतों में सहायक क्रिया जोड़ने से होती है—रातो (रेंहत+ओ) कही २ (कही+ही)। संख्या की दृष्टि से ये रूप अपेक्षाकृत कम हैं।

१८८. संयुक्त काल के अन्तर्गत दो क्रिया-रूप मिलते हैं—

१—भूत निश्चयार्थ—अपूर्ण—कत्ते, रेंहते, आदि (बे सैंर में रेंहते)। पूर्ण—गए हे, खाओं हो आदि (बे पतकें ईं गए हे)।

इन रूपों में भी प्रायः मूल तथा सहायक क्रिया में संधि हो जाती है—कातो-कहेंत्+हो।

२—वर्तमान निश्चयार्थ—चल्तें, कातें आदि (तौं डोकर कानीं कातें),

इन रूपों में भी प्रायः मूल तथा सहायक क्रिया में संधि हो जाती है—सुन्त्वें (सुन्तु+हें)।

कभी कभी संयुक्त काल में सहायक क्रिया को छोड़ कर मात्र मूलकाल के ही प्रयोग से काम चल सकता है—कही (ही), राखे (हे) धरों (हें)। चारि बानें अपएँ लें राखे।

१८९. संयुक्त काल के रूपों में पुरुष, वचन, तथा काल के बदलने से जो विकार होते हैं, वे सहायक क्रिया में होते हैं, जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है (१६५—१७२)।

संयुक्त काल का कृदंतीय अंश लिंग के अनुसार परिवर्तित होता है—मोंड़ा सोउत हें (मोंड़ी सोउति हें)। वस्तुतः क्रिया रूपों में लिंग संबंधी परिवर्तन उनके कृदंतीय अंशों के ही कारण होते हैं।

संयुक्त क्रिया

१९०. बोली के क्रिया रूपों में संयुक्त क्रिया के रूप सबसे अधिक हैं।

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने अब से लगभग २५ वर्ष पूर्व ब्रजभाषा की जिस प्रवृत्ति की ओर संकेत किया था ('ब्रजभाषा' §२३८) वह निरन्तर विकसित ही होती रही है। संयुक्त क्रिया से कुछ कम मूल काल के प्रयोगों की संख्या है, तथा सबसे कम संयुक्त काल हैं।

१९१. संयुक्त क्रिया की रूप-रचना

१—२ प्रधान क्रिया – बचि जाइगों, मरि गओं, सोइ लेउ।

२—२ प्रधान क्रिया + १ सहायक क्रिया—कहूठतु हैं।

३—३ प्रधान क्रिया – पूंछि लें न्देउ।

४—३ प्रधान क्रिया + १ सहायक क्रिया—बनाई जाइ रही हैं।

५—४ प्रधान क्रिया – खड़ो ह्वौं जाइबों करैं।

१९२. संयुक्त क्रियाओं के विश्लेषण से पता चलता है कि उनका निर्माण मूलकाल, सहायक क्रिया, कृदंत, संज्ञा तथा विशेषण में से दो अथवा दो से अधिक तत्वों की सहायता से होता है—

दें दओं गओं—पूर्वकालिक तथा भूतकालिक कृदंत और भूत निश्चयार्थ क्रिया।

सफाया कद्दओं—संज्ञा, पूर्वकालिक कृदंत तथा भूत निश्चयार्थ क्रिया।

हैरान करिबों कत्तें—विशेषण, क्रियार्थक संज्ञा, वर्तमानकालिक कृदंत, वर्तमानकालिक सहायक क्रिया।

कहूठतु हैं—पूर्वकालिक कृदंत, वर्तमानकालिक कृदंत तथा वर्तमानकालिक सहायक क्रिया।

१९३. संयुक्त क्रिया का काल, वचन तथा पुरुष उसमें प्रयुक्त अंतिम क्रिया रूप के अनुसार निर्धारित होता है। तथा लिंग कृदंतीय अंश के अनुसार रहता है।

संयुक्त क्रिया के प्रकार

१९४. (इस विभाजन का आधार संयुक्त क्रिया का प्रथम रूप तत्व है)

१—पूर्वकालिक कृदंत के योग से बनी—इस वर्ग के रूप संख्या की दृष्टि से सबसे अधिक है—लें देउ, आइ बैंठों, टौ ड़ारों, पौंचि गए।

२—संज्ञा अथवा विशेषण के योग से बनी—इस वर्ग के रूपों की संख्या भी कम नहीं है—तथा इनका प्रयोग बढ़ता ही जान पड़ता है—आवाज दई, बांट करौं, न्यारों कद्दओं, बंद हें गई।

३—क्रियार्थक संज्ञा के योग से बनी—पूंछन लगे, रहिबों, करैं, बैंठन लाग्यों, होंनों चंइयें, धंसन पाओं।

४—वर्तमानकालिक कृदंत के योग से बनी—केति जाइ, आउत जाते, लत्त जाएं, फेंकत रओं, चल्तु होतों।

५—भूतकालिक कृदंत के योग से बनी—चलों गओं, चलों जाइ रहों, बैठों रहों।

६—पूर्णक्रिया द्योतक कृदंत के योग से बनी—मारे गए, चले जाउगे।

७—अपूर्ण क्रिया द्योतक कृदंत के योग से बनी—टाए रहे, लेत् अइयो।

८—प्रेरणार्थक क्रिया के योग से बनी—करबाइ दे उगो, गड़बाइ दओं, छुड़बाइ दीनों, लगबाइ दई।

प्रेरणार्थक क्रिया

१९५. आगरे जिले की बोली में—आ अथवा—बा जोड़ कर प्रेरणार्थक क्रिया बनाई जाती है। अकर्मक क्रिया में—आ जोड़ने पर सकर्मक क्रिया बनती है—चलों, चलाओं, फिर इस सकर्मक रूप में—वा जोड़ने पर प्रेरणार्थक रूप बनता है—चलाओं, चलवाओं। सकर्मक क्रिया मे प्राय: सीधे—बा जोड़ने पर प्रेरणार्थक क्रिया बनती है—खाओं, खबाओं। परन्तु इस क्रिया रूप में खबाओं प्रेरणार्थक तथा सामान्य दोनों अर्थों का द्योतक हो सकता है (खिलाया, खिलवाया)। यदि सामान्य अर्थ को ही ग्रहण किया जाए तो फिर एक अतिरिक्त —ब् जोड़ कर प्रेरणार्थक रूप बनता है—खबाओं, खब्वाओं।

प्रेरणार्थक रूप बनाने के लिए मूलक्रिया के प्रथम स्वर को यदि दीर्घ हो तो ह्रस्व कर दिया जाता है तथा—ए,—ओ को क्रमश: —इ-उ में परिणत कर दिया जाता है। गाओं, गबाओं, भेजों, : भिजबाओं, गोड़ों : गुड़बाओं।

प्रेरणार्थक क्रिया के रूप तीनों कालों (भूत, वर्तमान, भविष्यत्) दोनों वचनों (एकवचन, बहुवचन) तथा दोनों लिंगों (पुल्लिग, स्त्रीलिंग) में मिलते हैं।

नाम धातु

१९६. नामधातु के प्रयोग प्राय: मिलते हैं, इनमें से कुछ रूप तो स्थानीय जान पड़ते हैं—झकरियाओं, कुनियाइ, जुतियाए, बतरानीं, जुहारल, मठियाइ, पसुरिआइ, अंगोंछि। नामधातु के रूप भी तीनों कालों (भूत, वर्तमान, भविष्यत्) दोनों वचनों (एकवचन, बहुवचन) तथा दोनों लिंगों (पुल्लिग, स्त्रीलिंग) में मिल सकते हैं।

नामधातु के सदृश ही कुछ क्रिया रूप विशेषणों से बने मिलते हैं—मुटाओं, पतराओं।

अनुकरणवाची शब्दों से बनी क्रियाएं भी मिलती हैं—खटखटाओं, भड़भड़ाओं खड़खड़ाओं।

वाच्य-प्रयोग-अर्थ

१९७. प्रस्तुत बोली में कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य तथा भाववाच्य—तीनों ही के रूप मिलते हैं। कर्मवाच्य रूपों की संख्या बहुत कम है और भाववाच्य की उससे भी कम।

कर्तृवाच्य—मोंड़ा रैंउजा पँ चढ़ि गओं।

कर्मवाच्य—रोटी करी कैंसें जाइ ?

भाववाच्य—बस्सत में कहूं जातें।

१९८. क्रिया के सकर्मक तथा अकर्मक दोनों रूप मिलते हैं। कभी-कभी एक ही क्रिया सकर्मक तथा अकर्मक दोनों रूपों में प्रयुक्त होती है—रोटी खाइ लेउ, (सकर्मक) बानें खाइ लओं। (अकर्मक)

बोली में तीनों प्रयोग उपलब्ध हैं—

कर्तरि—हिन्न तों भाजि गओं।

कर्मणि—बानें बु कीरा बचाइ लओं।

भावे—राजा नें रानीं कों बुलबाओं।

१९९. तीनों अर्थों (moods) का प्रयोग भी बोली में मिलता है—

निश्चयार्थ—सो बु चलों मां तें।

आज्ञार्थ—खाओं झटपट ओं चल्देउ।

संभावनार्थ—जो बु आबैं तों वसन न दीजो।

२००. प्रश्नवाचक के रूप स्वर को ऊंचा करके बनते हैं—घज्जाओंगे; घज्जाओंगे ?

कृदंत

२०१. क्रिया रूपों में अतिरिक्त स्वतंत्र रूप से कृदंतों का बड़ी संख्या में प्रयोग मिलता है—प्रकार:

१—पूर्वकालिक कृदंत—इस वर्ग के रूपों की संख्या सबसे अधिक है—जाइ कें, हारि कें, आइ कें, खाइ,

पूर्वकालिक कृदंत शब्द रूप को इकारांत बनाकर (चलि) अथवा उसमें कें जोड़ कर बनते हैं। बहुधा ये दोनों प्रक्रियाएं एक ही शब्द रूप में होती हैं (चलि कें)।

२—क्रियार्थक संज्ञा—(अ) मूलरूप—खाइबों, बैंठिबों, पछताइबों,
(ब) विकृत रूप—करिबे, लुटिबे।

३—वर्तमानकालिक कृदंत—फूंकत्, देत्, खात्, मांजत्।

४—भूतकालिक कृदंत—बांधी, बैठौं, पकीं, कड़ी, चढ़ी, कुढ़ी।

५—पूर्णक्रियाद्योतक कृदंत—मूंदें, बांधें।

६—अपूर्णक्रियाद्योतक कृदंत—धरबाएँ, लिबाएँ।

७—कर्तृवाचक संज्ञा—चलनबारौं।

८—तात्कालिक कृदंत—जेंमंतई, पौंहृचतिखें म।

२०२. इन कृदंतों में से वर्तमानकालिक कृदंत, भूतकालिक कृदंत तथा कर्तृवाचक संज्ञा में लिंग तथा वचन के अनुसार विकार होते हैं—फूंकत् : फूंकति (स्त्री०), चढ़ौं : चढ़ी (स्त्री०) चढ़े (ब० व०), चलनबारौं : चलनबारी (स्त्री०) चलनवारे (ब० व०)

२०३. संयुक्त कृदंत के भी उदाहरण मिलते हैं—ठाड़ौं हृकें

(भूतकालिक + पूर्वकालिक कृदंत)

अव्यय

(i) क्रियाविशेषण

२०४. १—कालवाचक—जब्, तब्, अब्, आजु, कल्लि, परों, तरों, फिरि, हाल्, अभें, पोत्, जों, जो।

२—स्थानवाचक—ऊपर, नीचें, बाह्रि, ढिगां, कऊँ, व्हँ, अंत।

३—निषेधवाचक—नँईं, नाँएँ, नईं, नं, नाँनें (बलार्थक रूप), मति (आज्ञार्थ), नाँईं, बिनां, जिनि (आज्ञार्थ), बिगिरि।

४—परिमाणवाचक—कछू, भोंतु, नेंक, इत्तों, बित्तों, जित्तों, तित्तों गल्ले, निरी।

५—प्रकारवाचक—सीरे, उघारों, सूखों, तरियां, साइदि, अलग्ग।

६—प्रश्नवाचक—कैसें, कैसी, कां, चों।

७—रीतिवाचक—जेंसें, ऐंसों, यों।

८—परिणामदर्शक—तोऊ।

९—कारणवाचक—काए।

२०५. संयुक्त क्रियाविशेषण भी मिलते हैं—अभाल, तोंजूं, तोऊ, काएकों, काएसों। कुछ विशेषण संज्ञा की भांति प्रयुक्त होते हैं—त्रु मां वें चल्दओं।

(ii) समुच्चयबोधक

२०६. १—संयोजक—औरु, औ, तों, सो

२—परिणामदर्शक—तों, नँईं

३—कारणवाचक—काए, कि

४—स्वरूपवाचक—कें, कि

५—विभाजक—कें, कि

६—विरोधदर्शक—पर, पैं, परि, अकिल, बाकी।

७—उद्देश्यवाचक—कि, कें।

८—व्याख्यावाचक—तासें, तासों।

९—संभावनावाचक—जों, अगर।

२०७. कुछ संयुक्त समुच्चयबोधक रूप भी मिलते हैं—जाई सें, चोंकि, नँई तों, काए कि, काए सों कि।

(iii) निश्चयार्थक

२०८. १—समेतार्थक—हो, हूं, हूं, ऊँ, ऊ
२—केवलार्थक—ई, हे
३—बलार्थक—हर (नाम के आगे प्रयुक्त—पोंहपे हर) नाइँ नाऊं, इँ, ई, तों, सिद्धि

(iv) सादृश्यसूचक

२०९. से, सो, सों, सीं, ऍसी, सानीं, सींनीं, साई।

(v) विस्मयादिबोधक

२१०. ठीक, भले, अच्छा, हओ, हँआं, संयुक्त रूप—भोंठ्ठीक।

वाक्य-रचना

२११. बोली में सामान्यतः कर्ता, कर्म तथा क्रिया—वाक्य का यह शब्द-क्रम रहता है। परन्तु इस क्रम का बोलते समय लोग प्रायः उल्लंघन करते हैं। किसी एक विशेष भाव पर बल देने के लिए शब्द-क्रम में बराबर हेरफेर करना पड़ता है। सामान्य वाक्य होगा—मौंड़ा हार गओं हें। अब यदि इस वाक्य में जाने पर बल दिया जाना है तो वाक्य का शब्द-क्रम दूसरा होगा—मौंड़ा गओं हें हार। इसके विपरीत यदि हार का विशेष महत्व है तो वाक्य होगा—हार गओं हें मौंड़ा। विशेषण विशेष्य के पूर्व रहता है तथा क्रिया-विशेषण क्रिया के पूर्व रहता है—धौंरी गइया आगें जात्यें।

२१२. सामान्यतः ग्रामीणों के वार्तालाप में एक वाक्य का अंतिम अंश दूसरे वाक्य के प्रारंभ में दुहरा दिया जाता है—रानी नें छोड़ि दियों बगुला। बगुला छोड़ि दियों तों कचेंरी में पौंचों। वैसे तो यह प्रवृत्ति कहानी कहने अथवा किसी वर्णन को प्रस्तुत करने में मिलती है, परन्तु सामान्य वार्तालाप में भी इस प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं।

२१३. वाक्य का प्रारंभ प्रायः समुच्चयबोधक अव्यय सो अथवा तों से होता है। इस दृष्टि से कोई वर्णन या बात पूरी की पूरी संबद्ध रूप में प्रस्तुत की जाती है। वाक्य सामान्यतः संक्षिप्त होते हैं।

२१४. वाक्य की गठन सामान्य होती है, अथवा एक वाक्य में कई खंड (clauses) हो सकते हैं—

सामान्य वाक्य—बु गाड़ों बैंचिबे गयों।

कई खंडों का वाक्य—तों लंबरदार नें आइ कें कोरिया तें कही कि तू यां कैसों सोइ रओं हें।

बोली में प्रायः सामान्य वाक्यों का ही प्रयोग होता है।

२१५. विशेष बलार्थक क्रिया-रहित वाक्यों का प्रयोग प्रस्तुत बोली में मिलता है—मानसींग खेरा में रहातो। बड़ों बीर रजपूत।

२१६. सामान्य शब्द-क्रम से विहीन वाक्यों का प्रचुर-प्रयोग मिलता है—

जाइ कें ओं साहूकार नें कई।

आपस में बैठे बातचीत कर रहे लोग।

२१७. शब्द-क्रम ऐसे स्थलों पर प्राय: विच्छिन्न मिलता है जहां वक्ता किसी भूले हुए भाव को वाक्य पूरा हो जाने पर भी अंत में एक शब्द अथवा कई शब्दों के सहारे जोड़ देता है—

दोनों भइया सिकार खेलिबे कों जाइबों करैं रोज।
सो खेत में पौंहचे कचरियन के में।

२१८. कोंकनी अंग्रेजी की भांति वाक्य में कभी-कभी क्रिया को दुहरा दिया जाता है—बु आयों डेढ़ द्वैं बरस में अपने घर आयों पद्देस सैं।

२१९. वाक्य के शब्द-क्रम में तो उलट फेर होता ही है, कभी-कभी वाक्य-खंडों का सामान्य क्रम भी बदल जाता है—

उनि के जा झमेले में बारा बजि गए बिगिरि न्हाएं धोएं।

२२०. जैसा कहा गया, बोली में सामान्यतः वाक्य छोटे होते हैं। प्राय: वाक्य-खंडों की योजना भी नहीं होती। परन्तु शिक्षित लोगों की बोली में लंबे वाक्यों तथा वाक्य-खंडों का प्रयोग प्राय: दिखाई देता है। फिर भी सामान्य वक्ता के वाक्य छोटे-छोटे तथा समुच्चयबोधक अव्ययों के सहारे जुड़े हुए रहते हैं। बहुत से स्थानों पर इन समुच्चयबोधक अव्ययों की स्थिति लगभग निरर्थक तथा अनावश्यक रहती है—एक मोंड़ा हो। सो बाकों डोकरा रहातो हार में। तों बु मोंड़ा रहे सो वेहड़ में जाइबों करैं।

२२१. बोली में प्राय: एकशब्दीय वाक्यों की योजना भी रहती है—जातों? यह एक संपूर्ण वाक्य है, जिसका अर्थ होगा—क्या तुम जा रहे हो? इस प्रश्न का उत्तर भी एक ही शब्द में दिया जा सकता है—जातें। जिसका अर्थ होगा—'हाँ, मैं जा रहा हूं।'

२२२. सामान्यतः वाक्य-विन्यास पर बाह्य प्रभाव बहुत कम दृष्टिगोचर होते हैं। बाह तहसील के ऐसे व्यक्ति जो कलकत्ते में कई पुश्तों से रहते आ रहे हैं उनकी बोली में अवश्य कभी-कभी बंगाली वाक्य-विन्यास की झलक दिखाई दे जाती है। बंगाली भाषा में निषेधार्थक अव्यय प्राय: वाक्य के अंत में रहता है, जब कि हिन्दी में अधिकतर क्रिया के पूर्व रहता है। बंगाली वाक्य-विन्यास की यह प्रवृत्ति उपर्युक्त व्रजभाषाभाषियों में भी मिलती है—बे सकेंगे नाएँ

पादपूरक (Mannerisms)

२२३. बोली में विशिष्ट व्यक्तियों के पादपूरकों अथवा तकियाकलामों (बा कों नाउं का हें, जाइ कानें चइयें आदि) के अतिरिक्त कुछ पादपूरकों का प्रयोग सामान्यतः होता है। वाक्य के प्रारंभ अथवा अंत में कई का प्रयोग बहुधा

मिलता है—कई बे दिन नाँएँ अब, हों नाँएँ जातु कों कई। कुछ स्थलों पर तो कई का अप्रत्यक्ष अर्थ रहता है—उसने कहा। पर बहुत से प्रयोगों में यह शब्द निरर्थक भी रहता है।—बगुला नें कई मेरी हंसिनी कों कहाँ लिबाएँ जातु एँ हंस कई। यहां दूसरा कई का प्रयोग एकदम निरर्थक है।

२२४. वाक्य के बीच बीच में का पूँछतों, का ओ, का होतो, न होइ तों, हम बताइ दं, हति का हें का प्रयोग बहुधा होता है। को जानीं का प्रयोग स्त्रियां अधिक करती हैं—को जानीं हम रोटी कल्लेंइ। एक स्वतंत्र पादपूरक है ब है (बड़ों ब हें) जिसका अर्थ सामान्यतः होता है अवांछनीय। क्रिया अथवा सहायक क्रिया के आगे कभी-कभी निरर्थक के अथवा कों का प्रयोग होता है—

लेंइ जात के, खाँएँ लेत कों, जात हत के।

२२५. निश्चयार्थक पादपूरकों में नाँईं तथा हर् का व्यापक प्रयोग होता है। खाई कें नाँईं जाई पौंचों—नाँईं का एक दूसरा रूप नांऊँ का भी है—जाइ कें नांऊं बोलों। हर् व्यक्तियों के नाम के आगे प्रायः जोड़ दिया जाता है—पींहिपे हर्, डब्बल हर्।

२२६. किसी भाव का मजाक बनाने के लिए या उसे तुच्छ सिद्ध करने के लिए उसके वाची शब्द के आगे—गर जोड़ दिया जाता है—पंपगर (पापर), अमंगर (आम्)

२२७. कहानी कहते समय अथवा किसी वर्णन को प्रस्तुत करते समय प्रायः अंतर्वक्ताओं के नामों का उल्लेख नहीं किया जाता।

शपथ ग्रहण (Oaths)

२२८. सामान्य जनता के वार्तालाप में बार-बार शपथ ग्रहण करने की परिपाटी दिखाई देती है। तेई सों, मेई सों, जमुनां तंन् हाथु एँ, बिद्या किसम् आदि प्रचलित शपथें हैं। पर सबसे अधिक प्रचलित शपथ है—सिग्गरई (सब घर की सौगंध)। शपथ की मांग करने वाला पूछता है— सिग्गरई ? उसका उत्तर मिलता है—सिग्गरई।

मुहाविरे तथा कहावतें

२२९. आगरा की बोली की स्थानीय विशेषताओं में मुहाविरे तथा कहावतें भी हैं। वार्तालाप के समय इनका प्रयोग शिक्षित तथा अशिक्षितों द्वारा प्रायः समान रूप से होता है। इन मुहाविरों तथा कहावतों का प्रयोग-क्षेत्र कभी व्यापक तथा कभी सीमित हो सकता है। उदाहरण की दृष्टि से कुछ स्थानीय मुहाविरे तथा कहावतें नीचे दी जा रही हैं। वैसे तो यह एक संपूर्ण अध्ययन का स्वतंत्र विषय है।

२३०. मुहाविरे

काइ बोंहार	(काम काज)
गोड़ खंगाए	(आवश्यकता से अधिक रुकना)
झक्क हैं	(ठीक है)
टटूंगों देउ	(समाप्त करो)
टोंल्लबों	(जीत लिया)
डाटि लओं	(रोक लिया)
डाबकडइया	(डूबना-उतराना)
डूंड़ पें धरों हैं	(बिना किसी झंझट के कार्य हो सकता है)
पल्लें हों गई	(गज़ब हो गया)
पोरा पसार	(हाथ ऊंचा किए हुए आदमी के बराबर)
फिरें अंडूखन में	(निरर्थक प्रयत्न)
बेझर तुलाइबें	(कुछ गरज़ नहीं)
लें लेउ लभेरे	(निरर्थक प्रयत्न)
सूधों हैं गओं	(लड़ाई के लिए तैयार)
हनि कें	(अच्छी तरह से)
होत कत्त में	(धीरे-धीरे)

२३१. कहावतें

प्रायः सभी कहावतों के पीछे कुछ आधारभूत घटनाएं होती हैं। कुछ स्थानीय कहावतें हैं—

असाढ़ में ब्यानी घोंदुनियां साउन में कह बड़ी बस्सा भई।
(कम अवस्था पर गंभीर अथवा अनुभवपूर्ण बात कहने की चेष्टा करना)

कहि देउ तों मौंसी कों काजरु।
(किसी अप्रिय बात कहने से बचना)

गिनें न गूंठें हों लाड़न की बुआ।
(बिना किसी अधिकार के अपना महत्व प्रतिपादित करना)

छिरियन पें को हैं कई भोंना, बैंठी क्यों हैं रोवति क्यों ना ?
(अनधिकारी व्यक्ति से काम करवाना)

तीन पाउ जोंड़री ओं ताजगंज में लेवा देई।
(थोड़ी बात को बहुत बढ़ाना)

नाऊ बारी के जिय सों।
(बड़ी कठिनाई से)

बधिया मरी सो मरी आगरों तों देखों।

(किसी बुरे काम में भी अच्छाई निकाल लेना)

भेंसि कों खोआ।

(अधिक लालच की भावना)

मेरे कान के लीले डोरा।

(अपने को पहले ही किसी काम की ज़िम्मेदारी से बरी कर लेना)

सोई मेरी धनुआ की कें।

(हर बात में मिथ्या अनुकरण करना)

हों मोंड़ा बिन् कैसें रहों, मोंड़ा मोंड़ा बिन् कसें रहें।

(हर वस्तु तथा व्यक्ति को निरर्थक ही अपरिहार्य सिद्ध करने का प्रयत्न)

२३२. जिले की कहावतों में अश्लीलता का सामान्य अंश प्रायः मिलता है। कहावत कहने के पूर्व बहुधा 'कई' पादपूरक का प्रयोग होता है। पद्य में कही जाने वाली कहावत 'सलोखरा' कहलाती है।

शब्द-समूह

२३३. बोली का शब्द-समूह पांच वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—(१) तत्सम, (२) तद्भव, (३) देशज, (४) विदेशी तथा (५) स्थानीय। विभिन्न तहसीलों से संकलित सोलह नमूनों के आधार पर लेखक ने शब्द-समूह का जो विश्लेषण किया है, वह इस प्रकार है—

(१) तत्सम — ५ प्रतिशत
अर्द्ध तत्सम — ५।६ प्रतिशत
(२) तद्भव — ४१ प्रतिशत
(३) देशज — १४ प्रतिशत
(४) विदेशी — १९ प्रतिशत (फारसी शब्द १५॥ प्र०श० + अंग्रेजी शब्द ३॥ प्रतिशत)
(५) स्थानीय — २० प्रतिशत

२३४. उपर्युक्त विश्लेषण में क्रियाविश्लेषण के अतिरिक्त समस्त अव्ययों, क्रियाओं, सहायक क्रियाओं, सर्वनामों तथा परसर्गों की गणना नहीं की गई है। देशज शब्दों की प्रकृति अंतिम रूप से निश्चित न होने के कारण उनके प्रतिशत में कुछ परिवर्तन स्वाभाविक है।

२३५. संस्कृत तत्सम शब्दों की संख्या बोली में बहुत कम है। सीमित गणना के आधार पर शब्द-समूह का पांच प्रतिशत भाग तत्सम शब्दों का है। कहानियों अथवा लोक-गीतों में तो इन तत्सम शब्दों का कुछ प्रयोग मिलता भी है (समर, अन्यायी, देव, अनीति), परन्तु ग्रामीणों के सामान्य वार्तालाप में तत्सम शब्दों की संख्या प्रायः नहीं के बराबर मिलती है। शिक्षित व्यक्तियों की बोली में तत्सम शब्दों की संख्या अवश्य कुछ अधिक पाई जाती है।

२३६. बोली में कुछ अर्द्ध-तत्सम जैसे शब्दों का प्रयोग मिलता है— दरब, पज्जा, पारखों (पार्षद)। इस प्रकार का शब्द-समूह ५।६ प्रतिशत के लगभग है। इस वर्ग के शब्द नितांत अशिक्षित व्यक्तियों द्वारा ही प्रयुक्त होते हैं।

२३७. शब्द-समूह का सबसे बड़ा भाग तद्भव शब्दों का है। इस वर्ग के शब्द प्राय: चालीस प्रतिशत से अधिक हैं। बहुत से संस्कृत के तद्भव शब्द उच्चारण आदि की दृष्टि से बोली में स्थानीय से लगने लगते हैं—बब्बराबाहन् (वभ्रुवाहन), द्रुपतिया।

२३८. बोली में विदेशी शब्द बड़ी संख्या में प्रयुक्त होते हैं। सीमित गणना में बीस प्रतिशत शब्द-समूह विदेशी (मुख्यत: फ़ारसी तथा अंग्रेजी) ठहरता है। बहुत से शब्द तो उच्चारण आदि की दृष्टि से बोली की सामान्य प्रकृति में इतना अधिक घुल-मिल गए हैं कि वे सहसा विदेशी प्रतीत नहीं होते—बजें (वजह), गाड्ड (गार्ड), परिमानों (परवाना)।

२३९. विदेशी शब्द मुख्यत: विदेशी संस्थाओं (कचहरी, फौज, स्कूल, अस्पताल) के माध्यम से आए हैं, अथवा किन्हीं विदेशी वस्तुओं के नाम हैं।

२४०. विदेशी शब्दों में सबसे बड़ी संख्या (शब्द-समूह का १५३/१२ प्रतिशत) फ़ारसी शब्दों की है—अरजि, असलि, इंजाम, इंसाफ, करेजों, कास्त, गदर्, गरीब्, जंग, जप्त, जमानों, तवियत्, तेंसील, देंहसति, नफा, निकुसान्, परिमानों पेंदा, फकीर, फरार, फारखती, फौंज्, बखत्, बजार, बजें, नदी, बिसमार, बेईमानी, मुखबिरी, मुसकिल्, रुजगार, सरीक्, हुकुम।

२४१. बोली में अरबी शब्द (मालिम्) फ़ारसी के माध्यम से ही आए हैं। कुछ तुर्की शब्दों (केंची, चक्कू) का प्रयोग भी मिलता है।

२४२. यूरोपीय भाषाओं में सबसे अधिक शब्द अंग्रेजी के हैं। फिर भी यह स्मरणीय है कि अंग्रेजी शिक्षित व्यक्तियों को छोड़ कर सामान्य जनता की बोली में अंग्रेजी शब्दों की संख्या बहुत कम है। सीमित शब्द-गणना के अनुसार बोली में ३३/१२ प्रतिशत शब्द अंग्रेजी के हैं। फ़ारसी शब्दों (बोली का १५३/१२ प्रतिशत) की तुलना में उनकी संख्या बहुत कम है—

अंजन्, गाड्ड, टिकट्, डांकदर, पुलिस्, फरलांगॅ्, फेंर, बंक्, बस्, मोंटर्, रेल्, सॅनबोट्, हल्ट।

२४३. शिक्षा तथा संस्कृति के बढ़ते हुए उपकरणों के साथ स्टेंडर्ड हिन्दी तथा अंग्रेजी शब्दों का बोली में प्रयोग क्रमशः बढ़ता जा रहा है (§२९९)।

२४४. अन्य यूरोपीय भाषाओं में से कुछ पोर्चुगीज़ भाषा के शब्द (इल्मारी) तथा कुछ फ्रेंच भाषा के शब्द (कास्तूस-कार्तूस) प्रयुक्त मिलते हैं।

२४५. विशिष्ट संपर्क के कारण कुछ बंगाली भाषा के शब्द सीमित रूप में बोली में प्रयुक्त होते हैं। आगरा जिले का चतुर्वेदी ब्राह्मण समाज (मुख्यत: जिले के पूर्वी भाग में केंद्रित) लगभग एक सौ वर्षों से व्यवसाय के कारण कलकत्ते से संबद्ध रहा है। इस लंबे संपर्क के फलस्वरूप कुछ बंगाली शब्द उनकी बोली में प्रयुक्त

होने लगे हैं—जुगाड़ (युक्ति), तल्ला (Storey), बेसी (अधिक), बोताम् (बटन), सेस (अंत)। ये शब्द चतुर्वेदी लोगों के अतिरिक्त प्रायः प्रयोग में नहीं लाए जाते।

२४६. जिले की बोली में स्थानीय शब्द बहुत बड़ी संख्या में प्रयुक्त होते हैं। सीमित गणना के अनुसार बोली के शब्द-समूह का बीस प्रतिशत भाग स्थानीय शब्दों का है। ये शब्द अर्थ तथा प्रयोग की दृष्टि से विशेष अध्ययन की अपेक्षा रखते हैं। इस वर्ग की शब्दावली के प्रयोग की व्यापकता भिन्न-भिन्न स्तर की हो सकती है। कुछ शब्द पूरे जिले में बोले तथा समझे जाते हैं, कुछ किसी एक तहसील में तथा कुछ किसी एक विशिष्ट प्रदेश में ही सीमित हो सकते हैं। साथ ही इनमें से कुछ शब्द संस्कृत से विकसित हैं तथा एक बड़ा वर्ग जिले की जनता द्वारा स्वतः ही बनाया गया है। कुछ शब्द तो सामान्यतः प्रयुक्त अंग्रेजी शब्दों से गढ़ लिए गए हैं। मक्खन निकाले—सेपरेटेड—दूध से जमाए गए दही को सपरेटा कहा जाता है।

२४७. स्थानीय शब्दावली कई प्रकार की हो सकती है (१) सामान्य (२) विभिन्न ग्रामीण उद्योगों तथा व्यवसायों से संबद्ध पारिभाषिक शब्दावली (३) विशिष्ट शब्द प्रयोग-स्लांग। ये सभी प्रकार के शब्द सामान्य जनता द्वारा नित्य प्रति की बोल-चाल में बनते हैं। उद्गम की दृष्टि से कुछ शब्द संस्कृत के आधार पर बनते हैं (दुपतिया : द्वितीय पंक्ति) कुछ अनुरणनात्मक (onomatopoeic) होते हैं : (लकलकाओं) तथा कुछ की सृष्टि उपमान (analogy) के कारण होती है (मिलकाई)। पर इस स्थानीय शब्द-समूह का एक बड़ा भाग अर्थ की दृष्टि से प्रायः बिना किसी संगत तर्कों के बनता है (खोंँस, मुकतोंं, सकलड़)।

२४८. स्थानीय शब्दावली के कारण बोली का शब्द-समूह अत्यन्त समृद्ध है। सामान्य ग्रामीण जीवन की प्रत्येक वस्तु तथा परिस्थिति को द्योतित करने के लिए अलग-अलग शब्द हैं। अलिखित बोली होने के कारण एक ही शब्द के प्रायः कई पर्याय मिल जाते हैं (गल्ले, मुकतों, भोंत्)। अर्थ के सूक्ष्म भेदों को व्यक्त करने के लिए अलग-अलग शब्दों का विधान है। (मो पें काम फबतु नाँएँ—मैं यह काम सुविधापूर्वक नहीं कर सकता, जा काम की मोइ संबई नाँएँ—यह कार्य करना मेरे लिए संभव नहीं है।) स्थानीय बोली की कुछ क्रियाएं प्रायः अनायास ही संज्ञाओं से बन जाती हैं (नामधातु) डुकरियाइ : डोकर (वृद्ध), झकरियाइ : झकरा, जूता : जुतियाइ।

२४९. सामान्य स्थानीय शब्दावली में से कुछ शब्द उनके अर्थ तथा प्रयोग के साथ नीचे दिये जा रहे हैं। इनमें से अधिकांश शब्द स्वतंत्र रूप से बाह तहसील से संकलित किए गए हैं।

(सं०—संज्ञा, क्रि०—क्रिया, वि०—विशेषण, क्रि० वि—क्रिया विशेषण, कृ०—कृदंत, स०—समुच्चय बोधक)

अंगा—(सं०) मोटी रोटी—कोरी नें चारि अंगा कल्लए (कोरी ने चार मोटी रोटियाँ बना लीं)।

अंत—(क्रि० वि०) अन्यत्र—मोंड़ें कहूं अंत देखों (लड़के को कहीं अन्यत्र ढूंढ़ो)।

अकिलें—(स०) परंतु—हों तों जातों अकिलें मोंड़ा की हालियत् ठीक नाएं (मैं तो जाता पर लड़के की हालत ठीक नहीं है)।

अछीकर—(वि०) शुद्ध, अछूता—अछीकर धोती सें रोटी करी हैं (शुद्ध धोती पहिन कर खाना बनाया है)।

अथएं—(स०) संध्या—अथएं नों आइ जइयो (संध्या तक आ जाना)। यह शब्द अर्थ-संकोच का सुंदर उदाहरण है। अथएं का अर्थ वस्तुतः अस्त होने पर है। किन्तु यहां केवल सूर्य के अस्त होने का भाव है।

अनुआं—(स०) बहाना, दोष—बापें अनुआं धद्दओं (उस पर दोष रख दिया)।

अपराज्—(सं०) शाप—रानीं नें बाइ अपराज् दओं (रानी ने उसे शाप दिया)।

अपुठारों—(क्रि० वि०) स्वतः—बु अपुठारों ईं आइ जेंहें (वह स्वतः ही आ जाएगा)।

(अ) फाइ दई—(क्रि०) दे दी, सौंप दी—घुड़िया वानें मोंड़ें अफाई दई (उसने घोड़ी लड़के को दे दी)। अफाइ में कभी कभी आदि स्वर का लोप हो जाता है—फाइ।

अफारों—(सं०) असंतुष्ट—ब हमेसई कों अफारों हैं (वह सदा ही असंतुष्ट रहता है)।

अबार—(सं०) देर—अब तों बड़ी अबार हैं गईं (अब तो बहुत देर हो गई)।

अरारें—(क्रि० वि०) आगे—अरारें आइ जाउ (आगे आ जाओ—लड़ाई के लिए आमंत्रण)।

आँतों—(कृ०) ऊबा हुआ, परेशान—काम कत्त आंतों हों गओं (वह काम करते-करते परेशान हो गया)।

आदों—(सं०) : अदरक-नेंक आदों होइ तों देते (थोड़ी अदरक हो तो दे दो)।

उढ़नां—(सं०) वस्त्र—बानें उढ़नां सब पानी में डाइए (उसने सारे वस्त्र पानी में डाल दिए)।

उछीर्—(सं०) भीड़ का न होना, शांति—उछीर में जाइ कें न्हाइ अइयो (भीड़ कम होने पर नहा आना)।

उजीतों—(सं०) प्रकाश—जब नें कऊ उजीतों नंई रहों (जब थोड़ा भी प्रकाश नहीं रहा)।

उन्हारी—(सं०) जाड़े की फ़सल—उन्हारी तइयार ठाड़ी हें (जाड़े की फ़सल तैयार है)।

ऊपेंत्—(सं०) उपद्रव—जि ऊपेंत् को करें (यह उपद्रव कौन करे ?)।

ओर—(सं०) प्रारंभ, पक्ष—हमनें तों ओर् सें ई कहि दई (हमने तो प्रारंभ में ही कह दिया था)।

जे उनकिअ ओर लेतें (ये उन्हीं का पक्ष लेते हैं)।

ओरें—(क्रि० वि०) बराबर—पानी ओरें ई बरसतु आओं। (पानी बराबर बरसता ही आया)।

ओसर्—(सं०) नई ब्याने वाली गाय—ओसर् कां बान्दई हें (ओसर को कहां बांध दिया है ?)।

ओंटपाय—(सं०) उपद्रव—अब् ओंटपाय जिनि करों। (अब उपद्रव मत करो)।

ओंड़ों—(वि०) गहरा—कुआ जि भोंत् ओंड़ों हें (यह कुआ बहुत गहरा है)।

कँपों—(सं०) दलदल—मां घोंटुन कँपों हें। (वहां घुटनों तक दलदल है)।

कटऊँ—(कृ०) किसी द्रव्य के तैयार होने के पूर्व ही उसका सौदा तै कर लेना—दूध चास्सेर कों कटऊँ होतो। (एक रुपया का चार सेर दूध कटऊँ होता था)। आगरा के देहातों में दूध तथा घी प्रायः कटऊँ किया जाता है।

कटोंरा—(सं०) मोटे तथा कम घी के पराठे—चारि कटोंरा मोऊएँ डाद्दीजो। (चार पराठे मेरे लिए भी बना लेना)।

कपट्—(क्रि०) काटना—बार कपटबाई लेउ (बालों को कटवा लो)।

करकों—(सं०) नदी किनारे का प्रदेश—चेंबिल् कों करकों गहें चले जाउ। (चंबल नदी के किनारे-किनारे चले जाओ)।

किंछि—(क्रि०) छिड़कना—छत्ति पें पानी किंछि देउ। (छत पर पानी छिड़क दो)।

कीकिबों—(कृ०) चिल्लाना—बे दिन रात् कीकिबों ई कत्तें (वे दिन रात चिल्लाते ही रहते हैं)।

कुतक्का—(सं०) अगूंठा—लैं लेउ कुतक्का (यह प्रयोग मुख्यतः बच्चों को चिढ़ाने के लिए होता है)।

कोंडुंआ—(सं०) चक्कर—ब मँईं कोंडुआ देत रहों (वह वहीं चक्कर लगाता रहा)।

कोतीं—(परसर्ग) स्थान पर—मेई कोतीं जि चलों जेंहैं (मेरे स्थान पर यह चला जायगा)।

खटक्, खटका—(सं०) चिंता—राति कों नेंक खटक राखियो (रात में थोड़ी चिन्ता रखना)।

खड़ेरा—(सं०) खंडहर—घर् बिनिकों खड़ेरा हैं गओं हैं (उनका घर खंडहर हो गया है)।

खतु—(सं०) घाव—बंदरा साई खतु हैं गओं हैं (बंदर के फोड़े के समान हो गया है)। यह वाक्य मुहाविरे की भांति प्रयुक्त होता है।

खन्—(सं०) समय—जा खन मो पें कछू नाँएं (इस समय मेरे पास कुछ नहीं है)।

खेंहारों—(सं०) उपद्रवी—त्याओं मौंड़ा बड़ों खेंहारों हैं गओं हैं (तुम्हारा लड़का बहुत उपद्रवी हो गया है)।

खांद्—(सं०) ढालू जगह—खांद् पें इक्कें रोक्कि लीजो (ढालू स्थान पर इक्के को रोक लेना)।

खोंसु—(सं०) हानि—हमाओं का खोंसु कल्लेंहों (हमारा तुम क्या बिगाड़ लोगे)।

गल्ले—(वि०) उढ़नां तों गल्ले हैं मालिक (मालिक मेरे पास पहिनने के कपड़े तो बहुत हैं)।

गुलकि—(क्रि०) छिपना—ब् मँईं गुलकि गओं (वह वहीं छिप गया)।

गोंड़ा—(सं०) घर के बाहर का हिस्सा, जिसमें प्रायः पशु बाँधे जाते हैं—गोंड़ा की टीनि गिरि परी। (गोंड़ा की टीन गिर पड़ी)।

गोंड़ें—(सं०) सीमांत—गांउं के गोंड़ें लोखो निकरीं (गांव के पास से लोमड़ी निकली)।

घालों—(क्रि०) फेंका—रनियां घालों डेल्। (रानी ने एक ढेला फेंका)। यह क्रिया रूप राजस्थानी में भी मिलता है।

घूघसि—(सं०) गांव के पीछे का हिस्सा, जहां सामान्यतः कूड़ा फेंका जाता है—यंतें ब् घूघसि में घँसि गओं (यहां से वह घूघसि में घुस गया)।

घोंदू—(सं०) गीदड़—तँईं घोंदू बोले। (तब गीदड़ बोला)।

चचौं दौं—(सं०) उपद्रव—मौं ड़न नें भारी चचौं दौं करौं हैं (लड़कों ने बहुत उपद्रव किया है)।

चौं ट्—(सं०) घर के सामने का बड़ा चबूतरा—चौं ट् पें जाइ कें खलौं (चबूतरे पर जा कर खेलो)। इस शब्द का प्रयोग मुख्यत: बाह तहसील में सीमित है।

जंगी—(वि०) बड़ा—जि जंगी हाथी (इतना बड़ा हाथी)।

जरां, जौंरें—(क्रि० वि०) पास—लला नें क मेरे जरां बैंठि जा (बेटे जरा मेरे पास बैठ जाओ)।

ज्वारौं—(सं०) बैलों की जोड़ी—अब की मेला पें ज्वारौं लेंहौं (अब की बार मेले से बैलों की जोड़ी लूंगा)।

जेंगरा—(सं०) गाय का छोटा बछड़ा—जेंगरैं ढील देउ (बछड़े को छोड़ दो)।

जोर्—(सं०) बेला—द्वै जोर उनिकें खाइबे कौं नाँएं (उनके यहां दोनों बेला खाने के लिए नहीं है)।

झंडेलन्—(सं०) अंधा कुआ—ल्हासैं झंडेलन् में डाद्दई (लाशों को अंधे कुएं में डाल दिया)।

झरां—(क्रि० वि०) एकदम—राति झरां बरसौं हैं (रात को एकदम पानी बरसा है)।

झिकेंगौं—(क्रि०) संतुष्ट होना—ब नाँएं अभें झिकौं (वह अभी संतुष्ट नहीं हुआ)।

झिक्क—(सं०) छेद—छत्ति में द्वै झिक्क हैं गए (छत में दो छेद हो गए हैं।)

झेंग—(सं०) दोनों हाथों से पकड़ लेना—उठि कें बानें पंडित की झेंम भल्लई (उठकर उसने पण्डित को दोनों हाथों से पकड़ लिया)।

टटूंगौं—(सं०) जलती हुई लकड़ी—बाके म्हौं में देउ टटूंगौं (उसके मुंह में जलती लकड़ी दे दो)। यह प्रयोग मुख्यत: किसी को अपशब्द कहने के लिए होता है।

टपका—(सं०) आम—खाएं निबौंरी बताबें टपका (निबौरी खाकर उसे आम बताता है)।

टीक्—(सं०) मस्तक के बीच का भाग—लठिया टीक् में लगी (लाठी उसके मस्तक के बीच में लगी)।

टौंगला—(सं०) रुपया—मां नाँएं धरे टौंगला (वहां रुपए नहीं रक्खे हैं)। इस शब्द का प्रयोग खिल्ली उड़ाने के लिए होता है।

ठरगजों—(सं०) असंतुष्ट—तू बड़ोंई ठरगजों हैं। (तू सदैव ही असंतुष्ट रहता है)।

ठारि—(सं०) कछवारी का स्थान—मोंहनां की ठारि के ढिगां हैं। (मोहना की ठारि के पास है)।

डबका—(सं०) संदेह—मोई तों पैलेंई डबका हो। (मुझे तो पहले ही संदेह था)।

डीउं—(सं०) दीमक—मढ़ा में डीउं बैंठि गई। (अंदर के कमरे में दीमक लग गई)।

डोलडाल—(सं०) शौच—व् डोलडाल कू गओं हैं। (वह शौच के लिए गया है)।

डोंढ्यों—(क्रि० वि०) अलग—मो सैं डोंढ्यों सोइ जा। (मुझसे अलग सो जा)।

ढाँक्—(सं०) सर्प-विष को उतारने के लिए थाली बजाना—राति ढाँक् बजति रही। (रात को ढाँक बजती रही)।

ढोंरी—(सं०)आदत—जा मोंड़ी की बुरी ढोंरी परि गई हैं। (इस लड़की की बुरी आदत पड़ गई है)।

तंदउआ—(सं०) सिर को ढंककर चादर ओढ़ना—वें तंदउआ व तों सोइ गओं। (वह तो सिर तक चादर ढंक कर सो गया)।

तथा—(सं०) शक्ति, सामर्थ्य—डोकर् में अब तथा नाँएं रही। (पिता में अब सामर्थ्य नहीं है)।

तीतीं—(वि०) गीली—लकड़ियां सिग् तीती धरी हैं। (लकड़ियां बिल्कुल भींगी रक्खी हैं)।

तोरु—(सं०) फैसला—तीन् रुपइया पै तोरु हौं गओं। (तीन रुपए पर फसला हो गया)।

तोंनार—(सं०) कुशलता—जा काम में तोंनार की का जरूरत है। (इस कार्य में विशेष कुशलता की क्या आवश्यकता है?)।

थोक्—(सं०) वर्ग—जाफत् में सबई थोक् आइ गए। (दावत में सभी वर्ग के लोग आ गए)।

थोरिया—(सं०) कम उम्र की भैंस—बिनि की थोरिया खेत में घंसि गई (उनकी भैंस खेत में घुस गई)।

दगरों—(सं०) पगडण्डी—जई दगरों गहें चले जाओं (इसी पगडंडी पर चले जाओ)।

दांति—(सं०) पत्थर-दांति पैं आइ कें मंगरा बैंठि गओं (मगर आकर पत्थर पर बैठ गया)।

दुपतिया—(सं०) द्वितीय पंक्ति, निम्न जाति के लोग—दुपतिया बादि में बैंठेंगे (निम्न जाति के लोग बाद में खाना खाने के लिए बैठेंगे)।

दौंड़—(सं०) पुलिस—बाई खन गाउं में दौंड़ आइ गई (उसी समय गांव में पुलिस आ गई)।

धपां—(क्रि० वि०) एकदम—यंतें धपां गओं (यहां से वह एकदम भाग गया)।

नहि—(क्रि०) जोतना—पड़रा नहि देउ (पड़ों को हल में जोत दो)।

निच्चू—(वि०) निश्चिंत—खाइ पी कें निच्चू हें गए (खा पीकर निश्चिंत हो गए)।

निल्ले—(वि०) अकेले—काम् हों निल्ले पैं नाँएं कस्सकत् (काम में अकेले नहीं कर सकता)।

निसोत्—(वि०) बिल्कुल—करिया निसोत् आदिमी बैंठो। (बिल्कुल काला आदमी बैठा था)।

नेठम्—(क्रि० वि०) एकदम—ब नेठम् पोंहोंचि गओं। (वह एकदम पहुंच गया)।

पंगति—(सं०) दावत—पोंहपे कें बड़ी भारी पंगति ही। (पोहपे के यहां बड़ा भारी दावत थी)।

पंगति (पंक्ति) का भाव लोगों का पंक्तिबद्ध खाना है।

पांति—(सं०) पंक्ति, दावत—बगुलन की पांति की पांति चली जाती, ब नाँएं पांति देतु (बगुलों की पंक्तियां उड़ती जा रही थीं, वह दावत नहीं देगा)।

पुंगा—(सं०) उपद्रवी युवक—घर् पैं चारि पुंगा चढ़ि आए (घर पर चार उद्रपवी युवक चढ़ आए)।

पठोंनीं—(सं०) मां की ओर से लड़कियों को ससुराल में भेजी जाने वाली भेंट—रमदिला पठोंनीं लें कें गओं हें (रमदिला पठोनीं लेकर गया है)।

पढ़ेरों, पढ़ेरी—(सं०) घर में पीने का पानी रखने का स्थान—मथनियां पढ़ेरी पैं धरी हें (छोटा घड़ा पढ़ैरी पर रक्खा है)।

इस शब्द का प्रयोग कुम्हार द्वारा दिए जाने वाले बरतनों के लिए भी होता है। ल्हौंका नें पढ़ेरों नाँएं दओं (ल्हौका ने पानी के बरतन अभी नहीं दिए)।

पनेंठा—(सं०) चाबुक—हार् में ई पनेंठा रहि गओं (चाबुक खेतों पर ही रह गया)।

पन्हाँ—(सं०) जूता—चमार् पैं तें पन्हाँ लें लेउ (चमार से जूते ले लो)।

पसों—(सं०) दोनों हाथ भर कर—चून् पसों भरि कें तों देते (दोनों हाथ भर कर आटा तो देते)।

पींड़ि—(सं०) वृक्ष का तना—पीड़ि में सैं सोटें करवाइ लईं (तने में से छत छाने की लकड़ी करवा लीं)।

पैंड़ों—(सं०) प्रतीक्षा, यात्रा का भोजन—संजा नों त्याओं पैंड़ों दिखत रह्यो, पैंड़ों संग लेत् जइयो (शाम तक तुम्हारी प्रतीक्षा होती रही, यात्रा-भोजन साथ लेते जाना)।

पोईस—भीड़ का द्योतक रूप—मां पोईस बोलि रही ३ (वहां बहुत अधिक भीड़ थी)।

फबतु—(क्रि०) सुविधापूर्वक काम न कर सकना—मो पैं अभें फबतु नाँएं (मैं यह काम अभी सुविधापूर्वक नहीं कर सकता)।

फरिया—(सं०) लंहगे के साथ सिर पर ओढ़ा जाने वाला स्त्रियों का वस्त्र—मेई फरियऊ फटि गई (मेरे ओढ़ने का वस्त्र फट गया है)।

बंजु—(सं०, क्रि०) वाणिज्य—जि बंजु ठीक नाँएं (यह व्यापार ठीक नहीं है) इस शब्द का प्रयोग क्रिया के रूप में भी होता है—तुमनें बाइ खूब बंजों (तुमने उसके साथ अच्छा व्यापार किया)। क्रिया के रूप में बंजों का अर्थ वस्तुतः व्यापार में ठगना होता है।

बट्टा—(सं०) शीशा, दर्पण—अपओं म्हों तों देखों नेंक बट्टा में (अपना मुंह तो जरा शीशे में देखो)।

बत्त—(सं०) कुएं से पानी खींचने की बड़ी रस्सी—बत्त बांधि कें सुत्तों हें गओं (रस्सी बांध कर वह निश्चिंत हो गया)।

बनाएं—(क्रि० वि०) एकदम—ब बनाएं लटि गओं हें (वह एकदम दुर्बल हो गया है)।

बिड़ारों—(क्रि०) भगाया—नेंक् कुत्तें बिड़ाद्देउ (ज़रा कुत्ते को भगा दो)।

बिलुकि—(क्रि०) छिपना—घोंदुआ मंईं बिलुकि गओं (गीदड़ वहीं छिप गया)।

बींधनों—(सं०) दलदल—खार् में बींधनों हें गओं हें (खार में दलदल हो गया है)।

बीजना—(सं०) पंखा—म्हों पैंनेंक बीजना कद्देउ (मुंह पर ज़रा पंखा हांक दो)।

बेड़िनी—(सं०) वेश्या—राति बेड़िनी कों नाँचु भओं (रात को वेश्या का नृत्य हुआ)।

बेंमां—(सं०) तैरने के हाथ—चारि बेंमनि में इँ पार हू (चार हाथ तैर कर ही किनारे पहुंच जाएंगे)।

भगरों—(सं०) बहाना—बू हमेसई भगरे कत्व (वह सदैव बहाने बनाता रहता है)।

भाभई—(सं०) आपत्ति, मृत्यु—काए कों त्याई भाभई घेरें फित्यें (तुम्हारे सिर पर मृत्यु क्यों मंडरा रही है ?)।—

भोलुआ—(सं०) मिट्टी का कुल्हड़—भोलुआ में पानी दें देउ (कुल्हड़ में पानी दे दो)।

मंथना—(सं०) पानी का घड़ा—मंथननि में पानी भरों हैं (घड़ों में पानी भरा हुआ है)।

मचबा—(सं०) खाट का पाया—हाट में मचवा मिलें तों लें आमें (हाट में यदि पाए मिलें तो ले आवें)।

मढ़ा—(सं०) घर में अंदर का कमरा—बे पकरि कें मढ़ा में डाहूए (उनको पकड़ कर अंदर कमरे में बंद कर दिया)।

मसरें टि कें—(क्रि० वि०) जोर से—पोंहूंचा मसरें टि कें गहि लओं (पहुंचा ज़ोर से पकड़ लिया)।

महुअरि—(सं०) सपेरे की बीन—बाकी महुअरि तोंनों बजति रही (उसकी बीन तब तक बजती रही)।

माइति—(क्रि०) मालूम होना—मोइ नांएं माइति (मुझे मालूम नहीं)।

माइनें—(सं०) निष्कर्ष युक्त कहानी—एक माइनें कहातों (एक निष्कर्ष युक्त कहानी कहता हूं)।

मिलकाइ—(क्रि०) जलाना—लालटेंन् तों मिलकाइ लेते (लालटेंन तो जला लेते)।

मुकते—(वि०) बहुत—आदिमी मुकते हें (बहुत आदमी हैं)।

ररकि—(क्रि०) खिसकना—चोट्टा मंई तें ररकों (चोर वहीं से खिसका)।

रासों—(सं०) झगड़ा—इनिके रासे में को परें (इनके झगड़े में कौन पड़े ?)।

रेंबारों—(सं०) अंट-शंट सामान—लें जाउ उठाइ कें अपओं रेंबारों (अपना अंट-शंट सामान उठा कर ले जाओ)।

रेंहपटों—(सं०) तमांचा—बानें एक रेंहपटों दओं (उसने एक तमाचा दिया)।

रोज—(सं०) रुलाई—जाइ नें कऊ रोज न आओं (इसे जरा भी रोना न आया)।

लखतेरों—(क्रि०) भगाया—मंत्तें फिरि वाइ लखनेरौं (वहां से फिर उसे भगाया)।

लफि—(क्रि०) झुकना—ब मई तें लफि गई (वह वहीं से झुक गई)।

लांचु—(सं०) जानवरों का चारा—पौंहैंनि कों लांचु हें नाँएं (जानवरों का चारा समाप्त हो गया है)।

लाउनी—(सं०) फसल काट कर घर में लाना—आजु कल्लि तौं लाउनी कों जोरु हें (आजकल तो लाउनी का जोर चल रहा है)।

सई—(वि०) प्रारम्भिक स्थिति—सई संजई तें आइ बैठे (जरा शाम होते ही आ गए)। यह शब्द बहुत कम प्रयुक्त होता है। प्राप्त उद्धरणों में केवल संज्ञा शब्द के साथ इसका प्रयोग मिलता है।

सकलढ़—(सं०) किसी षडयंत्र के लिए दोस्ती—जाके लें बिनि कों सकलढ़ ह गऔं (इस काम के लिए उनकी दोस्ती हो गई)।

सकिलों—(क्रि०) खिसको—नेंक उतें सकिल कें बैंठों (जरा उधर खिसक कर बैठो)।

सपड़ी—(सं०) अमरूद—सपड़ी का भाउ हें (अमरूद का क्या भाव है?)

सजों—(वि०) साबित—बानें सजों बेल खाइ लऔं (उसने साबित बेल खा लिया)।

सिदोंस—(क्रि० वि०) जल्दी—सिदोंसेई अइयो (जल्दी ही आना)।

सिमरि—(सं०) भीड़—ब् सिमरि में धँसि गऔं (वह भीड़ में घुस गया)।

सुत्ति—(सं०) याद्—मोइ सुत्ति नाँएं रही (मुझे याद नहीं रही)।

सुत्तों—(अ०) निश्चिन्त—नेंक सुत्तों हों जाउं तौं कहों गो (थोड़ा निश्चिन्त हो जाऊं तब कहूंगा)।

सुद्दां—(परसर्ग) सहित—जा सुद्दां चारि भए (इसके सहित चार हुए)।

सूध्—(सं०) खबर—गांउं की कछु सूध् लाए (गांव की कुछ खबर लाए)।

सेंड़—(सं०) पगडंडी—जि सेंड़ कां कों जातें (यह पगडंडी किधर जाती है?)।

सोटि—(सं०)—छत पाटने के लिए लगाई जाने वाली लकड़ी, धन्नी-बाकी चारि सोटें टूटि गई हें (उसकी चार धन्नियां टूट गई हैं)।

सोंहड़—(सं०) नाश—सिग् खेत् कों सोंहड़ कइऔं। (सारे खेत का नाश कर दिया)।

हत्या—(सं०) परेशानी, आफत—जिकां की हत्या लग्गई। (यह आफत कहां की आ गई?)

हरबेंईं—(क्रि० वि०) धीरे से—व हरबेंई धँसि आओं। (वह धीरे से घुस आया)।

हार्—(सं०) ऊंची भूमि के खेत—हार् कों बाजरा नीकों हें। (ऊंची भूमि के खेतों में बाजरा अच्छा हुआ है)।

हार् के साथ का शब्द है कछार। नदी के किनारे की खेती कछार कहलाती है तथा ऊंची भूमि पर स्थित खेत 'हार्' कहलाते हैं।

हेड़िया—(सं०) पशुओं की हेड़ (समूह) लेकर घूमने वाले व्यक्ति-हेड़िया कों दें दई चारुंपइया में। (चार रुपए में हेड़िया को बेंच दी)।

हेलुआ—(सं०) बरसात की बढ़ी नदी में भरी नाव को क्रीड़ा के लिए छोड़ देना—आओं तों हेलुआ खिलबामें।

(यदि आओ तो नदी में हेलुआ की क्रीड़ा हो।)

२५०. जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से संबद्ध इस प्रकार की स्थानीय शब्दावली आगरा जिले की बोली में विशिष्ट रूप से मिलती है। इस वर्ग की शब्दावली सामान्यतः बोली में यद्यपि २० प्रतिशत के लगभग मिलती है (§२३३), पर अपढ़ जनता की बोली में इसका प्रतिशत २३ प्रतिशत से भी अधिक हो जाता है। शिक्षित तथा अर्द्धशिक्षित लोगों की बोली धीरे-धीरे इन शब्दों को छोड़ रही है, तथा उनके स्थान पर कोशवासी शब्दों को ग्रहण कर रही है। उढ़नाँ के स्थान पर कपड़ा का प्रयोग, सैंरु के स्थान पर रस्ता का प्रयोग, हरबेंई के स्थान पर धीरे से का प्रयोग अब अधिक होता है। यह स्मरणीय है कि आगरा नगर से प्राप्त उद्धरणों में स्थानीय शब्दावली का प्रायः अभाव है। पर इसमें कोई संदेह नहीं कि इन स्थानीय शब्दों के स्टेंडर्ड भाषा में पर्याय मिलना कठिन है।

२५१. स्थानीय शब्दावली में वैसे तो सभी व्याकरणात्मक वर्गों के शब्द है, परन्तु संज्ञा शब्दों का आधिक्य है, तथा क्रिया-रूपों की अपेक्षाकृत कमी है। ऊपर दिए हुए १५० शब्दों में १०४ शब्द संज्ञा हैं, १६ क्रिया हैं तथा शेष अन्य हैं। इस प्रकार इस सीमित शब्द-समूह में प्रायः ६९ प्रतिशत संज्ञा शब्द हैं तथा १० प्रतिशत के लगभग क्रियाएं हैं।

२५२. बोली के शब्दों में कहीं-कहीं स्थानीय अर्थ-विकास की दिशाएं भी दृष्टिगत होती हैं। कुछ तद्भव तथा विदेशी शब्द अपने प्रचलित अर्थों से भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होते हैं—

खुसामदि—इस शब्द का सामान्य अर्थ है, चाटुकारी करना, परन्तु आगरा की बोली में एक दूसरा विशिष्ट अर्थ भी है 'शारीरिक सेवा'-गइया की कछु खुसामदि हों जाइ तों नींकी हें। (गाय की कुछ सेवा हो जाए तो ठीक है)।

डोकर—शब्द का वास्तविक अर्थ है वृद्ध व्यक्ति, परन्तु बोली में इसका दूसरा अर्थ भी है—'पिता'—डोकर अब चलाऊ हैं। (पिता अब मृत्यु के निकट हैं)

पंगति—यह शब्द संस्कृत 'पंक्ति' से विकसित है, परन्तु इसका अर्थ होता है 'दावत'—जहां सब लोग पंक्तिबद्ध होकर भोजन करते हैं। ऐसी पंगति भौत दिनन तें नां भई (ऐसी दावत बहुत दिनों से नहीं हुई)। पंगति का अर्थ पंक्ति बोली में नहीं होता।

पाँति—'पंगति' के समान ही यह शब्द भी संस्कृत से विकसित है। और उसी के समान 'दावत' के अर्थ में प्रयुक्त होता है—मोंड़ा भए पै इक पाँति दनी होगी (पुत्र-जन्म के समय एक दावत देनी पड़ेगी)। पाँति का अर्थ पंक्ति भी बोली में होता है।

पोसाक्—इस मूल फ़ारसी शब्द (पोशाक) का अर्थ है 'वस्त्र' किन्तु बोली में इसका प्रयोग 'शोभा' के अर्थ में भी होता है—सभा की पोसाक् उठि गई। (सभा की शोभा समाप्त हो गई)।

बात्—इस बहु-प्रचलित शब्द के सामान्य अर्थ के अतिरिक्त बोली में एक दूसरा अर्थ भी होता है 'कहानी'—तुम्हें बात् कैंहनी परैंगी। (तुम्हें कहानी कहनी होगी)।

बोझ्—बोली में 'बोझ्' शब्द 'लकड़ी के बोझ' के अर्थ में प्रयुक्त होता है—दिन भरि में चारि बोझ् लाउतौं। (एक दिन में चार लकड़ी के बोझ ला पाता हूं)। वैसे बोझ् शब्द सामान्य अर्थ में भी प्रचलित है।

भोर्—इस शब्द का सामान्य अर्थ है 'प्रातःकाल', परन्तु प्रस्तुत बोली में इसका दूसरा लाक्षणिक अर्थ भी होता है "उपरांत"—दिवारी भोर् रुपिया दें हौं। (दिवाली बाद रुपया दूंगा।)

हत्या—इस बहु-प्रचलित शब्द का सामान्य अर्थ है 'जान से मारना' किन्तु आगरा जिले की बोली में इसका प्रयोग 'आफत या परेशानी' के अर्थ में होता है—जि हत्या मेए जिउ कों लगाई हैं (यह परेशानी मुझे लग गयी है।) हत्या शब्द का अपने मूल अर्थ में (जान से मारना) प्रयोग ठेठ बोली में नहीं होता।

हवा—इस शब्द का जिले की बोली में विशिष्ट अर्थ है 'प्रेत-बाधा'-बाएँ हवा लग्गई। (उसे प्रेत-बाधा हो गई है।) 'वायु' के लिए बोली में ब्यारि शब्द का प्रयोग होता है।

२५३. स्थानीय शब्दावली आधुनिक जीवन तथा संस्कृति के पारिभाषिक अर्थ भले ही न दे सके, परन्तु सामान्य मानव जीवन की समग्र स्थितियों तथा वस्तुओं के वर्णन और चित्रण में इस शब्दावली का अर्थ-गांभीर्य अप्रतिम है। मो पै फबतु नाँएँ अथवा मेई संबई नाँएँ, जैसे वाक्य स्टेंडर्ड हिन्दी में प्रायः नहीं कहे जा सकते।

सूघ् का अनुवाद खबर या सूचना नहीं किया जा सकता। सूघ् की अर्थ-प्रकृति अंग्रेजी शब्द क्लू (clue) के अधिक निकट है। यही कारण है कि इस लोक-भाषा के बहुत से शब्द स्टेंडर्ड भाषा में लिए जा रहे हैं, यद्यपि इस प्रकार की शब्दावली का बहुत बड़ा भाग हमारे शिक्षित समुदाय के लिए अभी अज्ञात है और धीरे-धीरे प्रायः नष्ट हुआ जा रहा है क्योंकि बोली का कोई लिखित साहित्य नहीं है (§३२) और सामान्य जन-जीवन की बोली में स्टेंडर्ड हिन्दी का प्रभाव तथा मिश्रण बराबर बढ़ता जा रहा है (§२७९)।

विशिष्ट शब्द-रूप (स्लांग)

२५४. जीवित भाषा में एक विशिष्ट शब्द के रहते हुए भी उसके स्थान पर नवीनता अथवा अभिव्यक्ति की सशक्तता की दृष्टि से सामान्य जनता द्वारा गढ़े गए विभिन्न शब्द-रूपों को स्लांग कहते हैं। ये विशिष्ट शब्द-रूप प्रायः जटिल होती हुई संस्कृति तथा नवीन जीवन-उपकरणों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं, जहां नित्य नई वस्तुओं का आविष्कार होता जाता है। स्लांग उद्योगों की पारिभाषिक शब्दावली से भिन्न होता है, क्योंकि स्लांग का कार्य तो नए-नए तथा विचित्र पर्याय जुटाना है, जब कि पारिभाषिक शब्दावली प्रायः सुनिश्चित, स्थिर तथा तर्क संगत होती है। स्लांग इस दृष्टि से कांट (गुप्त भाषा—चोरों अथवा डाकुओं की) से भी भिन्न है, यद्यपि उसके प्रयोग का प्रसार तथा व्यापकता कम या अधिक हो सकती है। आधुनिक समय में लंदन के कोंकनी स्लांग तथा अमेरिकन स्लांग का विधिवत्—वैज्ञानिक अध्ययन हुआ है। अमेरिकन स्लांग शब्दों के वैचित्र्य की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। 'धन' के लिए वहां अन्य सामान्य अंग्रेजी शब्दों के अतिरिक्त 'डो' (dough) तथा 'बॉडल' (boddle) शब्द भी प्रचलित हैं। कोंकनी बोली में विचित्र (strange) के लिए 'रम' (rum) शब्द का भी प्रयोग होता है। पुलिस के लिए 'कॉप्स' (cops) का प्रयोग होता है।

२५५. स्लांग के अभिप्रेत अर्थ से अभिधार्थ प्रायः भिन्न होते हैं। अंग्रेजी में 'कॉपर' (copper) शब्द का अर्थ है तांबा, किन्तु कोंकनी बोली में इसका अर्थ होगा पुलिस के सिपाही। पर सामान्यतया प्रचलित अर्थ-परंपरा की दृष्टि से स्लांग शब्द निरर्थक भी होते हैं। 'धन' के अर्थ में प्रयुक्त अमेरिकन स्लांग का 'बॉडल' शब्द सामान्य अंग्रेजी कोशों में नहीं मिलता। इस प्रकार के विशिष्ट शब्द-रूप बिना अर्थ-संगति के गढ़े जाते हैं। वे अर्थ के नवीन स्तरों (shades) के द्योतक न होकर मात्र पर्याय होते हैं।

२५६. आगरा जिले की बोली में 'स्लांग' शब्दों का प्रयोग अधिक नहीं होता, क्योंकि वह एक अपेक्षाकृत सरल जीवन-क्रम की बोली है। जो भी प्रयोग मिलते

हैं उनमें से कुछ का क्षेत्र व्यापक तथा कुछ का सीमित हो सकता है। इन विशिष्ट शब्द रूपों में एक तथा कभी-कभी एक से अधिक पर्याय मिलते हैं। बोली के कुछ स्लांग शब्दों की संक्षिप्त सूची नीचे दी जा रही है—

आसरे की—(गाभिन)—इस शब्द-रूप का प्रयोग पशुओं के गाभिन होने पर किया जाता है—थोरिया अभें आसरे की नां भई (भैंस अभी गाभिन नहीं है।)

ओमडकार—(निश्चित उत्तर)—बानें कछु ओमडकार ई नई लई (उसने कुछ निश्चित उत्तर ही नहीं दिया)।

गेंदगड़ा—(मारपीट) मँई गेंदगड़ा हे उठों (वहीं पर मारपीट प्रारंभ हो गई)।

छोति—(दुष्ट)—त्यार्औं मोंड़ा बड़ोई छोति ऍ। (तुम्हारा लड़का बहुत दुष्ट है)।

छोलनु—(दुष्ट, नीच)—जि गाउं भरे कों छोलनु ह्यंन् काए कों आयों ह (सारे गांव के दुष्ट यहां क्यों इकट्ठा हुए हैं ?)

टोंगला—(रुपया) इस शब्द का प्रयोग रुपया उगाहने वाले की खिल्ली उड़ाने के लिए होता है—मां नाँएं धरे टोंगला (वहां रुपए नहीं रक्खे हैं) इस शब्द का स्लांग-अर्थ के अतिरिक्त प्रचलित अर्थ परंपरा से कोई संबंध नहीं है।

डोलडाल—(शौच)—बु डोलडाल कूं गओं हें। (वह शौच के लिए गया है)। यह शब्द प्राकृतिक कृत्य की अश्लील व्यंजना को बचाने के लिए गढ़ा गया है। यद्यपि सामान्यत: बोली में अश्लीलता की प्रवृत्ति बहु-प्रचलित है।

बब्बराबाहन—(वीर) यह शब्द पौराणिक बाल-वीर बभ्रुवाहन का विकृत रूप है। इसका प्रयोग वीरत्व-प्रदर्शन का मज़ाक उड़ाने के लिए किया जाता है—बड़े आए बब्बराबाहन कहूं के।

महुआमूरी—(निरर्थक बातचीत)—महुआमूरी जिन्देउ। (निरर्थक बातचीत मत करो)।

लेंगयेंग—(लड़ाई) यह शब्द रूप मूलत: अनुरणनात्मक है। अभें लंगयेंग होंन् लगेंगी (अभी लड़ाई होने लगेगी)।

सत्तिकिसुनु—(प्रारंभिक बात) बानें सत्तिकिसुनु कछू न कही। (उसने कोई बात नहीं की)।

२५७. किसी एक विशिष्ट वस्तु अथवा कृत्य को लेकर भी स्लांग शब्द विकसित हो जाते हैं। पर स्पष्ट ही इस प्रकार के स्लांग का क्षेत्र अपेक्षाकृत सीमित होता है। आगरा जिले के चतुर्वेदी ब्राह्मणों द्वारा भांग पिए जाने से संबद्ध कुछ विशिष्ट शब्द-रूप विकसित हो गए हैं—हरी (भांग), झाझा (हल्की भांग), रांड़

(बिना भांग की ठंडई), कागाबासी (प्रातःकालीन भांग सेवन), भोगविलासी (सायंकालीन भांग सेवन), सत्यानासी (दोपहर के समय भांग का सेवन)।

दुर्वचन (अपशब्द)

२५८. बोली में सामान्यतः दुर्वचनों तथा गालियों का प्रयोग बहुत होता है। ये प्रयोग जानबूझ कर किसी के प्रति किए जाते हैं—क्रोध के अवसर पर और कभी-कभी स्नेह-प्रदर्शन के लिए भी—अथवा बोली में बिना किसी चेतना के होते हैं। दूसरे प्रकार की दृष्टि से सामान्य वार्तालाप कभी इन दुर्वचनों से विहीन नहीं रहता। यह प्रवृत्ति शिक्षित तथा अशिक्षित—दोनों वर्गों में सामान्य रूप से पाई जाती है।

२५९. पुरुषों की गालियां दारी, भइया के सारे, ससुर, सारे आदि होती हैं। मां-बहिन की गाली अथवा शरीर के जननांगों के नामों का उल्लेख भी व्यापक रूप से किया जाता है।

२६०. विशेपतः स्त्रियों द्वारा प्रयुक्त गालियां कुछ हल्की होती हैं—अश्लील प्रायः नहीं होती। स्त्रियों की गालियां हैं—डाढ़ीजार, नठिहा, नठू, मरी, मरों, म्हों बारे, रँड़ो, रांड़, हत्यारी, हत्यारों।

समास, अभ्यास तथा द्विरुक्ति, संबोधन शब्द

२६१. बोली में समास का प्रयोग प्रचुरता के साथ होता है। समास संज्ञा सर्वनाम, विशेषण, क्रिया तथा कृदंत के हो सकते हैं—जनी मांन्सु (संज्ञा), हंम तुम (सर्वनाम), बुरों बाउरों (विशेषण), खाओं पिओं (क्रिया), न्हाइ धोइ कें (कृदंत)। समासों में द्वन्द्व समास का ही अधिकतर प्रयोग होता है।

२६२. बोली में किसी भाव विशेष पर बल देने के लिए अभ्यास (Reduplication) का प्रयोग मिलता है। अभ्यास संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रिया विशेषण तथा कृदंत शब्दों का हो सकता है—घर् घर् (संज्ञा) पं पएँ (सर्वनाम) पकीं पकीं (विशेषण) खाइ-खाइ (क्रिया) ढिगां-ढिगां (क्रिया विशेषण) चल्त चल्त (कृदंत)। अभ्यास के अन्तर्गत कभी-कभी पहले शब्द को संक्षिप्त कर दिया जाता है—दु द्वें, वड़ वड़े, थुथ्थोरी, दद्दस, निन्यारे।

२६३. निरर्थक द्विरुक्ति का व्यापक प्रयोग मिलता है—उधार-विधार, उड़ाइ मुढ़ाइ, रांधि रूंधि, चाह आह, पुलिस उलिस, तमाखू अमाखू।

२६४. कुछ शब्द बोली में संयुक्त शब्दों के समान व्यवहृत होते हैं, अर्थात् दो शब्द सदैव एक शब्द के समान प्रयुक्त होते हैं—कहाकुल (कहां तक) साई (समान ही)।

२६५. बोली में सामान्य संबोधन के लिए रे, लला, साब, मालिक, भिया दद्दा तथा एंजू का प्रयोग होता है। साधारणतः भिया तथा एंजू का प्रयोग व्यापक है। लोक-कथाओं में राजपुरुषों के लिए सिरीमाराज (श्री महराज) का प्रयोग मिलता है।

२६६. बातचीत के समय लोग अपने भाव को प्रकट करने के लिए तत्क्षण उपयुक्त शब्द न पाकर नए शब्दों का तत्काल निर्माण करते चलते हैं। ऐसे शब्द संभवतः अनुरणनात्मक अधिक होते हैं। इन शब्दों में से बहुत से शब्दों का प्रयोग संभवतः फिर वक्ता भी नहीं करता, परन्तु इन्हीं में से कुछ शब्द स्थानीय शब्दावली के रूप में स्वीकार कर लिए जाते हैं—सिंदूक तनातोम् (ऊपर तक, लबालब) भरौं हे।

आगरा जिले की बोली : प्रभाव साम्य तथा स्तरों का अध्ययन

आगरा जिले की बोली तथा स्टेंडर्ड ब्रज

२६७. ग्रियर्सन ने पूर्वी तथा पश्चिमी आगरा जिले की बोली को अलग-अलग स्टेंडर्ड ब्रज के अंतर्गत रक्खा है। (लिं० स० इ०, भाग ९, खंड १, ७०)। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा का भी मत यही है—"मथुरा, आगरा, अलीगढ़ और बुलंदशहर की बोली पश्चिमी अथवा केन्द्रीय व्रज मानी जा सकती है। इस रूप को सर्वमान्य विशुद्ध ब्रज भी कहा जा सकता है"—('ब्रजभाषा', ७७)।

२६८. वास्तविकता यह है कि जिले के उत्तर पश्चिमी भाग की बोली ही सुविधापूर्वक केन्द्रीय ब्रज के अंतर्गत रक्खी जा सकती है। पूर्वी प्रदेश की बोली पर कन्नौजी का विशिष्ट प्रभाव है। भविष्यत् क्रिया के ह् रूप का अधिक प्रयोग, सहायक क्रिया हतौं, हती का प्रयोग तथा शब्द समूह के एक बड़े भाग की दृष्टि से पूर्वी प्रदेश की बोली मथुरा की केन्द्रीय बोली की अपेक्षा कन्नौजी उपरूप के अधिक निकट है। मथुरा में क्रिया का-यों रूप मिलता है, आगरे की बोली में विशेषतः पूर्वी बोली में क्रिया का-ओं रूप मिलता है, ग्रियर्सन ने इन दोनों ही रूपों को स्टेंडर्ड माना है। ध्वनि समीकरण तथा संधि की दृष्टि से भी ब्रजभाषा का यह रूप कन्नौजी के निकट पड़ता है। शब्द समूह की दृष्टि से ग्वालियरी भाषा का भी स्पष्ट प्रभाव आगरे की पूर्वी बोली पर देखा जा सकता है। बोली के पूर्वी तथा पश्चिमी उपरूपों का विवेचन अलग से द्रष्टव्य है (§३०४-३०८)। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के विभाजन की दृष्टि से आगरा जिले की बोली केन्द्रीय ब्रज के सीमांत पर मानी जा सकती है, और जिले के पूर्वी प्रदेश की बोली पश्चिमी उपरूप की अपेक्षा पूर्वी उपरूप के ही अंतर्गत अधिक सुविधापूर्वक रखी जा सकती है।

२६९. पश्चिमी प्रदेश की बोली में भी दक्षिणी उपरूप भरतपुर-धौलपुर की बोली से विशेषतया प्रभावित है। यह प्रभाव शब्द-समूह के क्षेत्र में अधिक देखा जा सकता है।

२७०. आगरा जिले का दक्षिणी भाग (खैरागढ़ तथा बाह तहसील) वस्तुतः विशुद्ध ब्रजभाषी प्रदेश के दक्षिणी सीमांत को बनाता है। अतः भाषा की दृष्टि से

इस प्रदेश की बोली का मिश्रित होना स्वाभाविक है। जिले के उत्तरी-पश्चिमी प्रदेश की बोली ही वस्तुतः केन्द्रीय ब्रज के रूप में मानी जा सकती है, और इसी लिए भाषागत दृष्टि से यही रूप स्टेंडर्ड ब्रज कहा जा सकता है। पूर्वी आगरा की बोली ब्रज, कन्नौजी तथा बुंदेली का एक मिश्रित रूप है। (§३१८) अतः उसे तो किसी भी प्रकार से स्टेंडर्ड ब्रज नहीं कहा जा सकता।

निकटवर्ती बोलियों से तुलना

२७१. आगरा जिले की बोली में निकटवर्ती प्रदेशों की बोली के साम्य स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। उत्तरी प्रदेश में मथुरा की केन्द्रीय बोली का विस्तार है, तथा दक्षिण-पूर्व में धौलपुरी, ग्वालियरी तथा कन्नौजी बोलियों की गहरी छाप देखी जा सकती है।

२७२. जिले के पश्चिमोत्तरी प्रदेश (किरावली, आगरा तथा ऐत्मादपुर तहसीलें) की बोली मथुरा की बोली के निकट है। क्रिया तथा सर्वनाम के-य रूपों का प्रयोग (चल्यौं, दियौं, जायं) दोनों प्रदेशों की बोलियों में मिलता है। क्रिया के दीनों, लीन्हौं जैसे प्रयोग भी मथुरा की बोली के प्रभाव की ओर संकेत करते हैं।

२७३. दक्षिणी भाग में पश्चिमी प्रदेश (तहसील खैरागढ़) की बोली से धौलपुर-भरतपुर की बोली की तुलना की जा सकती है। यह तुलना उच्चारण तथा स्थानीय शब्द समूह के क्षेत्र में अधिक सीमित है। निपुत्री (पुत्र हीन) छाहर (खुलास्थान) अंधउआ (अंधाकुआं) मुख्यतः भरतपुर की बोली के शब्द हैं जो जगनेर (तहसील खैरागढ़) से प्राप्त उद्धरणों में प्रयुक्त हुए हैं।

२७४. पूर्वी प्रदेश (बाह तथा फ़ीरोजाबाद) बोली ब्रजभाषा के कन्नौजी उपरूप के अधिक निकट है। भविष्यत् काल में–ह का प्रयोग तथा हतौं, हती सहायक क्रिया का प्रयोग व्याकरणात्मक रूपों के क्षेत्र में दोनों प्रदेशों की बोलियों में समानता की ओर संकेत करते हैं। ध्वनि तथा उच्चारण के क्षेत्र में समीकरण तथा संधि की ओर अधिक प्रवृत्ति आगरा जिले की पूर्वी बोली को कन्नौजी के ही अधिक निकट ले जाती है। शब्द-समूह में भी इसी प्रकार कन्नौजी उपरूप का प्रभाव देखा जा सकता है।

२७५. बाह तहसील (दक्षिण-पूर्वी प्रदेश) की बोली पर विशेष रूप से चंबल नदी के किनारे के प्रदेश पर ग्वालियरी (बुंदेली रूप) के शब्द-समूह का मिश्रण स्पष्ट है। कुछ बुंदेली शब्द जो बाह के उद्धरणों में मिलते हैं, इस प्रकार हैं—गंगाल (मिट्टी अथवा पीतल का बड़ा घड़ा), तम्हेंरौं (तांबे का घड़ा) बाबा (पितामह), बिलिया, (कटोरी), संबई (सामर्थ्य)।

२७६. इस प्रसंग में स्मरणीय है कि इन साम्यों की प्रकृति तुलना के परिप्रेक्ष्य में समझी जानी चाहिए। वस्तुत: बोली की शुद्ध रूप में कल्पना तो की ही नहीं जा सकती। भाषा सदैव एक मिश्रित वस्तु रहती है। इस दृष्टि से आगरा जिले की बोली का समग्रत: एक मौलिक रूप होते हुए भी उसके ऊपर इन विभिन्न प्रभावों अथवा साम्यों को देखा जा सकता है।

२७७. आगरा जिले की बोली ब्रजभाषा अथवा ब्रजभाषा के प्रादेशिक उपरूपों से ही घिरी हुई है। अत: इस बोली पर जो भी प्रभाव अथवा साम्य दिखाई देते हैं वे ब्रजभाषा की विभिन्न प्रादेशिक विशेषताएं मात्र हैं, अत: उनको इसी रूप में ग्रहण किया जाना चाहिए। अंतत: बोली के मूल ढांचे में ये प्रादेशिक विशेषताएँ भी तो सम्मिलित हैं।

स्टेण्डर्ड हिन्दी के प्रभाव और मिश्रण तथा उनके कारण

२७८. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने अपने प्रबंध 'ब्रजभाषा' में कहा है—"ब्रजभाषा पर खड़ी बोली हिंदी का प्रभाव अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है, इस बात की पुष्टि प्राचीन तथा आधुनिक ब्रज की तुलना से होती है। ब्रज के प्राचीन रूप में आधुनिक ब्रज की अपेक्षा खड़ी बोली हिन्दी के शब्द कम पाए जाते हैं। आधुनिक ब्रज पर विशेषतया पूर्वी ब्रज पर तो खड़ी बोली हिन्दी का प्रभाव और भी अधिक है।" (§२६०)

२७९. आगरा जिले के पूर्वी प्रदेश की बोली पूर्वी ब्रज के ही निकट पड़ती है (§२६८)। पश्चिमी प्रदेश में आगरा नगर की बोली का प्रभाव तथा मिश्रण स्पष्ट है। और डॉ० वर्मा के उपर्युक्त प्रवृत्ति-कथन के बाद लगभग २५ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। इस बीच में परिस्थितियों का बदल जाना स्वाभाविक है, विशेषत: जब देश में राजनैतिक तथा औद्योगिक क्षेत्रों में इस बीच क्रांतिकारी परिवर्तन हो चुके हैं। इन सब के परिणामस्वरूप आज आगरा जिले की बोली पर स्टेंडर्ड हिन्दी के गहरे और दिन प्रति दिन गहरे होते हुए प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है।

२८०. अत्यंत वृद्ध तथा यातायात के साधनों से दूर रहने वाले कुछ व्यक्तियों को छोड़ कर बोली पर स्टेंडर्ड हिन्दी का प्रभाव बराबर बढ़ता जाता है। इस दृष्टि से रेल लाइन न होने के कारण बाह तथा फतेहाबाद क्षेत्र की बोली पर स्टेंडर्ड हिन्दी का प्रभाव अपेक्षाकृत कम है। बोली के विशुद्ध ब्रजभाषापन में सब से गहरा तथा अमिट प्रभाव और मिश्रण राजभाषा का ही है।

२८१. व्याकरणात्मक रूपों के क्षेत्र में उत्तमपुरुष सर्वनाम में हम तथा आप का प्रयोग, अन्य पुरुष बहुवचन तिनि के स्थान पर उनका प्रयोग, एकवचन

सर्वनामों के स्थान पर बहुवचन के सर्वनामों का प्रयोग, तथा संयुक्त क्रियाओं के अधिकाधिक बढ़ते प्रयोग—स्टेंडर्ड तथा शिष्ट हिन्दी के प्रभाव के ही कारण हैं। इसी प्रकार वाक्य विन्यास के क्षेत्र में लंबे तथा कई उपवाक्यों से युक्त वाक्यों के प्रयोग की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई प्रवृत्ति स्टेंडर्ड तथा शिष्ट हिन्दी के प्रभाव की सूचक है।

२८२. स्टेंडर्ड हिन्दी का सब से गहरा प्रभाव और मिश्रण शब्द-समूह, मुहावरों तथा कहावतों के क्षेत्र में देखा जा सकता है। भाषा के इस अंग में बाह्यतत्वों का प्रवेश भी अपेक्षाकृत शीघ्रतर तथा अधिक परिणाम में होता है। आज की बोली में स्थानीय तथा परंपरागत शब्दावली के स्थान पर स्टेंडर्ड हिन्दी के शब्दों का प्रयोग बराबर बढ़ता जा रहा है। मोँड़ा के स्थान पर लड़िका का अधिक प्रयोग तथा उढ़नोँ के स्थान पर 'कपड़ा' का अधिक प्रयोग इसी प्रवृत्ति का परिचायक है।

२८३. बोली पर उपर्युक्त प्रभाव तथा मिश्रण तो एक प्रकार से उसके अभिन्न अंग बन गए हैं। परंतु शिक्षित समुदाय की बोली पर स्टेंडर्ड हिन्दी का और भी गहरा प्रभाव है, जो बोली की मूल प्रकृति से सर्वथा अलग दिखाई देता है। बोली के इस स्वरूप का विवेचन अलग से किया जाएगा (§२८९-३०३)।

२८४. स्टेंडर्ड हिन्दी के इस व्यापक प्रभाव अथवा आक्रमण के कारण आज के जटिल तथा गतिवान जीवन-क्रम में देखे जा सकते हैं। पिछले युगों में यह प्रभाव मुख्यतया स्कूलों के माध्यम से था जहां खड़ी बोली हिन्दी में पाठ्य पुस्तकें रहती थीं। इस क्षेत्र में कचहरियों का अधिक योग नहीं था क्योंकि वहां की फ़ारसी-उर्दू मिश्रित बोली ग्रामीणों को अधिक ग्राह्य नहीं थी।

२८५. पर आज स्टेंडर्ड हिन्दी के प्रभाव के प्रवेश-द्वार बहुत बढ़ गए हैं। सबसे प्रमुख बात तो यही है कि स्टेंडर्ड हिन्दी आज राजभाषा के रूप में स्वीकृत है। इस दृष्टि से उसके महत्व तथा क्षमता का अनुभव बराबर बढ़ता जा रहा है। अपढ़ ग्रामवासी भी सप्रयत्न ढंग से स्टेंडर्ड हिन्दी के बोलने की सफल अथवा असफल चेष्टा करते हैं। इस प्रकार स्टेंडर्ड हिन्दी के प्रति मौलिक दृष्टिकोण आज पिछले युग की अपेक्षा एकदम बदला हुआ है।

२८६. इस परिवर्तित दृष्टिकोण के अतिरिक्त बहुत सी नयी संस्थाओं के विकास ने स्टेंडर्ड हिन्दी के प्रभाव को अधिकाधिक ग्राह्य तथा सुगम बना दिया है। सामुदायिक योजनाओं के अंतर्गत गांव-गांव में स्कूल, डाकघर तथा अस्पताल खोले जा रहे हैं। ग्राम पंचायतों का योग भी इस दिशा में महत्वपूर्ण है। जिले में कई विकास-योजनाएं चल रही हैं। गांवों में स्कूलों अथवा पंचायतों के माध्यम से प्रयुक्त रेडियो सेटों ने ग्रामीणों को स्टेंडर्ड तथा शिष्ट हिन्दी के बहुत निकट कर दिया है। बढ़ते हुए यातायात के साधनों, रेल तथा रोडवेज़ की बसों ने गांव,

नगर तथा क़स्बों का अंतर बहुत कुछ मिटा दिया है। कुल मिला कर जिले में आज के सामान्य नागरिक को स्टेंडर्ड हिन्दी बोलने अथवा सुनने के अनेक तथा प्रायः अवसर मिलते हैं। इस प्रवृत्ति को विकसित करने के लिए उसके पास अंतःप्रेरणा भी है। इन सारी स्थितियों का सामूहिक प्रभाव यह है कि आज की आगरा जिले की बोली बहुत अधिक स्टेंडर्ड हिन्दी से प्रभावित है, तथा इस प्रभाव में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। ऊपर उल्लिखित माध्यमों के द्वारा बोली के शब्द-समूह में स्टेंडर्ड हिन्दी के शब्द-समूह का मिश्रण धीरे-धीरे बढ़ रहा है। नई पीढ़ी के किशोरों तथा युवकों में यह मिश्रण अपेक्षाकृत अधिक है (§३१३-३१५)।

२८७. आगरा की ब्रजभाषा पर स्टेंडर्ड हिन्दी के प्रभाव का एक भाषा-वैज्ञानिक कारण भी है। दोनों ही भाषाएं पश्चिमी वर्ग के अंतर्गत होने के कारण मौलिक प्रकृतिगत एक दूसरे से बहुत भिन्न नहीं हैं। स्टेंडर्ड हिन्दी के प्रभाव तथा मिश्रण को सुगम तथा शीघ्र बनाने में इस तथ्य का भी विशिष्ट योग है।

२८८. आगरा जिले की आधुनिक बोली केवल मौखिक रूप में ही उप-लब्ध है। उसका लिखित अथवा मुद्रित रूप प्रायः नहीं है। इसीलिए कुछ शब्द-प्रयोगों को छोड़ कर उसका स्टेंडर्ड हिन्दी पर प्रभाव नगण्य है।

शिक्षित तथा संस्कृत वर्ग की बोली

२८९. अध्ययन संबंधी सामग्री एकत्र करने के लिए आगरा जिले की की गई यात्राओं के सिलसिले में लेखक ने उच्च शिक्षा प्राप्त, सुसंस्कृत तथा नागरिक प्रवृत्ति वाले लोगों की ब्रजभाषा के नमूने एकत्र किए हैं। इन नमूनों के वक्ताओं की शिक्षा कई स्तरों की है, पर इनके सामूहिक अध्ययन से कई महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते हैं, जो बोली पर स्टेंडर्ड हिन्दी के प्रभाव तथा मिश्रण की विभिन्न दिशाओं तथा आगामी संभावनाओं की ओर संकेत करते हैं।

२९०. इस प्रसंग में यह स्मरणीय है कि ब्रजभाषी अत्यधिक शिक्षित तथा संस्कृत होने पर भी, यदि ब्रजभाषा के जीवित संपर्क में कभी रहा है, तो वह दूसरे ब्रजभाषी से ब्रजभाषा में ही बात करना पसंद करता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस प्रवृत्ति के अपवाद निरंतर बढ़ते जा रहे हैं, तथा उसी अनुपात से ब्रज-भाषा का जीवित संपर्क भी कम हो रहा है। फिर भी उक्त मौलिक प्रवृत्ति अब भी बहुत कुछ यथावत् है, अर्थात् एक शिक्षित तथा सुसंस्कृत ब्रजभाषी दूसरे किसी अशिक्षित अथवा शिक्षित ब्रजभाषी से मिलने पर ब्रजभाषा में ही बात करना चाहेगा। यह अवश्य है कि शिक्षित व्यक्ति से बात करने पर वह स्टेंडर्ड हिन्दी के शब्दों का सहज रूप से अधिक व्यवहार करेगा, परंतु जब वह किसी अशिक्षित तथा

लगों। बानें अपएँ खेत् में सूगरा चराइबे भेद्ओं। जो कछु सूगरा खाते ताई के छूंछन् सों अपनों पेट् भत्तो। बाइ कोऊ कछू नाँएुँ देतो। जब बाइ होसु आओं तब बानें कई कि मेए बाप् कें भोंत से मजूरन कों गल्ले रोटी एँ औंरु हों ह्यां भूंकन् मत्तों। हों ह्याँ तें उठि कें अपएँ बाप् के जराँ जाँउगो औंरु बासें कहों गो कि मैं नें भगमान् के सामनें औं त्याए अगारीं पापु करों एँ औं अब् हों त्याओं मोंड़ा कहाइबे लाइक् नानें। जैंसें औंर मजूर् रहातें तेंसेंई मोऊएँ रक्खि।

२९४. उपर्युक्त दोनों उद्धरणों की तुलना करने पर निम्नलिखित शब्दों के हमें दो रूप मिलते हैं, जो क्रमशः वक्ता के सुशिक्षित तथा ग्रामीण स्तर के द्योतक हैं—

सुशिक्षित स्तर	**ग्रामीण स्तर**
लड़िका	मोंड़ा (पुत्र)
उन्	बिनि (उन)
छोटे	ल्हौंर (छोटे)
बाप्	डोकरा (पिता)
सब्	सिग् (सब)
बड़े आदिमी	धनीं (मालदार)
सुअर	सूगरा
ढ़िगाँ	जरा (पास)
नाएुँ	नानें (नहीं)

२९५. बोली के इन दोनों स्तरों का अंतर प्रायः शब्द-समूह तक ही सीमित है।

२९६. सुशिक्षित तथा संस्कृत समुदाय की बोली में स्टेंडर्ड हिन्दी के प्रभाव तथा मिश्रण कई क्षेत्रों में मिलते हैं। व्याकरणात्मक रूपों की दृष्टि से स्टेंडर्ड हिन्दी के निम्नलिखित प्रभाव जो जिले की बोली में सामान्यतः भी परिलक्षित हैं, विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—

(१) उत्तम पुरुष एकवचन सर्वनाम हों के स्थान पर में तथा हम् का प्रयोग, मध्यम पुरुष आदरवाची आप का प्रयोग।

(२) एक वचन सर्वनामों के स्थान पर आदरसूचक बहुवचन सर्वनामों का प्रयोग।

(३) अन्य पुरुष बहुवचन बिनि के स्थान पर उन का अधिक प्रयोग। तथा,

(४) संयुक्त क्रियाओं का बढ़ता हुआ प्रयोग।

२९७. शिक्षित वर्ग की बोली का वाक्य-विन्यास अपेक्षाकृत शुद्ध, व्याकरण-सम्मत, किंतु अधिक जटिल होता है। वाक्य प्रायः लंबे तथा कई-कई उपवाक्यों के योग से बनते हैं। उदाहरण के लिए एक उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति की बोली का नमूना नीचे प्रस्तुत किया जाता है—

जब् हम् फस्टीयर् में पढ़ते तब् संघ पें प्रतिबंध लगों भओं हो। हम् बाके सदस्य हे औंर प्रतिबंध् होत् भयेंऊं बाके कछू न कछू काम् चल्ते रहाते औं हम् उन् सब में शामिल होते। एक दिन हमाए अधिकारी आए औं उन्नें एक बंद कमरा में सब पुराने स्वयंसेवकन कों बुलाओं औंर सबसें एक एक करिकें अकेले में लें जाइ कें पूंछी कि संघ कों सत्याग्रह होंबे बारों है तौं का तुम जेल चलिबे कों तइयार हों ? जि सात् दिसंबर की बात् ही। हमनें कहि दई हाँ। हमें जऊ नाँएं मालुम कि गांउं से किन्-किन् लोगन् नें हां कहि दई हैं। दूसरे दिन हमाए कक्का कों कैंसेंऊं मालुम परी कि संघ कों सत्याग्रह होंबे कों हैं। उन्नें हमें समझाओं कि अकेले लड़िका होंबे के नातें तुमें हमाओं ऊ ख्याल कन्नें चँइयें। हम् उनकी बात सैं कछू प्रभावित भए औंर अपओं जाइबे कों बिचार बल्दि दओं।

२९८. उपर्युक्त उद्धरण में दूसरा तथा तीसरा वाक्य विन्यास की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हैं दूसरे वाक्य में तीन उपवाक्य हैं, तथा तीसरे वाक्य में पांच उपवाक्य हैं। इतने उपवाक्यों से युक्त लंबे वाक्य जिले की सामान्य बोली में प्रयुक्त नहीं होते। तीसरे वाक्य के बीच में जो वाक्य भंग (paranthesis) है—एक एक करिकें अकेले में लें जाइकें—वह भी स्टेंडर्ड हिन्दी के प्रभाव का द्योतक है। सामान्य बोली में वाक्य भंग (paranthesis) का प्रयोग इस प्रकार नहीं होता। वहां पर यदि वाक्य भंग (paranthesis) की आवश्यकता ही होती है तो वह वाक्य समाप्त होने के बाद जोड़ा जाता है—सो खेत में पोंहच—कचरियन् के में। उद्धृत नमूने में होंबे के नातें जैसा मुहाविरा भी स्टेंडर्ड हिन्दी से लिया गया है। इस प्रकार शिक्षित व्यक्तियों की बोली में वाक्य विन्यास अन्वय युक्त, जटिल तथा अपेक्षाकृत चिंतित होता है। जिले की सामान्य बोली में वाक्य छोटे होते हैं, तथा उनमें शब्द-क्रम की भी बहुत चिंता नहीं की जाती।

२९९. शिक्षित वर्ग की बोली के शब्द समह में स्टेंडर्ड हिन्दी का मिश्रण सब से अधिक दिखाई देता है। इस वर्ग की बोली के पांच नमूनों को लेकर लेखक ने शब्द-समूह की दृष्टि से उनका सीमित विश्लेषण किया है। इनके वक्ताओं में चार एम० ए० तथा एक एम० ए०, डी० फ़िल० है। इस विश्लेषण से निष्कर्ष यह निकला कि इस वर्ग की बोली में तत्सम तथा विदेशी शब्दों की संख्या सामान्य औसत से कहीं अधिक है, और स्थानीय शब्दावली नहीं के बराबर है। तुलना की

दृष्टि से जिले की सामान्य बोली तथा शिक्षित वर्ग की बोली के आंकड़े नीचे दिए जा रहे हैं। (यह गणना नमूनों में आए हुए संज्ञा तथा विशेषण शब्दों के आधार पर की गई है)।

सामान्य बोली	प्रतिशत	शिक्षित वर्ग की बोली	प्रतिशत
१. तत्सम	५		९½
अर्द्ध तत्सम	५/६		१
२. तद्भव	४१		४१
३. देशज	१४		१५½
४. विदेशी	१९		३१
	(फ़ारसी शब्द १५% अंग्रेजी शब्द ३%)		(फ़ारसी शब्द २१ अंग्रेज़ी शब्द १०)
५. स्थानीय	२०		१½

३००. तत्सम शब्दों के प्रसंग में यह स्मरणीय है कि उसमें सामान्यतः प्रचलित शब्दों के अतिरिक्त प्रतिबंध, प्रभावित, सत्याग्रह, सदस्य, जैसे ठेठ स्टेंडर्ड हिन्दी के शब्द भी मिलते हैं, जो किसी भी रूप में सामान्य जनता द्वारा प्रयुक्त नहीं होते।

३०१. शिक्षित तथा संस्कृत वर्ग की बोली में व्याकरण रूप वाक्य विन्यास तथा शब्द-समूह के क्षेत्र में तो स्टेंडर्ड हिन्दी का प्रभाव तथा मिश्रण है ही, साथ ही उसमें स्टेंडर्ड हिन्दी तथा कहीं कहीं अंग्रेज़ी चिंतन-पद्धति की भी स्पष्ट छाप दिखाई देती है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्य प्रस्तुत हैं—

तिनि के चुनाउ कों जि ढंग कद्दओं हैं कि आजु कल्लि की धारा कों देखि कें बड़े बड़े भले आदिमी इन पंचाइतन् सें अपओं पत्ता कटाइवे की फिराक में रहातें। ओं गुफा बड़ी एक रमणीक स्थान हैं जाइगी।

अकेले लड़िका होंवे के नातें तुमें हमाओंऊ ख्याल कन्नें चँइयें।

बई बात् हमाए संग हैं।

३०२. प्रथम तीन वाक्यों में आजु कल्लि की धारा, पत्ता कटाइबे, रमणीक स्थान तथा होंबें के नातें जैसे मुहाविरे आधुनिक चिंतन-पद्धति के द्योतक हैं। इनके पीछे जो भाव-चित्र (images) हैं वे सामान्य जनता के मस्तिष्क के नहीं हैं, अंतिम वाक्य बई बात हमाए संग हें तो पूरा का पूरा अंग्रेज़ी मुहाविरा same is the case with me का अनुवाद है। यह स्मरणीय है कि यहां वक्ता ने जान बूझ कर अंग्रेज़ी मुहाविरे का अनुवाद किया होगा, ऐसा नहीं लगता। इस प्रकार के वाक्य उसके सोचने के ढंग के कारण बन जाते हैं।

३०३. इस दृष्टि से शिक्षित तथा संस्कृत वर्ग की बोली में दो प्रकार के प्रभाव हैं—भाषागत प्रभाव तथा चिंतनगत प्रभाव। परिशिष्ट में दिए गए शिक्षित वर्ग की बोली के नमूनों से स्पष्ट हो जाता है कि इस वर्ग के लोग किस प्रकार अनेक कठिनाइयों के बावजूद आधुनिक चिंतन प्रवृत्तियों को ब्रजभाषा के माध्यम से व्यक्त करने की चेष्टा करते हैं। ऐसी परिस्थिति में व्याकरण रूप, वाक्य-विन्यास तथा शब्द-समूह में स्टेंडर्ड हिन्दी की गहरी छाप दिखाई देती है। इस वर्ग की बोली में स्थान-स्थान पर तत्सम अंग्रेज़ी शब्दावली तथा वाक्य-विन्यास की भी झलक दिखाई दे जाती है। शिक्षित तथा संस्कृत वर्ग की यह बोली धीरे-धीरे ठेठ ब्रजभाषा को प्रभावित करती है तथा मिश्रित करती है साथ ही ठेठ ब्रजभाषा के प्रयोग-क्षेत्रों को भी सीमित कर रही है। नई पीढ़ी में ये प्रभाव तथा मिश्रण बड़ी संख्या में देखे जा सकते हैं। (§३१३-३१६)। सामान्यतः गाँव के शिक्षितों की अपेक्षा नागरिक शिक्षितों की बोली में स्टेंडर्ड हिन्दी का संक्रमण अधिक मिलता है।

आगरा जिले की बोली के क्षेत्रीय उपरूप

३०४. आगरा जिले की बोली के दो उपरूप स्पष्ट दिखाई देते हैं—पश्चिमी तथा पूर्वी। पश्चिमी के भी दो विभाजन किए जा सकते हैं—उत्तरी पश्चिमी तथा दक्षिण-पश्चिमी। जैसा कहा जा चुका है (§२६८), उत्तर पश्चिमी प्रदेश की बोली केन्द्रीय ब्रजभाषा के अंतर्गत रक्खी जा सकती है, जब कि पूर्वी भाग की बोली ब्रजभाषा के पूर्वी-दक्षिणी (कन्नौजी) उपरूप के अधिक निकट है। दक्षिण-पश्चिमी उपरूप पर धौलपुर तथा भरतपुर की प्रादेशिकता की स्पष्ट छाप देखी जा सकती है, पर यह उपरूप मूलतः केन्द्रीय ब्रज से बहुत दूर नहीं कहा जा सकता।

३०५. पश्चिमी तथा पूर्वी बोलियों के प्रतिनिधि स्वरूप किरावली तथा बाह तहसील की बोली को लिया जा सकता है, जो क्रमशः जिले के पश्चिमी तथा पूर्वी सीमांतों पर अवस्थित हैं। सामान्य ढंग से किरावली, खैरागढ़, आगरा तथा ऐत्मादपुर और फतेहाबाद के कुछ हिस्से की बोली पश्चिमी रूप के अंतर्गत रक्खी जा सकती है और बाह, फ़ीरोजाबाद तथा फतेहाबाद के पूर्वी प्रदेश की बोली पूर्वी रूप के अंतर्गत रक्खी जा सकती है। पर इन दोनों रूपों के भेद के लक्षण स्पष्टतः किरावली तथा बाह की बोली की तुलना में दिखाई देते हैं। बीच के प्रदेश में प्रायः दोनों ही प्रकार की विशेषताएं मिल सकती हैं। और इस दृष्टि से फ़तेहाबाद तहसील की भाषा सामान्यतः जिले की केन्द्रीय बोली के रूप में देखी जा सकती है।

३०६. किरावली रूप तथा बाह रूप की तुलना से निम्नलिखित भेदक लक्षण स्पष्ट होते हैं—

१—पश्चिमी प्रदेश की बोली में क्रिया का-यों रूप प्रयुक्त होता है—चल्यों, गयों, दियों, पूर्वी प्रदेश की बोली में ओं रूप मिलता है—चलों, गओं, दओं।

२—पूर्वी उपरूप में भविष्यत् क्रिया का-ह (चलिहों) रूप अधिक प्रयुक्त होता है। पश्चिमी उपरूप में ग (चलोंगो) रूप अधिक प्रचलित है।

३—सहायक क्रिया का हतों, हती रूप पूर्वी प्रदेश में प्रचलित है, पश्चिमी भाग में इसका प्रयोग बहुत कम होता है।

४—परसर्ग कूं तथा सूं का प्रयोग पश्चिमी प्रदेश में होता है, पूर्वी उपरूप में इनके स्थानापन्न कों तथा सों हैं।

५—सर्वनाम के य रूप पश्चिम में प्रयुक्त होते हैं—या, याइ पूर्वी उपरूप में इनके स्थान पर ज रूप प्रचलित हैं—जि, जाइ। उत्तम पुरुष एकवचन सर्वनाम का हूं रूप पश्चिमी बोली में प्रयुक्त होता है। पूर्व में हों का प्रयोग अधिक है।

६—सहायक क्रिया का हूं अथवा ऊं रूप पश्चिम में मिलता है। पूर्वी प्रदेश में हों अथवा ओं का अधिक प्रयोग होता है। पूर्वी प्रदेश में भूत काल की सहायक क्रिया का एक रहें रूप मिलता है, पश्चिमी प्रदेश में इसका प्रायः अभाव है।

७—पश्चिमी प्रदेश में भविष्यत् क्रिया के कुछ रूप संक्षिप्तीकृत मिलते हैं—दुंगो, जांगो, होगों। पूर्वी भाग की बोली में ये क्रिया-रूप अपिनिहित से युक्त मिलते हैं— देउंगो, जांउंगो, होइगों।

८—संयुक्त क्रिया के दीन्हों, दीन्ही आदि से बने रूप पश्चिम में मिलते हैं, (गड़बाइ दीन्हीं, उड़बाइ दीन्हों, लें लीन्हों), पूर्व की बोली में ये रूप प्रायः दओं, दई से बनते हैं—

९—हेंगों क्रिया रूप का प्रयोग पूर्वी प्रदेश की बोली की ही विशेषता है।

१०—क्रिया विशेषण च्यों का प्रयोग पश्चिमी बोली में ही मिलता है, पूर्वी उपरूप में इसका स्थानापन्न क्यों है।

ध्वनि-रूपों की दृष्टि से भी दोनों प्रदेशों की बोली में अंतर है, परन्तु अपेक्षाकृत कम।

१—समीकरण (उद्द, हद्द) तथा संधि (सिग्गरई) की प्रवृत्ति पूर्वी प्रदेश की बोली में पश्चिमी प्रदेश की बोली की अपेक्षा अधिक है।

२—व्यंजनांत शब्दों में लघु इकार अथवा उकार जोड़ने की प्रवृत्ति (जालि पेंरि भालु) पूर्वी प्रदेश में अधिक मिलती है।

३—पश्चिमी प्रदेश की बोली में कुछ स्त्रीलिंग बहुवचन के रूप दीर्घीकृत होते हैं—दूतींन् बारींन्, असरफीन्। पूर्वी प्रदेश में ये रूप दूतिन बारिन् अथवा बान्नि, असरफिन की भांति मिलते हैं।

४—पूर्वी प्रदेश की वोली में कुछ शब्दरूप जिनके प्रारंभ में इ स्वर होता है—फिर, गिर, पश्चिमी प्रदेश में इ के गुण रूप ए में परिर्वात्तित हो जाते हैं, फेर गेर।

५—ब्रजभाषा के विशिष्ट ओंकारांत मूल संज्ञा रूप पश्चिमी प्रदेश की बोली में विशेष मिलते हैं—मुद्दों गाड़ों छोरों। पूर्वी प्रदेश में ये रूप प्रायः आकारांत हो जाते हैं—मुद्दा, गाड़ा।

३०७. शब्द-समूह की दृष्टि से दोनों उपरूपों में पर्याप्त अंतर मिलता है। एक प्रदेश की स्थानीय शब्दावली दूसरे प्रदेश की स्थानीय शब्दावली से प्रायः भिन्न रहती है। उदाहरणार्थ पश्चिमी उपरूप में बहु प्रयुक्त शब्द छोरों (पुत्र) तथा बइयरि (स्त्री) पूर्वी उपरूप में नहीं मिलते। वहां इन शब्दों के पर्याय मोंड़ा तथा मेंहेंरिया अथवा जनीं प्रयुक्त होते हैं। बोली के पश्चिमी उपरूप के कुछ स्थानीय शब्दों की सूची दी जा रही है, जिनमें से कुछ के तो पूर्वी उपरूप में स्थानीय स्तर के पर्याय हैं, पर सब के नहीं।

पश्चिमी उपरूप		**पूर्वी उपरूप**
अंधंउआ	(अंधा कुंआ)	अंध कुआ
इतेकइँ	(इतने में)	इतने में
खरँ	(मार्ग)	खार
खाती	(बढ़ई)	बढ़ई
छाहर	(खुला स्थान)	खुले
छोरों	(लड़का)	लड़िका
जेहरि	(घड़ा)	मंथनियां
झंडेलन्	(अंधा कुआ)	अंध कुआ
तका	(युक्ति)	तुक्का
दर्रि मारें	(सीधे)	सर्रात
निपुत्री	(पुत्र हीन)	—
पेंनां	(चाबुक)	पनेंठा
बइयरि	(स्त्री)	मेंहेंरिया अथवा जनीं
बिकुच्ची	(कोख)	कोख्
सिरकटा	(सियार)	घोंदुआ

पूर्वी उपरूप में अंकित शब्द स्थानीय कोटि के हैं। पश्चिमी उपरूप के उद्धृत शेष स्थानीय शब्दों के ठेठ पर्याय पूर्वी उपरूप में नहीं मिलते। इसके विपरीत बहुत से पूर्वी उपरूप के स्थानीय शब्दों के ठेठ पश्चिमी पर्याय नहीं मिलते——कटऊं पुंगा, सेंरु।

३०८. जिले की बोली के दोनों उपरूपों की तुलना से स्पष्ट हो जाता है कि पश्चिमी उपरूप मथुरा की बोली के अधिक निकट है तथा पूर्वी उपरूप पर कन्नौजी तथा ग्वालियरी की विशिष्ट छाप है। इसीलिए पूर्वी बोली में ब्रजभाषा का वह बहुप्रसिद्ध तथा परंपरागत माधुर्य नहीं मिलता, जो मथुरा अथवा पश्चिमी आगरा की बोली में मिलता है।

पूर्व से पश्चिम तक एक लंबी पट्टी के रूप में फैले होने के कारण (§१) जिले की बोली के पूर्वी तथा पश्चिमी उपरूप स्पष्ट जान पड़ते हैं। जिले की चौड़ाई अपेक्षाकृत कम होने के कारण (उत्तर से दक्षिण तक जिले की सब से अधिक चौड़ाई ३५ मील है) दक्षिणी भाग में किसी उपबोली का स्वरूप नहीं दिखाई देता, यद्यपि जिले के दक्षिणी प्रदेश में धौलपुर तथा ग्वालियर की ब्रजभाषा के शब्द-समूह का मिश्रण मिलता है (§२७३, २७५)।

बोली वैभिन्य के अन्य आधार

३०९. क्षेत्रीय उपरूपों के अतिरिक्त किसी भी बोली में जाति, अवस्था-वर्ग अथवा उद्योग-व्यवसाय के आधार पर अलग-अलग उपरूप मिल सकते हैं। बोली एक सामाजिक उपादान है, अतः सामाजिक उपकरणों के आधार पर उसमें परिवर्तन होना स्वाभाविक ही है।

३१०. जाति के आधार पर आगरा जिले की बोली में सुनिश्चित तथा उल्लेखनीय उपरूप नहीं मिलते। संकलित नमूनों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक तहसील के ब्राह्मण, ठाकुर तथा चमार की बोली में अधिक समानता है अपेक्षाकृत दो भिन्न तहसीलों के ब्राह्मणों, ठाकुरों तथा चमारों की बोली में। क्षेत्रीय समानता अथवा वैभिन्य की तुलना में जातीय समता अथवा वैभिन्य प्रायः नगण्य है। एक ही तहसील की जाति समूहों की बोली में जो अंतर मिलता भी है, वह जातिगत न हो कर उद्योग व्यवसाय तथा अन्य आर्थिक स्तरों की भिन्नता के कारण है। उदाहरणार्थ, एक ब्राह्मण तथा चमार की बोली में जो अंतर है वह ब्राह्मण की शिक्षा अथवा शिक्षित व्यक्तियों के संपर्क के कारण है तथा उनकी आजीविका के उपायों की भिन्नता के कारण हैं। स्पष्टतः ही ये अंतर मुख्यतः शब्द-समूह के क्षेत्र में हैं।

३११. बोली के जातीय उपरूप न होने के कई कारण हैं। इनमें सब से प्रमुख है स्वतः जातीय व्यवस्था के बंधनों का ढीला पड़ना। आगरा नगर तथा जिले के

गांवों में अब जातीय मुहल्लों का अंतर उतना विशिष्ट नहीं रहा जितना अब से बीस वर्ष पूर्व था। वस्तुतः ये जातीय मुहल्ले (खतराना, चमरउआ आदि) ही जातीय बोलियों के निर्माण में सब से महत्वपूर्ण उपकरण थे। अब धर्म तथा जाति निरपेक्ष भावनाओं के अधिकाधिक विकास के कारण ये मुहल्ले प्रायः नाममात्र को ही अपना वैशिष्ट्य रखते हैं।

जातीय भावना के शिथिल होने के भी ऐतिहासिक कारण हैं। स्वतंत्रता आन्दोलन में गांधीवादी दृष्टिकोण, अंग्रेज़ी संस्कृति का प्रचार तथा ज़मींदारी प्रथा का उन्मूलन—इन तीन विशेष परिस्थितियों ने जाति-निरपेक्ष दृष्टि को विकसित होने में सहायता दी है। गांधीजी के प्रभाव के कारण छुआछूत की भावना समाप्त हो रही है, मोटर बसों, ट्रेनों, सिनेमाघरों जैसे अंग्रेज़ी सभ्यता के उपकरणों की वजह से जातीय प्रथाएं तथा कट्टरताएं विघटित हो रही हैं तथा ज़मींदारी प्रथा के न रहने के कारण गांवों में जाति भावना का अनुशासन एकदम ढीला हो गया है। दो महायुद्धों से लौटे हुए सैनिकों ने भी जातीय-भावना की कड़ाई को कम किया है। और इस प्रकार जातीय जागरूकता अथवा कम से कम प्रकटतः जाति-मोह के अभाव ने जातीय बोलियों के अस्तित्व को समाप्त-सा कर दिया है।

३१२. बोली के जातीय स्तरों को मिटाने में स्टेंडर्ड हिन्दी के व्यापक प्रभाव का भी बड़ा हाथ है। सामान्य बोली में जातीय विशेषताओं के स्थान पर स्टेंडर्ड हिन्दी का प्रायः समान प्रभाव अधिक दिखाई देता है। स्कूल, अस्पताल, रेडियो और मोटर बसों जैसे संस्कृति के नवीन उपकरणों के फलस्वरूप स्टेंडर्ड हिन्दी का प्रभाव तथा मिश्रण जिले की बोली में बराबर बढ़ रहा है (§२७८-२८८)। गांवों तथा नगरों का अंतर बहुत कम हो जाने के कारण भी ठेठ जातीय बोलियां अब नहीं पनप पातीं। यातायात की सुविधाओं के कारण गांव के लोग बराबर विभिन्न कामों के लिए आगरा नगर जाते रहते हैं, और इस प्रकार नागरिक संक्रमण धीरे धीरे बढ़ता जाता है। तथा इस नागरिक संक्रमण की वृद्धि के अनुपात से ही स्टेंडर्ड हिन्दी का संक्रमण भी बढ़ रहा है, जिसके फलस्वरूप जातीय उपबोलियों के ढांचे एकदम जर्जर हो गए हैं।

३१३. जिले की बोली में स्टेंडर्ड हिन्दी का संक्रमण अवस्था-वर्गों के अनुसार कई रूपों में मिलता है। इस संक्रमण के कारण बोली वैभिन्य के कई स्तर मिलते हैं। यदि सामान्य जनता के तीन अवस्था-वर्ग निश्चित किए जाएं—प्रथम वर्ग ५० वर्ष से लेकर ८० वर्ष तक के व्यक्तियों का, दूसरा वर्ग २५ वर्ष से लेकर ५० वर्ष तक के व्यक्तियों का तथा तीसरा वर्ग २५ वर्ष तक के युवकों का, तो इन तीनों अवस्था-वर्गों में स्टेंडर्ड हिन्दी का संक्रमण विभिन्न अनुपातों में मिलता है। स्टेंडर्ड हिन्दी के साथ ही अंग्रेज़ी शब्दों का मिश्रण भी उल्लेखनीय है।

३१४. सीमित ढंग से बोली का विश्लेषण करने पर स्टेंडर्ड हिन्दी तथा अंग्रेज़ी शब्द-समूह के इस संक्रमण के संबंध में निम्नलिखित आंकड़े प्रस्तुत किए जा सकते हैं—

अवस्थावर्ग	**स्टेंडर्ड हिन्दी के शब्दों के प्रयोग का प्रतिशत**	**अंग्रेज़ी शब्दों के प्रयोग का प्रतिशत**
१—प्रथम अवस्था वर्ग (५० से ८० वर्ष)	३¼	१¼
२—द्वितीय अवस्था वर्ग (२५ वर्ष से ५० वर्ष)	४½	२¾
३—तृतीय अवस्था वर्ग (२५ वर्ष तक)	७	६

बोली में सामान्यत: तत्सम शब्दों के प्रयोग का प्रतिशत ५ है तथा अंग्रेज़ी शब्दों के प्रयोग का ३½ है। शिक्षित वर्ग की बोली के प्रतिशत इस प्रकार हैं—तत्सम शब्द ९½, अंग्रेज़ी शब्द १० (§२९९)। यह स्मरणीय है कि ये तीनों विश्लेषण अलग-अलग नमूनों को लेकर किए गए हैं।

इसी विश्लेषण के आधार पर स्थानीय शब्दावली से संबंधित आंकड़े इस प्रकार हैं—

अवस्था वर्ग	**स्थानीय शब्दावली के प्रयोग का प्रतिशत**
१—प्रथम अवस्था वर्ग (५० से ८० वर्ष)	२२½
२—द्वितीय अवस्था वर्ग (२५ से ५० वर्ष)	१८
३—तृतीय अवस्था वर्ग (२५ वर्ष तक)	८¼

तुलना की दृष्टि से जिले के सामान्य शब्द-समूह में स्थानीय शब्दावली २० प्रतिशत है, तथा शिक्षित वर्ग की बोली में स्थानीय शब्दावली १½ प्रतिशत है।

३१५. प्रथम अवस्था वर्ग तथा तृतीय अवस्था वर्ग की तुलना से यह निष्कर्ष निकलता है कि तृतीय अवस्था वर्ग प्रथम अवस्था वर्ग की तुलना में प्राय: दूने तत्सम शब्दों का प्रयोग करता है, प्राय: चौगुने अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग करता है तथा एक तिहाई से अधिक स्थानीय शब्दों का प्रयोग करता है।

३१६. व्याकरणात्मक रूपों में हों, तुंम् तथा बिनि के स्थान पर में हमें आप् तथा उन् का प्रयोग तृतीय अवस्था-वर्ग के व्यक्तियों में कुछ अधिक

मिलता है। साथ ही इस अवस्था वर्ग का वाक्य विन्यास भी अधिक चिंतित, अन्वय युक्त तथा लंबा दिखाई देता है। ये सभी प्रवृत्तियों प्रथम अवस्था वर्ग तथा तृतीय अवस्था वर्ग की बोली के अंतर को बहुत स्पष्ट ढंग से व्यक्त करती हैं। और जैसा कहा जा चुका है, यह अंतर मुख्यतः स्टेंडर्ड हिन्दी के संक्रमण के कारण है।

३१७. बोली-वैभिन्य का तीसरा प्रमुख आधार ग्रामीण तथा नागरिक उद्योग व्यवस्था है। विभिन्न उद्योगों की अपनी विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावली होती है। बढ़ई, कुम्हार, मोची जैसे व्यवसायी व्यक्तियों को अपने कार्य करते समय जिन विशिष्ट उपकरणों तथा परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है उनके लिए उनके पास पर्याप्त शब्द-समूह है। जनपदीय बोलियों की यह समृद्धि विशेष रूप से स्पृहणीय है।

आगरा जिले की बोली में भी इस औद्योगिक शब्दावली का व्यापक प्रयोग होता है पर जैसा कि स्पष्ट है, बोली-वैभिन्य का यह आधार केवल शब्द-समूह तक ही सीमित है। औद्योगिक शब्दावली तथा उसके अपने विशिष्ट शब्द-प्रयोग तो हो सकते हैं, पर औद्योगिक बोली की कल्पना नहीं की जा सकती। यह औद्योगिक शब्दावली अत्यंत समृद्ध होने के कारण वस्तुतः एक स्वतंत्र अध्ययन का विषय है।

बाह तहसील की मिश्रित बोली

३१८. इस तथ्य का विवेचन अलग से किया जा चुका है कि पूर्वी आगरा, विशेषतः बाह तहसील की बोली स्टेंडर्ड अथवा केन्द्रीय ब्रजभाषा नहीं मानी जा सकती है (§२७७)। वस्तुतः बाह तहसील की बोली ब्रज, कन्नौजी तथा बुंदेली का एक सम्मिलित रूप है। इस बोली सम्मिश्रण के पीछे भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक कारण हैं (§२८, २९)। बाह की बोली का ध्वन्यात्मक तथा व्याकरणात्मक ढांचा ब्रज पर आधारित है तथा कन्नौजी के मिश्रण से बना है, और उसके शब्द-समूह में काफी संख्या में बुंदेली शब्द मिलते हैं।

३१९. ध्वनितत्व की दृष्टि से बाह से बाह की बोली में कन्नौजी की एक प्रमुख विशेषता समीकरण (Assimilation) की प्रवृत्ति मिलती है। उद्द (उरद), दद्द (दरद), बद्धा (बरधा), सद्दी (सरदी), हद्द (हरदी) जैसे उदाहरण, बाह के नमूनों में प्रायः मिलते हैं। इस प्रवृत्ति की ओर डॉ० उदय नारायण तिवारी ने भी संकेत किया है। "ब्रजभाषा के पूरब के जिलों में र् के बाद व्यंजन का द्वित्व हो जाता है। यह विशेषता पड़ोस की बुंदेली की उप-भाषा भदौरी में मिलती है।" (हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, २४०)।

समीकरण के समान ही बाह की बोली में बहु-प्रचलित संधि भी मुख्यतः कन्नौजी जैसी ही है। घस्सैं (घर् सैं), भौंट्ठीक (भौंत् ठीक), सिग्गरई (सिग्

घर् की), होतो (होत् हो)। बाह् की बोली के इस प्रकार के प्रयोगों को कन्नौजी में भी देखा जा सकता है।

बाह् की बोली में व्यंजनांत शब्दों में ह्रस्वतर इकार अथवा उकार जोड़ने की प्रवृत्ति (जाति, पौंरि, घरु) मिलती है (§९८)। यह ध्वन्यात्मक विशेषता आगरा जिले की पश्चिमी बोली में सामान्यतः नहीं मिलती। पूर्वी प्रदेश में यह प्रवृत्ति कन्नौजी से तुलनीय है। डॉ० उदय नारायण तिवारी के शब्दों में "गंगा के उत्तर तथा कानपुर की कन्नौजी में व्यंजनांत पदों से एक लघु इ संयुक्त कर दी जाती है—हिन्दी के ह्रस्व व्यंजनांत तद्भव शब्द, विकल्प से कन्नौजी में उकारांत हो जाते हैं (हिन्दी भाषा का उद्‌गम और विकास, २४९-२५०)। पुल्लिग शब्दों में उ तथा स्त्रीलिंग शब्दों में इ जोड़ा जाता है।

३२०. व्याकरणात्मक रूपों के क्षेत्र में बाह् की बोली में भविष्य निश्चयार्थ क्रिया के ब्रज तथा कन्नौजी दोनों ही रूप मिलते हैं। ब्रज का ग् भविष्य (चलौंगो, चलैंगों) तथा कन्नौजी का ह् भविष्य (चलिहौं, चलिहैं) दोनों ही बाह् की बोली में प्रयुक्त होते हैं। भविष्यत् काल का यह ह् क्रिया-रूप वस्तुतः पूर्वी ब्रजभाषा में ही मिलता है—"दूसरे संयोगात्मक रूप ह् भविष्य के नाम से प्रसिद्ध भविष्य निश्चयार्थ के हैं। इनका प्रयोग पूर्व के कुछ जिलों तक ही सीमित है।" ('ब्रजभाषा', धीरेन्द्र वर्मा §२२६)।

बाह् तहसील की बोली में बहु-प्रयुक्त सहायक क्रिया के रूप हतु, हतो, हती, हते, हतीं मुख्यतः कन्नौजी में मिलते हैं। ब्रज तथा कन्नौजी की अभिन्नता स्थापित करते हुए डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने भी इस स्थिति की ओर संकेत किया है ('ब्रजभाषा', ७५)। डॉ० उदय नारायण तिवारी भी सहायक क्रिया के इन रूपों को मुख्यतः कन्नौजी का मानते हैं ('हिन्दी भाषा का उद्‌गम और विकास', २४६)। हतो का प्रयोग समीपवर्ती बुंदेली बोली में भी मिलता है।

बाह् की बोली में एक सहायक क्रिया का रूप रहैं मिलता है जो मुख्यतः मूल क्रिया के रूप में प्रयुक्त होता है (एकु मौंड़ा रहैं, द्वै भइया रहैं)। यह रहैं रूप मुख्यतः अवधी का है, और कन्नौजी के माध्यम से बाह् की बोली में आया प्रतीत होता है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा भी इन रूपों को पूर्वी हिन्दी प्रदेश से आया मानते हैं ('ब्रजभाषा', §२३०)।

बाह् की बोली में वर्तमानकालिक सहायक क्रिया का रूप प्रायः ग प्रत्यय के साथ संयुक्त मिलता है—हैंगों, यद्यपि इस–ग प्रत्यय से यहां भविष्य का भाव व्यक्त नहीं होता। यह हैंगों रूप भी वस्तुतः पूर्वी सीमांतीय जिलों से आया लगता है ('ब्रजभाषा', §२२३)।

बाह् की बोली उपर्युक्त कई व्याकरणात्मक रूपों की दृष्टि से कन्नौजी से समता रखने पर भी मुख्यत: ब्रजभाषा के व्याकरण पर आधारित है। इस बोली में औं क्रिया रूपों (चलौं) का होना इसका सबसे बड़ा प्रमाण है। कन्नौजी विशुद्ध ओ (चलो) बोली है, और इस रूप का कोई मिश्रण हमें बाह् की बोली में नहीं मिलता।

३२१. बाह् की मिश्रित बोली में बुंदेली का मिश्रण मुख्यत: शब्द-समह् के क्षेत्र में है। बाह् तहसील तथा सीमावर्ती बुंदेली क्षेत्र (सम्मिलित रूप में भदावर प्रदेश) के प्राचीन सांस्कृतिक संपर्क तथा निकटता का सबसे बड़ा उदाहरण बुंदेली का यह् शब्द-समूह् ही है, जो बाह् तहसील में सामान्यत: प्रयुक्त होता है। बहुत से शब्द इस प्रदेश में प्रचलित बुंदेली लोक-कथाओं तथा लोकगीतों के माध्यम से संभवत: आए होंगे। बाह् तहसील में प्रचलित बुंदेली शब्दों की एक संक्षिप्त सूची नीचे दी जा रही है—

कबूल सूरत (वि०) अत्यंत सुंदरी।
खंगौरिया (सं०) दरिद्र ग्रामीण स्त्रियों के गले का एक विशेष आभूषण।
खौंद (सं०) दो टीलों के बीच की नीची भूमि।
गंगाल् (सं०) पानी भरने का पीतल अथवा मिट्टी का घड़ा।
जड्ड (सं०) टक्कर।
ज्वाब् (सं०) उत्तर
जोरि कें (क्रि०) इकट्ठा कर के।
झकूटा (सं०) छोटी झाड़ी।
डांक (स्त्री०) तेज चलने वाली उंटनी।
तम्हॆंरौं (सं०) तांबे का घड़ा।
तरियाँ (सं०) तरह्।
दौंची (सं०) ज़मीन अथवा सड़क या किसी बरतन में पड़े गड्ढे।
नॆंहनों (वि०) छोटा।
निसाफ़ (सं०) न्याय।
बाबा (सं०) पितामह्।
बिलिया (सं०) कटोरी।
बींधे (क्रि०) उलझ गए।
बेला (सं०) कटोरा।
भटार् (सं०) गुफा।
भौंजी (सं०) भाभी।
लेज् (सं०) कुएं से पानी खींचने की रस्सी।

हुस्काओं (क्रि०) उकसाया।

कुछ बुंदेली मुहाविरे भी बाह की बोली में मिलते हैं—डूंड़े पें धरे (निश्चित अनिवार्य), वक न फटी (मुंह से बोल न निकला)।

३२२. बुंदेली प्रदेश तथा बाह तहसील वस्तुतः एक ही सांस्कृतिक इकाई के अंग हैं। इस प्रदेश का नाम भदावर अब भी प्रचलित है, जिसका अत्यंत प्राचीन राज्यकुल (§१८) आज भी बाह के नौगवाँ गांव में वर्तमान है। यह भदावर प्रदेश भौगोलिक, सांस्कृतिक तथा मध्यकालीन इतिहास की दृष्टि से एक पूरी इकाई है (§२८)। बाह के गांवों में ग्राम देवताओं तथा भुमियों से संबद्ध कई बुंदेली लोक कथाएं प्रचलित हैं। रजपूती होरी तथा लेद, बुंदेलखंड के दो प्रिय लोकगीत बाह में भी जन प्रचलित हैं। बाह तथा समीपवर्ती ग्वालियर प्रदेश के संबंधों की चर्चा अलग से की जा चुकी है (§२८)। भदावर प्रदेश की बोली को 'भदावरी' कहा गया है, यद्यपि इस भदावरी या भदौरी बोली को भ्रमवश बुंदेली की एक उपबोली मान लिया गया है (§३४, ३७)। वस्तुतः भदावर के केन्द्र स्थान बाह तहसील की बोली मुख्यतः ब्रज है, तथा उसमें कन्नौजी की कई प्रमुख विशेषताएं मिलती हैं। बुंदेली का मिश्रण इस बोली में शब्द-समूह तथा मुहावरों के क्षेत्र में है। इस प्रकार बाह तहसील की बोली एक मिश्रित अथवा सीमावर्ती बोली है, जिसमें ब्रज, कन्नौजी तथा बुंदेली की विशेषताओं का सम्मिलन हुआ है। इन तीनों बोलियों के एक सम्मिलित साहित्य की चर्चा विद्वानों ने की है (राहुल सांकृत्यायन, 'मध्यदेशीय भाषा' की प्रस्तावना)। लोक साहित्य के क्षेत्र में भी इस सम्मिलन की स्थिति को देखा जा सकता है।

परिशिष्ट–क

बोली के चुने हुए नमूने

आगरा (तहसील)

एक कऊं कथा हें रई। सो पंडित्-लोग जावें हें सो गेंल् में जि बतरात आमें कि आज कथा में बड़ों अमिरित बरस्यों। एक गँमार आदिमी के कान् भनक् परी अमिरित की। बानें कई कल्लि माराज हौंऊं लें चलियो। सो कथा में बऊ बैंठि गयों। अलगियाओं। औंर पंडित् सब् बिछइया पैं बेठि गए रोजबारे पैं। जव देर भई थोरी सो कुत्ता चलों आओं उस्के म्हों पैं मूंति गओं। मूंति गओं सो बु पुचुर पुचुर करि कें पी गयों। पी कें बैंठों रहों। जब कथा संपूरन हों कें सब् लोग चल् दए गेंल में बतरात आए कि आजु बड़ों अमिरित बरस्यों। अब चमार नें कई कि बरस्यों तौं सई पर खारौं बरस्यों।

बांईपुर   पंडितजी (सनाढ्य ब्राह्मण, ४७ वर्ष)

भारत में फिरि सें आओं पार् मेरी करि नइया
क्रिसन कन्हइया।
अजमिल, ध्रों, गनिका तारी
द्रोपदि चीर् बढ़ाइ गए
तुम गज् के फंद छुड़ाइ गए
जगदीस् हरे जगदीस् हरे।
मेरी बेर् कैंसें करिय देर, अब त्यारौंई लयों सहारों।
भव सागर् पार् उतारौं
निबारों हो दाऊजी के भइया।
कलिजुग में प्रभु कब आओंगे
दुख टारन सुख देंनं
दरस् बिन् तरसन् लागे हमारे बैंरी नेंना
हो-ओ-ओ नित होइ अत्याचारी
राखों लाज बनबारी।

सिकंदरा   दुबरीसिंह (यादव ठाकुर, ४२ वर्ष)

चोर चले साब् सो उन्नें एक साऊकार् की चोरी करी। औंर साऊकार की चोरी उन्नें जेवरात बगेंरा की करी। अब बिन्नें कई कि जिन जेबरातन् बगेंरा कों काँ भुनावें। तौं बे बाहर दूर देस में चले गए। दूर देस में जब चले गए बिन्नें कई कि हयां साऊकार की चीजें कोऊ सनाख्त नाँएं, कस्सकेंगों। बिन्नें मां जाइ कें अपनों एक साथी छोड़ दऔं कि तुम रोटी ओटी बनाऔं तब् तक् हम् इन जेबरन् कों बेंच बाँचि आमें। उन्नें कई माल तौं खूब मिलेंगोंई सो भोजन खूब अच्छी तरां बनाए। बु जो हे बिनिके साथी सो जेबर लेंकें बजार् में पौंचि गए। सो बजार् में उन्नें देखी कि एक् कोठी बनी भई औं बाके ऊपर साइनबोट उन्नें देखों कि कोठी जों हरी बच्चा की लिखी भई। द्वै संतरी घूमि रहे। संतरिन सैं उन्नें पूंछी कि जि दुकान् काए की हें। तौं बा संतरी नें जबाव दयों कि ह्यां हीरा पन्ना जवारात की खरीदारी औंर बिकवाली होति एँ। तौं भीतर जब पौंचों तौं एक मसन्द के सहारें एक वड़े मोंटे थुंदियल पड़े भए। उन्नें अपनीं चीजें उन्नें दिखाईं औं कही कि हम् इन्हें बेंचिबे के लें ह्यां आए। उन्नें चीजें देख करि कें औंर उन्सैं कही कि भई चीजें तौं भोंत् कीमती हें। में मालिकें दिखाइ लाऊं में तौं मुनीम हूं। उन्नें कई दिखाइ लाऔं साब। तौं कोठी में सैं एक दरवाजों खोलि करि कें मुनीमजी चले गए। उनें जब जादा देर् हों गई तौं उन्नें पेंहरेबारन् सैं कही कि मुनीमजी नई आए भोंत् देर हों गई। तौं पेंहरेबान्न नें कई कि देर् तौं बेसक हवें गई, में जाऊं मुनीमजी कों पतौं लगाऊं। बा दरबाजे में सैं बु पेंहरेबारोंऊ गाइब हो गऔं। जब् औंर समें लगों तौं बे चोर बोले बा दूसरे पेंहरेबार सैं कि भाई उन्नेंऊं जबाब नाँएं दऔं जो पेंहरेबारे गए। दूसरे पेंहरेबारे नें कई कि में तौं पतौं लगाऊं कि का कारन भऔं। बुऊ बा दरवाजे सैं निकरि कें गाइब हव गयों। फिरि बु चोर नें बिचार करों कि समें भोंत् लगों चलों हमई चलि कें देखें कि कां गए। तौं बा दरबाजे कों खोलि कें जब् भीतर घुसे तौं उन्नें देखों कि बिलकुल बियाबान जंगल हें औंर हवां मुनीमजी और पेंहरेबान्न कों कोई पतौं नई। औंर बे निरासा हों गए। औंर उन्नें कई कि चलों तुम तौं ह्यां सैं लोंटि कें। जहां उनकों साथी रोटी करंओ हवां आए। तौं साथी नें खुसी के मारें दूर सैं ई पूंछी कि कहों भाई चीज् बिकि गई। उन्नें जवाब दऔं कि हां भई बिग्गई। साथी बोलों का भाउ में। तो उन्नें जवाब दओं कि जा भाउ आई ताई भाउ बिग्गई।

बांईपुर चौधरी नत्थासिंह (यादव, ५४ वर्ष)

एक जनें कों लड़िका परदेस गऔं। बु आयों डेढ़ द्वै बर्स में अपनें घर आयों परदेस सैं। कोट पतलून पैंहरि कें आयों ! तौं बानें परदेस

की अपने गाम में बड़ी अदा दिखाई। बु अपनी माँ तें बोल्यौ। बानें कई कि माँ मुल्तिम खीचरी बनाऔ। अब वा की माँ बोली कि भइया के सारे तोइ जि का टेव परि गई। तब बानें फेरि खीचरी बनाई।

सिकंदरा पंडित जी (सनाढ्य ब्राह्मण–४७ वर्ष)

आगरा (नगर)

एक दिन रामसहाय सोती मैंनपुरी सैं कलकत्ता जात् भए प्रयागराज म हमारे ह्यां सबेरैं पौंहचे। औंर कही कि भांग ठंडाई करिकें गंगास्नान कों चलेंगे। भांग उन्नें आध पाउ के करीब घोंटी औंर लुंगदी बनाइ कें अँगौछा में बांधि लई। औं घरसैं हम औं वे दोऊ आदिमी निकरे। तौं बे बोले बिहारीचरन एक लड़िका मैंनपुरी कों पढ़तु हैं औंर वु साहगंज में रहात्वें। तौं बासैं मिल्त चलें। सबेरे सात् बजे कों बखत हो। वहां जब गए तौं बिहारीचरन औंर उनके एक बैंहनोई ऐंमे में पढ़ते। वे दोंनों जनें चाह आह पीकें बैंठे भए हे। तौं रामसहाय नें कई अब भांग ठंडाई हियंई छान लेउ तब चलेंगे। फिरि भांग ठंडाई व्हंई छनीं। तौं बा में सैं एक गिलास तौं बिहारीचरन कों दई ओंर चौंथाई गिलास उनके बैंहनोई कों। फिर बाके बाद दोंनों आदिमी व्हंई निबटे। निबटि कें तमाखू अमाखू खाई। तमाखू अमाखू खाइ कें जब निबटे तौं उनके बैंहनोई बोले कि हमाए तौं अब् प्राण निकसैं चाँहतें काऊ डाक्टर कों बुलाओं। राम-सहाय फिर बजार गए ओंर मलाई ओंर अमरूद लाए। उनें मिसरी मिलाइ कें मलाई खबाई। बिहारीचरनऊ बोंहोंतु घबराइ गए कि जि का भएु चाँहतें। उनि के जा झमेले में बारा बजि गए। बिगरि न्हाएं धोएं। रामसहाय बोले हमसैं कि सेर् भर् भांग हमाए पास हें सो व्हंई घर पैं रक्खी हें। ऐंसों न होइ कि पुलिस उलिस आबैं ओं इनिकी तबियत गड़बड़ होइ काए कि पाउ भर भांग सैं जादा लें जाइब कों हुकुम नाँएु हें ओं हम् सेर भर भांग लेंएु जातें। सो लगभग डेढ़ बजे के जब उनकी तबियत नेंक् ठिकाने पैं आई तब हम दोंनों जनें घर् कों आए ओं आइ कें पैंहलेंई भांग कों ऊपर छत्ति में जो मुकुआ होतें उनि में रक्खि दई। हमऊं दोंनों आदमिन् कों नसा बड़े जोर के हे। फिर न्हाए धोए। हमाए पिताजी अर्हर की दार् रोटी ओं भात् करिकें ओं दबाइ कें रक्खि कें अपने काम पैं चले गए हे। फिरि हम् लोगन्नें चारि बज़ें रोटी खाई।

मदनगोपाल (चतुर्वेदी ब्राह्मण, ६२ वर्ष)

एक दफें ऐंसों भओं कि तेंसील कों चपरासी डंडूरा बासैं काते सो आओं उगाई के तगादे में। बा दिनाँ अनंत चउदस् कों उपास हो। आपस् में बैंठ

बातचीत् कर् रहे लोग। सो मियांजी नें पूछीं कि आपके यहां क्या त्यौंहार हूँ औं क्या क्या इसमें होता हैं। लोगन नें जि कही कि अनंत चउदस् कों उपास् हैं, दुपैंर के बाद् दही औं पुआ सब लोग् खांइगे। तों बानें कई कि हम भी उपासे हैं। बाके बादि दुपैंर में जब अनंत कों पूजन भओं औंर बाके बादि में सब लोगन् नें भोजन करे तब मियऊं कों खाइबो कों दें दओं। कछू दिन बाद जेठ में निज्जला एकासी के दिन बे मियां फिरि लौंटि कें आए। तों पैंहले के जो बे गीधे भए हे तों उन्नें पूंछी कि आपके यहां आज क्या त्यौंहार हैं। लोगन् नें कई आज् तों निज्जला एकास्सी हैं। मियां नें जि न् पूंछी कि कब् खाइबे कों मिलैंगों औंर बऊ जि कहान लगे कि हम् भी उपासे रहेंगे। लोगन् नें मनेंऊ करी कि तुम् मति रहौं लेकिन् मियांजी अकड़ि कें बोले में तों हमेसा रैंता हूं। तों लोग अपने अपने काम में लग्गए। दुपैंर भयों औं फिर तीसरों पैंर्। साम हैं गई। अब् मियांजी जो आएँ ताई की ओर देखें लेकिन् काऊ नें पूंछी नई कि तुम् खाना खाओंगे। साम् भई सो लोग अपएँ अपएँ सोइ गए। अब् मियांजी कों नींद न आंए। एक् खाट् उनें परिबे कों दें दई। औंर उनके पास एक साफा हो। सो कबऊं तों बाइ बे मूंड़ के ढिंग रक्खें औं कबऊँ बासैं मच्छर झारैं। इतने में भुराओं भओं। तों बा गाउं में एक् काछी बीमार हो सो बु मरि गओं। तों लोग् बाकों लेंकें निकरे। लोगन् की अवाज सुनि कें आपस में पूछन लगे कि को मरि गओं। तों मियां जो हे तड़पि कें बोले कौंन मरि गया कौंन मरि गया, मर् गया कोई निरजला का मारा।

परमेश्वरीदास (ब्राह्मण, ४० वर्ष)

आगरा ब्होत घनों बसों हैं। जाके बीच बीच में दुकानें निकरी हैं। बे बड़ी घनीं मालूम पत्यें। आगरे कों किनारी बजार तौं इतनों घनों मालुम पत्वें कि व्हाँ आदमी कों निकरिबों मुस्किल हैं जात्वें। किनारी बजार तें ई लगों भयों एकु रावतपाड़ों हैं। व्हाँ भस्सु के मारैं नाक में दम आइ जातें। वाँ नाक मूंदि कें निकलनें पत्वें। वाँ तें अगार चलि कें पत्थर बारिन कों बजार हैं। वाँ पत्थर की सब चीजें मिल्ति एँ। फिरि बु रस्ता सीधी जमना जी की ओर निकरि गई हैं। बु रास्ता एक ओर कों तों ताजमैंल कों चली जाति एँ औं दूसरी बेलनगंज माऊँ। ताजमैंल कों जाति का हैं बाकी रस्ता में मुद्दघटों पत्त्वें। याँ कों ताजमैंल देखिबे लाइकें।

रामचरनलाल गुप्त (वैश्य, ३५ वर्ष)

एत्मादपुर (तहसील)

हमाए गांम् में सन् सत्ताउन में एकु अंगरेजु आयों औंर हमाए बाबा सें कही

कि सावक के जिमींदार कां ऍं। बे डरपि कें अपने अटाबुज्ज पैं चढ़ि गए। अंगरेज पीछे तें चढ़ि गऍ। दूसरे लंबद्दार नें देखी कि लंबद्दारें अंगरेज सताउतें। बानें बंदूक उठाइ कें एक गोली माद्दई। साब लौटौ ऑर बानें कई कि जि गांम् जंग चाँह्तें। आगरे कूं बानें तार दऔं ऑर फौज् बुलाइ लई। तोप् लगबाइ दई ऑर हुकुम दऔं कि जा गांम् कूं बिसमार कद्देउ। एक जाट् जो गोलंदाज ओ गोला चलाउतो बानें कई कि जि जाटन कौ गाम् हैं। ब् गोला ऊपर कूं फेंकत रऔं। तब बाइ अंग्रेजें मालिम परी कि जि जाटनु की रच्छा कत्तु ऍं। तौ बानें खुदि तोप् पैं बैंठि कें गोला चलाए। फिर गाम् में आदिमी मारे गए ऑर फौज गाम् में घुसि गई। साब् नें ऑर बचे सो पकल्लए। हमाए बाबऊ पकल्लए। उनें सबन् कूं आगरे जेल में भेद्दऔं। हमाए बाबा आगरे जेलई में मरि गए। ऑरु राउ जोतीपस्साद कौं गाँउ दें दऔं। हमाए बाबा बारैं सैं बीघा के नंबरदार हे। हमाए गांम् में बहत्तर सौ बीघा जमीन् ई। बारैं बारैं सैं बीघा के छैं लंबद्दार हे। फिरि हमाए बाबा के छोटे छोटे लड़िका रहि गए। बे कास्तकार बनाइ दए। अब कांगरेस की लड़ाई में हम् सरीक भए। द्वै सैं बीघा जमीन् के हम किसान ए। अंगरेजन् नें बु हमाई कास्तऊ वेदखल् कद्दई।

छुलाउली दीपचंद (जाट, ५२ वर्ष)

सिरकटा नें सिरकटी सूं कई इन् खेतन् कौ हौं पट्टौ लिखाइ लायौ हूं। अब चाइं ता खेत् में चाइं कछू खाऔं। कोई रोक् टोक् नाँएं सकत्। एक दिनां सिरकटा के पीछें कुत्ता पल्लए। भिटी में धँपसन् न पायौ तौजूं कुत्ता नें ग्वाकौ करिहा पकल्लऔं। कुत्ता बाहर कूं खेंचें सिरकटा भीतर कूं खेंचें। सिरकटी नें कई कि जाइ पट्टौ दिखाइ देउ। तब सिरकटा नें कई कि बेपढ़िन् सूं पल्लौ परि गयौ हैं।

देवखेड़ा हरदलसिंह (सनाढ्य ब्राह्मण, ५६ वर्ष)

किरावली (तहसील)

एकु जाटु ओ। तौ बापैं बड़ी कंगाली ई। तौ बड़बड़ी में त्ति करी परि पूरौ नईं पर्‌यौ। तौ हारि कें लड़ाई पैं चलौ गयौ। आँते की परमेसुर सुन्तें। तौ साब् बु जाइ कें हबल्दार हौ गऔं। तौ साव् बानें मुकतौ रुपइया अपनी बइयरि कूं भेजि दयौ। तौ साब् बानें कछू पक्कौ मकान् बनवाइ लऔं। पक्कौ मकान् बनवाइ कें कछू कमरा बनवाइ लऔं। अब् साब् चार् सिपाइनि की मन् में लगी। चार सिपाई हें जाइं तौ मेरी मड़इया की रखबारी। तौ इतेकई में चारि जने मां आइ गए तौ ईसुर गती ऍंसी भई कि बाकौ ककिया ससुरु बैंठौ हुक्का पी रयो। तौ बानें कंई कि लाला त्यारौ कौन सौ गांम् हैं। तौ बिन्नें कई कि हमारौ गांम् सांमरौ

ह। तौ साब् बिनिकी तनखा ठरि गई दद्दस रुपिया खीर ओर पुरी बाई के सिर। जब भौंत से दिनां बीति गए तौं सूबेदार नें कई कि घरें देखि आमें। तौं साब बु मां त चलि दओं। मकान् पें आयौं सो दरि मारें चलौं जाइ। तौं एक सिपाई धरि उठ्यौं। औं पकरि कें बांह बु फेंकि दयौं। अरे भाई मोइ या घर में हौं आउन देउ। दूसरौं बोलौं कि याइ घर में हौं आउन दें। न जानें सूबेदारई तौं नाँएं। सो साब् घर् में देखि रखौं है कि पूरी है रई है खीर रंधि रई है। बानें कई कि जा का है रह्यौं है भाई। तौं साब् मैंनें चारि सिपाई राखे मड़इया लुटिबे के मारें। अब कह रई है कि खीर सिराइ दें थारिन में। तौं बाकौं पटक् के मारें ढेर है गयौं। तौं खीर् सिराइ कें बनियां के तें संखिया लें आयौं। चारों थारिनि में डारि कें बूरौं डारि कें औंर चारों सिपाई बुलाइ लए। जेंमतई में बे चारों के चारों लुढ़कि गए। अब् बु कात्वें कि जे रोज मत्ते कि आजुई मरि मए। जे काऊ दिनां नाई मरे आजुई मरि गए। पकरि पकिर कें चारौं भीतर् मढ़ा में धद्दए। तौं सांझकी छाक् एकु फकीरु आयौं। सूबेदार कात्वें लाला तू एक छाक् में कितेक चून लें जात्वें। अजी सूबेदार साब् लगि जाइ तका तौं द्वै सेर कें डेढ़ सेर। तौं हमाओं एक काम् कद्देउ तो कूं एक रुपइया दंगो। बानें कई साब् में तइयारों। तौं बानें कई कि एक मुर्दो हमाए घर् में धरौं है। तौं जाइ पिछौंरा में बांधि कें बाहिर फेंकि आ। तौं साब् जाई हिसाव् सैं बानें चारौं फेकि दए। तीन झंडेलन् में औं एकु पोखरा में। बाकूं दिनु बूड़ि गयौं। रिस के मारें बु सोटा लें गयौं फकीर। बाकौं डारिबौं भयौं औं बनियां कौं हाथ-पानीं लें कें उठिब्रौं भयौं। द्वै तीन् सोटा बा बनियऊं में बा फकीर नें जमाइ दए। औं बनियां बांधि कें पानी में डारि दयौं। तौं बोलौं कि सूबेदार साब् लाओं मोकूं अब रुपइया देउ।

नगला स्योरमां सरमनसिंह (ब्राह्मण, ३८ वर्ष)

एक कोरिया ओ। बु गाड़ौं बेंचिबे गयौं। तौं बेंचि कें ग्यारा रुपइया लायौं। तौं बाइ अंधेरौं हौं गओ गेल में। तौं बु खर्र में सोइ गयौं। एकु मां लंबरदार आयौं। तौं बापें पांस्सैं रुपइया हे। तौं लंबरदार नें आइ कें कोरिया तें कही कि तू यां कैसौं सोइ रओं है। तौं कोरिया बोल्यौं रकम् के डर के मारें। यां चोर चबार् के मारें सोइ गयौं ऊं। लंबरदार् बोल्यौं कि रकम् तौं मोऊ पैं है तौं मेंऊं यईं सोइ जाऊं। कोरिया बोल्यौं कि मो सैं नेंक् डौंढ़ेयौं सोइ जा। सो बु बातें अलग् सोइ गओं। तौं राति में चारि चोर् आए। तौं चोरन् नें कई कि यां को डट्यौं है रे।

घुसियारी संकरलाल (सनाढ्य ब्राह्मण, १४ वर्ष)

खेरागढ़ (तहसील)

एकु चोट्टा चोरी करिबे गयौ। दूसरे गांम् में जाइ कें पौंचौ। बा गाम् में एक चोट्टा रातो। बानें बु डाटि लऔ। राति में सोने की थारी औ गड़आ में पानी परोस्यौ। जेंवतौ कें रऔ आररीति में लें कें जंग्गो। बु परोसत् में कहि रयौ मो पै तें नाँएुं लेंएं जाति के। राति कूं छीके के ऊपर थारी में पानी भरि कें टांगि दऔ। औ नीचें खाट् बिछाइ कें सोइ गयौ। तब बु सोइ गयौ। तब् बाइत्तें आके थारी लोटा देखि बिनि में पानी भरौ ओ। बानें चूले में तें राख् लॅ कें थारी में बोरि दई। राख् पानी कूं सोखि गई। थारी गड़आ कौं लें कें एक पोखरि में गाड़ि आयौ। आइ कें नांई आइ सोयौ। बु जगि पर्यौ। बानें देख्यौ थारी गडुआ मिले नई। बु ब्हें तें भजौ। बाहरि बु सोइ रयौ। बाके हाथ पाइं देखे तौ सीरे परए। बु जानि गयौ पोखरि में गाड़ि आयौ हें। बु जाइ कें उखारि लायौ। सवेरें बाकूं डाटि लयौ। फिरि बानें थारी गडुआ में परोसे। बानें कई जाइ तौ हूं गाड़ि आओ। बानें कई हूं उरवाल्लायौ।

सिंगाइच गढ़ी रोसनलाल (सनाढ्य ब्राह्मण, १५ वर्ष)

फूहरिया पालें परि गई अब कें सैं होइ गुजारौ।
घौंटुनि कूरौ डर्‌यौ मढ़ा में झारौं नाँएं तिबारौं
चाकी में तौं कुत्ता लगि रए पानी डरौं उघारौं
फूहरिया पालें परि गई...
घौंटुने तक लेंहगा फटि गऔ डारौं नाँएं जब नारौं
चीर चीर फरिया के हें गए दीखें पेट उघारौं
चौंका में तौं तपें रसोई लपटा हाल उतार्‌यौं
थारी में तौं करिकें फिरि सरपट्टा मारौं
फूहरिया पालें परि गई...

जगनेर प्रीतमसिंह (धीमर, १८ वर्ष)

आल्हा ऊदलि चलि दए सो सरिसा पौंचे जाइ कें
ल्हास् भइया की उठाइ लई बैंठि गए करहि कें।
अब् तौं बिन् वीर् बंधें नई धीर कंठ चिमटायौं
जानें उंगली लीनीं चीरि कें इमिरत प्यायौं।
मूर छपा मलिखे की जगि आई
रे ठाढ़े हें कें गरजें
दल प्रिथीराज कौं भाजें।

जगनेर नत्थी (खटीक, १३ वर्ष)

एक गांम में एक पंडिज्जी औं एक मौंलवी साव् कौं घर ढिगांढिगां हो। दौंनों परोंसीन् में बड़ी यारई ई। एक दिनां मौंलवी साब् कऊं जाइ रहे। तौं पंडिज्जी बोले अरे मौंलवी साब् आजु जा दिसा में तौं मति जाउ चौंकि आजु तौं जा दिसा में दिसासूर एँ औंरु भद्राऊं एँ। मौंलवी साव् नें कई पंडिज्जी तुमारे दिसासूर औंर भद्रा वनेई रैंतें। इतनी कहि कें मौंलवी साव् चल्दए। तौं चल्त चल्त जब् मौंलवी साब् छाहर् में पौंचें तौंनूं आंधीं आइ गई। आंधीं में कछू दीखौं नाइं। तौं मौंलवी साव् एक अंधउआ में जाइ परे। गित्त गित्त मौंलवी साब् चिल्लाए या खुदा इत्ता गहरा दिसासूर। इतनेई में आंधी में उड़ति उड़ति एक गड़इया की भेड़ बाई अंधउआ में जाइ गिरी। तौं नीचे तें मौंलवी साव् चिल्लाए या खुदा ढाई मन् का एक एक भद्रा। पंडिज्जी नें तौं पैंलेंई मो तें नाईं करी। आजु कैंसें प्रान् बचें। अब यादि रैंगी तौं विना पंडिज्जी तें पूंछें नईं जांगो। जब् आंधी बंद हैं गई तब् औंर रस्तागीरि नें मौंलवी साव् कौं हल्ला सुनौं। तब वे बा कुआ में तें निकारे।

जगनेर भगवतसिंह (पंवार ठाकुर, २७ वर्ष)

फतेहाबाद (तहसील)

मांनसींग खेरा पैं रहातो। बड़ौं वीर् रजपूत। अकिलें गांउ के बिरामिन सौं बिगरि गई। तईं बु फरार हैं गओं। डाँकू बु हतु नाँनें। बाएँ तौं लोगन्नेंई बदमास् बनाइ दओं। यां बानें कबऊं गरीब गुरबा कौं नाँएं सताओं। जनीं मान्सु पैं हाथ् नाँएं छोड़ौं। जानें बाकी मुखबिरी करी ताई कौं बानें सफाया कद्ओं। औं बु का मत्तु थोरईं। बाइ तौं झेंर् दें दओं गओं।

शम्साबाद रामसिंह (ठाकुर, ३१ वर्ष)

स्वाभाविक बोलचाल का एक उदाहरण

लला एक जरार की टिकट दें दीजो। एकई। नेंक जल्दी सैं दें देउ। लला नेंक जग्गें राखि लीजो जा डुकरियऊ कौं। आंखि सौं दिखातु नाँनें। कितने पइसा देंनें हैं। हौं तौं जि सिगु समुझति नाँनें। जरार् कौं लौं पौंचि लें हौं। ए लला पइसा तौं तेंनें भौंतु लें लए। अब् पौंचाइऊ देइ तौं भलौं हौं जाइ।

फतेहाबाद बस स्टेशन एक वृद्धा

आगें पइसा लें लेउ तौं लें लेउ। फिरि कोऊ नाँएं दिबाल्। जमाने कौं जई हाल् हैं। उधार-बिधार् कौं तौं कामई नाँएं रहि गओं। पइसा जाइ दओं सौं जानौं डूबि गओं। बड़े बड़े सेठ साऊकार बेईमानी सौंईं बने हैं। औं मुसकिल्

जि हैं कि जाइ पइसा न देउ सोई लट्ठ लैंइ ठाड़ौं हैं। अब तौं धंधौं रुजगारऊ ठंडौंई समझौं।

डौकी लाला (वैश्य, ४४ वर्ष)

फीरोजाबाद (तहसील)

एकु आदमी हो। सो सामन् कौं महीनां आयौं। बानें कई कि बूरौं खाय आऔं ससुरार् में। बा बरवत् बिनि पैं रुपिया पइसा हत् नाँइँ ए। सो बिन्नें गांउ के बौंहरे पैं तें चार रुपिया उधार लए। फिरि बे चल्दए बंतें अपने घत्तें। गैल में बिन्नें एक् दुकान् तें बूरौं लऔं द्वै रुपिया कौं। सो बे पौंहौंचि गए ससुरारि में फिरि बिन्नें बूरौं दिबाइ घालौं अपने ससुरार बान्नि के घरैं। बिनि की सासु नें कई कि लला आए हैं सो बिनि के काजैं रोटी पानी करैं। सो बिन्नें बिनि के काजें सैंमरी भात रांधौं। बिन्नें काई कि पस्सि कें थारी में सैंमरी भात औं चली गई पानी भरिबे। बिन्नें मन में सोची कि जानें न तौं बूरौं डारौं औं पानीं भरिबे चली गई। फिरि बानें का ओ कि घर् में ढुंड़ेरा लगाऔं। सो बिन्नें काऊ छींके पैं धरौं बूरौं औं घी मिलि गऔं। सो बिन्नें खूब डाल्लऔं घी औं बूरौं अपई थारी में। तौंनों ई बिनि की सासु आइ गई। बु अपएँ मन में जरि गई। बिन्नें फिरि जरि भुंजि कें कई कि हमाए हयां एक रीति चल्ति हैं कि द्माद् के संग सांसु बैंठि कें खात्यें। बिन्नें कई कि तौं आइ जाऔं जाई थारी में। नीचे कूं तौं बैंठि गऔं अपु औं ऊपरि बैंठाद्ई सासु। सो थारी में तें अंगुरियन सैं खेंचन लगौं। सो सासु नें सबई थारी में हाथ फेद्औं। फिरि बिन्नें कई कि हमाई लली तें कोई यौं कहैंगों तौं हम ताकों ऐंसौं कद्इगे। सो बे सबई थारी उठाइ कें पी गए। बिन्नें कई कि हमसूं कोई यौं कहैंगों ताकों हम ऐंसैं खून पील्लिगे जैंसैं अभाल हमनें थारी उठाइ कें पी लई।

अकबरपुर सिवसेवक (सनाढ्य ब्राह्मण, १२ वर्ष)

एक नदी की पारि पैं जमुनी कौं पेड़ ओ। बापैं एकु बंदरा राते। औं नदी में एक् मंगरा रातो। बंदर पकीं पकीं जमुनी मगर् कूं डारिबैं कत्तो। एक दिन् बंदर नें भोत् सी जमुनी डारीं पकीं पकीं। बिनि जमुनिनि कौं मगर बीनि बीनि कें धत्तु रऔं। फिरि बिनि जमुनिनि कौं अपई मगन्नी पैं लें गऔं। मगन्नी नें बे जमुनी खाईं। बानें कई कि जे जमुनी तौं भौंतु मीठी ऐं। इनकूं खातु ओगौं बाकौं करेजौं भौंतु मीठौं होगौं। बाकौं करेजौं लाऔं। मगन्नें कई कैंसैं लाऊं। मगन्नी नें कई कि यौं कइ दीजौं बातें कि त्याई भाभी नें त्याऔं न्यौंता करौं ऐं। मगर् नें कई कइ दुंगो। मगर् मंत्तें चन्दऔं। बानें बंदर तें आइ कें कई कि

त्याई भाबी नें त्याओं न्यौंता करौं एँ। बंदर नें कई कि ठीक एँ। दुपैर कौं बखतु भओं। बंदर नौंता खाइबे चन्दओं मगरि की पीठि पैं बैंठि कें। मगर् बीच नदी में पौंचि गओं तौं बोलौं कि त्याई भाबी नें त्याओं करेजौं मंगाओं एँ। बंदर नें कई कि मेरौं करेजौं तौं पेड़ पैं ई टंगौं रहि गओं। तौं कई कि अब का होइ ? बंदर नें कई कि लौटि कें चलौं। बंदर पारि पैं आइकें पेड़ पैं चढ़ि गओं। बंदर नें कई कि सारे काऊ कें दुद्दे करेज नाँएं होत्।

आलमपुर तुकमानसिंह (अहीर, १३ वर्ष)

एक बेहड़ में तीनि यार राते। एक हिन्नु, एक कउआ एक घोंदुआ। बिनि तीनोंन में ऐंसी यारी ई कि दाँट काटी रोटी। एक दूसरे कों देखें नई तौं नों कल ई नई आवें। जब सकारे तें चरिबे जाइँ औं संजा नों इकट्ठे नँई होइँ तौं नों एक दूसरे की खोज में रएँ। एक दिन बु हिन्तु किसान नें पकल्लओं औं पकरि कें चाम के नारे में डाइओं। औं किसान चलौं गओं कि सबेरें मारेंगे। जब संजा कों हिन्नु नँई पौंचौं तौं बाके दोऊ यान्न नें बड़ी फिकिरि करी औं घोंदुआ नें कउआ सें कई कि उड़ि कें देखौं यारु काँ एँ। कउआ उड़तु भओं गओं तौं का देखतु एँ कि चाम के नरा में बँधौं डरौं हैं। तौं कउआ देखि कें घोंदुआ के ढिंगाँ आओं। कई यात्तों मिलि गओं पैं खाल के नरा में बँधौं डरौं एँ।

करकौली भैरोसिंह (गूजर, १५ वर्ष)

बाह (तहसील)

एक घोंदुआ रहें औं एक् मंगरा रहें। घोंदुआ नें कई कि मंगर् मांमा तू मोइ पार् उताइेइ तौं मैं बहू लें आउं। बानें कई कि हओ। सो बिन्नें पारि उतारौं। बा पार् खाइ खाइ कें घोंदुआ फूटें कचरियां झिक्गओं। तईं एक गोबर थापि रही जनीं। बाकी फरिया लें लई औं एक बानें हाड़ लें लओं। सो बानें रेती में उढ़ाइ मुढ़ाइ कें गाड़ि दओं हाड़ु। अब कही मगर मगर मोइ पार उताइेउ। बानें कई कि तेंनें मसौं कहि दई सो बहू लें आओं। बानें कई कि देखि लो, बु बैंठी हैं रेती में। बानें कई कि आजारी आजा। बानें कई कि अभें नईं आवति एँ। मोइ सरमति एँ। मंगर नें स्याअट के मारें पार् उताइए। औं फिरि बानें कई कि आजारी आजा। अब बु होइ तौं बोलें। बानें रिस के मारें थपकरौं दओं। तईं बु फरिया अलग्ग औं हड़ा अलग्ग हैं गओं। बानें कई कि देखि लेंउगो जब पीपर की जन्नि में पानी पीबे आइगों।

पलोखरा रामनराइन (ब्राह्मण, २२ वर्ष)

द्वे राजा रहिबें करें। एकु रहें जेठों एकु रह लोंहरों। बड़े कों ब्याहु हें गओं हो। दोंनों भइया सिकार् खेलिवे कों जाइबों करें रोजु। बिनि की भोंजाई दोउनि कों एक एक गड्आ लेंकें खड़ी हों जाइबों करें बिन्नें कही के जैंसें हम जाकी सेवा कत्ते तेंसें अपने पति की करें तों कछू फल मिलें। बा दिन् वे विनि कों गड़आ लेंकें ठड़ी नई भई। बिन्नें कई कें आजु भोंजाई गड़आ लेंकें नाँएं आईं। बिन्नें बिन्सें कई कि तुम् आजु पानी काएं तें नाँएं ल्याईं। तई बिन्नें कई कि अपईं रानी पिंगल् देस् की लें आओं। बिन्नें इतनीं बात् सुनीं तों बे चन्दए। बिनि कों सलाही दीपला रहिबों करें। राजा बा दिनां भोंतु दुख् म ए। बिनिकों सलाही आओं कें आजु तुम दुख् में काए कों ओं।

रूपुरा — भरतसिंह (लोधे, १४ वर्ष)

राजा बीर बिकरमाजीत कें कहा काम होतो। मेरे नंगर में कोंन सों परजा सुखी हें कोंन सों दुखी हें। एक दिन नटिनी चले आए। उन्नें कई कि आपके नंगर में तमासों करें चों तों। मुनादी करिबा दई कि मेरे साथ में कोऊ बदनीयती न करि दीजो। नट नें एक अँड़िया आकास लोक कों फेंक देतों। नटिनी नें कई कि मेरे पती सों जुद्ध होनें बारों हें आगास में। मेरी मददि करों। चंदन छिपुटा मँगबाइ देउ। नंगर के लोग आउत जातें। मेरी नटिनी जंट बंट करि दई। राजा सब चल्ति होतें। जाइ कें नाँऊँ का देखतें नउआ खूब गरक्क हों गओं। उज्जेंन के मेंड़े में आए। गदक्क राजा के चोला में। चलि कें नाँऊँ पोंचे। पोंहचा मसरेंटि कें गहि लओं। तुम्हारों गोस बना कर खांगे। न तू झिकेंगों।

होलीपुरा — परमहंस चमार

दों भइया रहिबों करें। दोंनोंन् कों ब्याह हें गओं। एक भइया की घरबारी तों माइके रहें ओं जेठे की घरें। सो जेठे भइया नें बा लोंहरे भइया कों न्यारों कइओं। बानें उढ़नन कों बांट करों। राति में तों जेठों भइया लें लेंओं करें। ओं दिन् में लोंहरे कों दें देबों करें। ओं जाड़े के दिन् रहें। फिरि बानें भेंसि कों बांट करों। पिछारी तों जेठे भइया नें लें लई ओं अगारी लोंहरे भइया कों दें दई। फिरि खेत में गेंहूं ठाड़े। फिरि बानें गेंहूं कों बांट करों। बालें बालें जेठों भइया लें लेंबें करें ओं नरई नरई ल्होंरे भइया कों दें देंबें करें। सो बु सूखि सूखि कें लकड़िया हें गओं। सो बु ससुरारि कों गओं कि लिवाइ आमें अब्। सों ससुरारि पोंचे। तों बाकी सासु नें कई कि लला सूखि काए कों गए। बानें कई कि कछु नाँएं योंई सूखि गए हें। तब् बे लिबाइ कें आए। रस्ता में बाकी

घरबारी नें पूछी कि बताइ दो कि कहा बात् हें। बानें कही कि ऐंसी ऐंसी बात हें। तई बानें कई कि जल्दी जल्दी चले चलों। तों तनक् दिन् में पींचि गए बे घरें। सो उढ़ननि की गठरिया धरी सोबा नें उठाइ कें ताल में भिंजइ ल्याई। फिरि जेठे भइया की घरबारी नें कई कि उढ़ना काए कों भिजइ ल्याई हें। बानें कई कि दिन् में हमाए हें। फिरि बु भेंस दुहिबे गई। हाथ भर कों सोटा लें कें आगें जाइ ठाड़ी भई। सो जबई बु दुहें सो बु सींगनि में देइ डंड़ोंका। तई बानें कई कि भेंसिया काए मारंई हें। बानें कई कि हमाई अंगारी हें। फिरि बु गेंहूं के खेंत में गई लें हंसिया। सो बालें बालें कपटि कें डात्ति जाएं। तोंनों बाके जेठ् पींचे। जेठ् नें कई कि बहू जे बालें काए कों डात्ति एं। अभें तों बालें हरी हें। बहू नें कई कि हमें नरई चंइयती। तों जेठ् नें कई कि बहू तिहारों ई सब् कछू हें, इनें मति काटों। फिरि अपएं घरें लौंटि आए।

बैदपुरा बलराम (यादव, १६ वर्ष)

हो भोजा निकरों
सेंर तरे तें हो भोजा निकरों
ता धेइय धेइय ता धेइया।

रनियां घालों डेल्
रनियां घालों डेल्
जाई डेल् की मेरें लागती
आहो तों होतों कैंसों खेल्।

गूजर् भोजी रो (राउ)
गजर भोजी रो
हों तोइ पूंछों गूजर भोंजी रो
ता धेइय धेइय ता धेइया।

कितेक् तेरें गाइ
कितेक् तेरें गाइ
डूंड़ी भेंड़ी मेरें को गिनें
आहो सो मेरें नोंसों दुहियर गो।

गूजर भोजी रो
गूजर भोजी रो
हों तोइ पूंछत, गूजर भोजी रो
ता धेइय धेइय ता धेइया।

कितेक् दहिया होइ
कितेक् दहिया होइ
दहिया महिया मेरैं को गिनें
आहो सो मन् दसक्के नों नी हो।

गूजर भोजी रो
गूजर भोजी रो
हों तोइ पूछों गूजर भोजी रो
ता धेइय धेइय ता धेइया।

कौंन् बरन् तेरी गाइ
कौंन् बरन् तेरी गाइ
कौंन् बरन् है तेरी गूजरी
आहो सो नित् दहिया बैंचन जो।

राजा भेंसियो
राजा भेंसियो
भूरी तों कहिए राजा भेंसियो
ता धेइय धेइय ता धेइया।

स्याम बरन् मेरी गाइ
स्याम बरन् मेरी गाइ
सिंघ बरन् है मेरी गूजरी
आहो सो नित् दहिया बैंचन जो।

राजा नाँ रहों
तेरैं तों राजा अब हों नाँ रहों
ता धेइय धेइय ता धेइया।

पलिका पांनु न खाउं
पलिका पांनु न खाउं
हों तों जाति हों गूजर भोज् कें
आहो सो नित् छाछ् महेरी खो।

रानी भेंसियो
रानी भेंसियो
भूरी तों लें देंउं रानी भेंसियो
ता धेइय धेइय ता धेइया।

धौंरी लें देउं गाइ
धौंरी लें देउं गाइ
काए कों जाति औं गूजर् भोज कें
आहो सो नित् छाछ् महेरी खो।

अरे राजा भेंसियो
राजा भेंसियो
भरिक् ढकेलों राजा भेंसियो
ता धेइय धेइय ता धेइया।

खूंटा बांधों गाइ
खूंटा बांधों गाइ
हों तों जाति हों गूजर भोज कें
आहो सो नित् छाछ् महेरी खो।

रनियां मेहारौं
रनियां मेहारौं
रिम्झिम् बरसें रनियां मेहारौं
ता धेइय धेइय ता धेइया।

टपका हेल् चुचाइ
टपका हेल् चुचाइ
गूजरि देंहें तोकों बोलनें
आहो सो तों पैं हेल् सही नां जो।

चंद्रपुर गुरूजी (चतुर्वेदी ब्राह्मण, ४१ वर्ष)

शिक्षित वर्ग की बोली का नमूना

हमाई सरकान्नें जा देस में पंचाइतें बनाई हें। तिनि के चुनाउ कों जि ढंग कढ़ओं हें कि आजु कल्लि की धारा कों देखि कें बड़े बड़े भले आदिमीं इन पंचाइतन् सें अपओं पत्ता कटाइबे की फिराक् में रहातें। बे आदिमीं जो काऊ जमाने में छोटे समझे जाते ते आज् बखत् के प्रभाउ सें पंच बनि बैंठे हें। पंचाइतें बनाई गईं जमाने में सुधार के लें मगर कित्तों सुधार भओं जि काऊ तें छिपी नाँएँ। इन पंचाइतन् कों देखि कें जहे बात् दिमाग् में आउत्यें कि जा सें तो बिन् पंचाइतन् के ई भले हे। मसल् पुरानी हें मंगर पुरिखा साइदि इनई दिनन् कों कहि गए कि पंच भए बढ़ई औं धुन्ना। बे गढ़ि लाए काठ् कठेंगर् बिनि कें तिन्नक तिन्ना। जहू सब परमातमां की माया है।

होलीपुरा (बाह) अवधेश एम० ए० (चतुर्वेदी ब्राह्मण, २५ वर्ष)

हमाए जो ताऊजी ए ब्होंत जादा प्यार कत्ते हमें। सो एक दफें की बात हैं कि हम ब्यारु करिकें आए। बोले कि जाऔं राम् बजार् सें तुम जलेबी लें आऔं औं खाइ लेउ। हमनें ब्होंत कही कि हमें भूंक नाँएं हैं, औं जा बखत् हम् खाइ नाँएं सकत्, तौंऊ बे जिद्द कत्त रहे। सो हम बोले कि आपई तौं कैंहते कि हमाऔं पेट् कोऊ मशीन् थोड़ऊं हैं कि जित्तौं खाइबे कौं देज्जाउ सब अमाउत् जाइ। बई बात् हमाए संग हैं। जा बात् पैं बे ब्होंत् नाराज हौं गए, घर सैं निकरिबे कौं तइयार हौं गए। तौं हमने कही कि आप् हमाई ३ बजें सैं घरसैं निकत्तौं तौं हमई निकरे जातें। जि कहि के हम् बाई टाइम् चल्दए। करीब् एक फर्लांग बेहड़ की ओर गए सोई उन्नें बुलाइ लऔं औं कई कि अच्छा जाऔं अब् नाएं हम् तुमसें बात् करेंगे।

आगरा रामकुमार बी० ए० (चतुर्वेदी ब्राह्मण, २४ वर्ष)

एक दफें दार्बाटी के लें सब लोग बरहिन गए। हुन जि तें भई कि पैंहलें भाँग-ठंडाई होइ फिरि खाइबे की ठेरैं। सबनें छानी औं बोले कि आराम कल्लें। तब फिरि खाइबे की देखी सुनी जेंहें। लेटे सो सोइ गए। सोइ कें उठे तौं बजौं एक। छिद्दू बोले कि अब संजऊ की छानि लेउ। तब फिरि इकट्ठे चूल्हा पैं बैंठिहें। नतीजा जि कि लोग छानि कें जंगल झाड़ें चले गए। लौंटि कें जो आए तौं सब जनें भाँग में धुत्त। अब जनाब दद्दा तौं बैंठ चूल्हा पैं औं छिद्दू जो हे बे लगे सामान जुटाउन। दद्दा नें कही कि छिद्दू नें क नौंन दें जइयो। छिद्दू हाथ में दौंनाँ लें कें जि कैंहत् भए कि जि लेउ नौंन हनूमाँन जी की तरैंह कूदि कें चौंका की तरफ पौंहुचे औं चौंका पैं जाइकें बिना नौंन दें ऐं जि लेउ नौंन जि लेउ नौंन जि कहात भए कूदत भए फिल्लौंटि आए। जि हालत कोई पाँच मिनट तक रही। फिज्जई ठेंहरी कि भाई परिकें सोएं फिट्टेखी जें हैं। हम लड़िका लोग भूंके रोएं। इत्ते में बड़े दद्दा आए उन्नें जि हाल देखि कें सबैं गारीं दईं औं फिरि बैंठि कें खाइबे कौं बनाऔं। तब जाइ कें कहूँ हिल्लौं लगौं।

आगरा राजेश्वर प्रसाद एम० ए०, डी० फ़िल०
मा‌थुर चतुर्वेदी ब्राह्मण, ३५ वर्ष

परिशिष्ट—ख

सहायक ग्रन्थों की संक्षिप्त सूची

अंग्रेज़ी

1. Agra-A Gazetteer, Allahabad 1921.

2. Census of India (1951), District Population Statistics (Agra)

3. Cockney, Past and Present : Matthews, London, 1938

4. Evolution of Awadhi : Baburam Saksena, Allahabad : 1937

5. The Formation of Konkani : S. M. Katre, Bombay, 1942.

6. A Grammar of the Braj Bhakha by Mirza Khan Ed. M. Ziauddin, Vishwabharti, 1935.

7. A History of Brajbuli Literature: Sukumar Sen, Calcutta 1935.

8. A History of Modern Colloquial English : H. C. Wyld, London, 1920

9. Linguistic Survey of India, Vol. 9., Part I.

हिन्दी

१—ब्रज का इतिहास : श्रीकृष्णदत्त वाजपेयी, मथुरा : १९५५ ई०

२—ब्रजभाषा : धीरेंद्र वर्मा, प्रयाग : १९५४ ई०

३—ब्रजभाषा का व्याकरण : किशोरीदास बाजपेयी, प्रयाग : १९४८ ई०

४—ब्रजभाषा व्याकरण : धीरेन्द्र वर्मा, प्रयाग : १९५४ ई०

५—मध्यदेश : धीरन्द्र वर्मा, पटना : १९५५ ई०

६—मध्यदेशीय भाषा (ग्वालियरी) : हरिहर निवास द्विवेदी, ग्वालियर : १९५६ ई०

७—हिंदी भाषा का उद्गम और विकास : उदयनारायण तिवारी, प्रयाग : २०१२ वि०

परिशिष्ट—ग

शब्दानुक्रमणी

(मूल ग्रंथ में उद्धृत आगरा जिले की बोली के शब्दों की अनुक्रमणिका। अंक अनुच्छेद के सूचक हैं, शब्द के आगे कोष्ठक में उसका अर्थ दिया गया है)।

शब्दानुक्रमणी—२

[यह ग्रंथ के अंत में परिशिष्ट-क में दिए हुए बोली के उदाहरणों की शब्दसूची है। शब्द के आगे दिये हुए अंक पृष्ठ-संख्या के सूचक हैं।]